गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, राजस्थान से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037
मई-जून 2023
Vol. 11, Issue 5-6

Impact Factor : 4.553

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

संपादक :
डॉ. रेखा सोनी

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed International Refereed Journal

वर्ष : 11 अंक : 5-6(1) मई-जून : 2023 आईएसएसएन : 2321-8037

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष डॉ. विश्वकीर्ति

संरक्षक :
हरविन्द्र कमल, पटियाला

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

इन्जीनियर सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड कम्युनिकेशन, सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्रेष्ठ चौधरी
सीनियर मैनेजर, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साहिबजादा अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान, भिवानी (हरियाणा)

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय,
भिवानी (हरियाणा)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर
(राजस्थान)

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

ले. डॉ. एम. गीताश्री
डिप्टी डीन एकेडमिक
विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग,
बीएमएस महिला कॉलेज, स्वायत्त,
बसवनगुडी, बेंगलुरु

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय,
हिसार।

प्रो. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
सहायक आचार्य भूगोल, एस.एन.डी.बी.
राजकीय महाविद्यालय, नोहर, राज.

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
तोशाम (हरियाणा)

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर
(राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुकेश चंद
राजकीय महाविद्यालय, बाडी,
धौलपुर, राजस्थान।

प्रो. कौशल्या कालोहिया,
पॅनसिल्वेनिया, यूएसए

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

कानूनी सलाहकार : **डॉ. रामफल दलाल** एडवोकेट, भिवानी
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट, पटियाला।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग**, एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज**, पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed International Refereed Journal

(Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 4.553

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	7–7
2.	संत साहित्य में मानवतावाद	मोहम्मद अली	8–10
3.	Correlationship Between Anthropometric Variables and Performance Abilities Among Hanball Players of Haryana	Dr. Satbir Singh Sanga	11-19
4.	वित्तीय साक्षरता की आवश्यकता	मंजू	20–22
5.	उपेन्द्रनाथ अश्क जी के 'स्वर्ग की झलक' नाटक में चित्रित पति–पत्नी का संबंध	श्रीमान डेनियल राजेश	23–27
6.	भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर का चिन्तन	डॉ. बैद्यनाथ चर्मकार	28–30
7.	भारतीय सांस्कृतिक और मानवीय मूल्यों का आख्यान : कुंतल रासो	डॉ. अतुल कुमार पाण्डेय, डॉ. सुप्रिया सिंह	31–35
8.	ऊधम सिंह नगर के बाढ़ सम्भावित क्षेत्रों का भौगोलिक अध्ययन (रूद्रपुर ब्लॉक के विशेष संदर्भ में)	सूरज कुमार, डॉ. कमला बोरा	36–47
9.	नागार्जुन के काव्य में मानवीय चेतना के स्वर	सतीश कुमार भारद्वाज	48–54
10.	नागरिकता संशोधन अधिनियम (C.A.A.) का साम्प्रदायिक राजनीति के सन्दर्भ में आलोचनात्मक मूल्यांकन	मुकेश कुमार, डॉ. बीना जोशी	55–58
11.	भारत में जनांकिकीय प्रवृत्तियाँ एवं उनका प्रभाव और समाधान का परिदृश्य (साक्षरता एवं जन्मदर के विशेष संदर्भ में)	डॉ. वेदप्रकाश	59–67
12.	शोध प्रविधि	डॉ. इन्दुबाला गढ़वी	68–69
13.	समकालीन शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त द्रोणाचार्य (शंकर शेष के नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के विशेष सन्दर्भ में)	वर्षा	70–74
14.	मिजो़उ की लोक कथाओं का परिचय, स्वरूप व प्रकार	डॉ. ऐलीजावेथ	75–79
15.	Identification of trends and challenges in science communication during pandemic: A critical analysis	Shweta Singh Rathore, Dr. Kunwar Surendra Bahadur	80-96
16.	Puranic Myths and Fables in R. K. Narayan's novel A Tiger for Malgudi	Dr. Tanu Rajpal	97-101

17.	मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में बदलते मूल्य	सुनीता रानी	102–104
18.	प्रवासी महिला : लेखन में नारी संवेदना	डॉ. सुनीता बामल	105–107
19.	समकालीन हिंदी नाटकों में पर्यावरण चेतना	निर्देश कुमार	108–113
20.	वर्तमान समय में पर्यावरण विमर्श	डॉ. एस. बी. पाटिल	114–115
21.	आदिवासी पारिस्थितिकी दर्शन : अनुज लुगुन की कविता के संदर्भ में	अकील शेख़	116–121
22.	'ए.बी.सी.डी.' उपन्यास में भारतीय व पाश्चात्य संस्कृति की टकराहट के कारण टूटते बिखरते रिश्ते	कान्ता देवी	122–126
23.	लोकतान्त्रिक भारत में अल्पसंख्यकों की समस्याओं का संवैधानिक निराकरण	डॉ. अंजना यादव	127–132

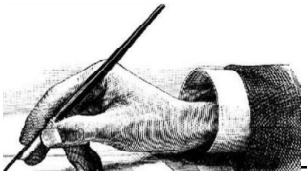

विशेषांक सम्पादक
डॉ. रेखा सोनी की कलम से..

मई–जून के संगम पत्रिका के इस अंक में यह एक खास मौका है जब हम फिर से आपके समक्ष प्रस्तुत होने का सम्मान कर रहे हैं। हमें गर्व है कि हम आपके साथ यह सफर जारी रख सके, और अपनी संगम परिवार के साथ जुड़े रह सके।

इस अंक के माध्यम से, हम अपनी संगम परिवार को समृद्ध, संवेदनशील और सांस्कृतिक विचारों से पूर्ण करने का प्रयास कर रहे हैं। हमारा मकसद हमेशा से रहा है कि हम साहित्य, कला, संगीत, फिल्म और अन्य रंगमंचों के माध्यम से आपको प्रेरित करें, सोचने पर मजबूर करें और मनोयोग्य विचारों को साझा करें।

इस अंक में, हमने कई रोचक और मनोहारी लेखों का संकलन किया है, जिनमें समाजशास्त्र, राजनीति, अर्थशास्त्र और विज्ञान के क्षेत्र में विस्तारित जानकारी शामिल है। हमने नए लेखकों को भी मौका दिया है जिन्होंने अपनी लेखनी का पहला कदम रखा है, और हमें गर्व है कि हम उन्हें अपने परिवार में स्वागत कर सकते है

संगम शोध पत्रिका के इस मासिक अंक के समापन के समय, हम गर्व के साथ आपके सामर्थ्य, समर्पण और सहयोग के लिए आभार व्यक्त करना चाहेंगे। यह एक शक्तिशाली संगठन है जिसे बनाने में हमारी प्रयासों का महत्वपूर्ण हिस्सा हो आपकी समर्थन, प्रतिक्रियाओं और योगदान के बिना यह संगम असंभव था।

इस संगम पत्रिका के माध्यम से हमने विभिन्न विषयों पर अनुसंधान के परिणाम, सामान्य ज्ञान, और विचारों को साझा किया है। हमारा उद्देश्य था विशेषज्ञों के नवीनतम अध्ययनों, विचारों और विचारधाराओं का प्रमाणित करना, सामान्य जनता को जागरूक करना, और समाज में सकारात्मक परिवर्तन को प्रोत्साहित करना था।

हमने इस अंक में एक समृद्ध विषय सूची प्रस्तुत की है, जिसमें विज्ञान, प्रौद्योगिकी, साहित्य, सामाजिक मुद्दे, राजनीति, पर्यावरण, शिक्षा, कला, आध्यात्मिकता और अधिक शामिल हैं। हमने प्रयास किया है कि इन विषयों पर विविधता, गहराई और विभिन्न प्रकार के विषय पर जन उपयोगी जानकारी उपलब्ध करवा सके।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 8-10

संत साहित्य में मानवतावाद

मोहम्मद अली
सहायक प्राध्यापक, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नारायणगढ़, अंबाला (हरियाणा)

हिंदी साहित्य के स्वर्णिम काल को भक्ति काल की संज्ञा दी गई है। भक्ति काल में शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, माधवाचार्य, रामानंद, राघवानंद, नरहरी दास आदि भक्तों ने अपने–अपने दर्शन प्रस्तुत किए हैं। शंकराचार्य ने अद्वैतवाद माधवाचार्य ने द्वैतवाद रामानुजाचार्य ने द्वैतद्वैतवाद आदि दार्शनिक विचारों से आत्मा और परमात्मा के भेद को प्रस्तुत किया है। इन्हीं दार्शनिक विचारों पर भक्ति काल के साहित्य की नींव रखी गई है आगे चलकर राघवानंद रामानंद नरहरी दास जीने भक्ति के मार्ग को आम लोगों के लिए खोल दी।

स्वामी रामानंद को मध्यकालीन भक्ति आंदोलन का महान संत माना जाता है। उन्होंने रामभक्ति की धारा को समाज के प्रत्येक वर्ग तक पहुंचाया। वे पहले ऐसे आचार्य हुए जिन्होंने उत्तर भारत में भक्ति का प्रचार किया। उनके बारे में प्रचलित कहावत है कि – द्रविड़ भक्ति उपजौ–लायो रामानंद। यानि उत्तर भारत में भक्ति का प्रचार करने का श्रेय स्वामी रामानंद को जाता है। स्वामी जी ने बैरागी सम्प्रदाय की स्थापना की, जिसे रामानन्दी सम्प्रदाय के नाम से भी जाना जाता है।आगे चल कर रामानंद जी के शिष्यों में कबीर दास जी अहम स्थान रखते हैं कबीर दास जी ने संत परंपरा को समृद्ध किया मध्यकाल के अंधकार में वातावरण में कबीर का व्यक्तित्व ज्ञानदीप की भांति प्रकाश उत्पन्न करने वाला है हिंदी साहित्य के 12 वर्षों के काल में तुलसीदास जी को छोड़कर इतना प्रभावशाली व्यक्तित्व दूसरे कवि का नहीं है वह हिंदुओं के लिए वैष्णव भक्त मुसलमानों के लिए तीर सिखों के लिए भगत तथा कबीरपंथीयों के लिए अवतार आधुनिक राष्ट्रवादी लोगों के लिए हिंदू मुस्लिम एकता तथा विश्व धर्म या मानव धर्म के प्रवर्तक कमजोर वर्ग के पक्षधर क्रांतिकारी और ममता बंधुत्व भावना न्याय भावना एकता के प्रतिपादक के रूप में मान्य है। कबीर निम्न वर्ग से संबंधित होने के कारण परिस्थितियों के स्वयं भोगता थे उन्होंने अनुभव के आधार पर अपनी अभिव्यक्ति की है। कबीर दास कबीर दास जी यह देख कर अत्यंत दुखी थे कि लोग धर्म के नाम पर पाखंडी आडंबर ओ से ग्रस्त हैं। पंडितों को पुराण का अहंकार था तपस्वी तब के अहंकार में डूबे थे। मुसलमानों को कुरान पढ़ने का अधिकार था काजी को न्याय करने का गर्भ था सभी सन्मार्ग से भटक गए थे।

1. जोगी माते धरि जोग ध्यान,
   पंडित माते पड़ी कुरान।।
2. तपसो माते तप के भेव,
   संन्यासी माते करहिमेव।।

कबीर दास जी का अनुभव ज्ञान ही उसकी अभिव्यक्ति का आधार था उनका सारा सहित समाज को सचेत करता हुआ दिखाई देता है। कबीर दास जी ने मानवता की सेवा को ही सच्चा धर्म माना है। उन्होंने एक स्थान पर कहा है।

साईं इतना दीजिए, जामे कुटुंब समाए।
मैं भी भूखा ना रहूं , साधु न भूखा जाए।।

कबीर दास जी भक्त थे वह अपने आराध्य को संपूर्ण मानव जाति की भलाई के संदर्भ में देखते थे। अहंकार की भावना उनके अंदर लेश मात्र भी नहीं थी। अहम का पूर्ण विसर्जन उनमें मिलता है। ऐसा ही अहम का पूर्ण विसर्जन संपूर्ण समाज में देखना चाहते थे। वे समाज को समानता की दृष्टि से देखना चाहते थे जिसमें धन को इकट्ठा करने का कोई स्थान नहीं है। कबीरदास जी ने समाज में व्याप्त छुआ छूत ऊंच नीच धार्मिक आडंबरो का खंडन किया संपूर्ण समाज को भाईचारे के साथ रहने का संदेश दिया। यदि कबीरदास जी के साहित्य को आज के संदर्भ में देखा जाए तो हर दृष्टिकोण से प्रासंगिक है। आज भारतीय समाज वर्गवाद की ओर जिस तेजी से बड़ रहा है। समाज में व्याप्त सांप्रदायिकता चर्म पर है। आज के समाज को कबीरदास के संदेशो के अनुसरण की आवश्यकता है जिसे स्वस्थ समाज की स्थापना की जा सकती है। कबीर दास जी के साहित्य को उनके शिष्यों ने इकट्ठा किया, – दादूदयाल, धर्मदास, सुंदरदास, रज्जबदास, सहजोभाई आदि शिष्यों ने संत परंपरा को समृद्ध किया।

भक्ति काल में गोस्वामी तुलसीदास जी का नाम एक युग का प्रतिनिधित्व करता है। तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में अपने बारे में स्वयं लिखते हैं।

राम को गुलाम नाम राम भोला रख्यो नाम।
काम याहे नाम दवे हो कबहूं कहतु हो री।।

तुलसीदास जी ने कवितावली रामचरितमानस में अपनी मानवतावादी दृष्टिकोण को अभिव्यक्त किया है। कवितावली में उन्होंने तत्कालीन समाज की समस्याओं को उजागर किया है। कवितावली में उन्होंने साधारण जनता की समस्याओं का सजीव चित्रण किया है। वह कवितावली में एक स्थान पर कहते हैं कि :–

नाम तुलसी पै भोडो भांग ते कहायो दास।
– राम नाम को कल्पतरु, कलि कल्याण निवास।
जो सुमिरत भए भाग ते, तुलसी तुलसीदास।।
– एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास।
एक राम घनश्याम हित चातक तुलसीदास।।
– सेवक सेवय भाव बिनु।
भव न तारिय उरगारी।।

तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में जिस राम राज्य की कल्पना की है। वह आज के युग में भी प्रासंगिक है। तुलसीदास जी भविष्य दृष्टा थे। उन्होंने वर्तमान लोकतंत्र की नींव उसी समय रख दी थी। जब उन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचंद्र जी के जीवन आदर्शों को स्थापित किया। उन्होंने एक राजा के प्रजा के प्रति कर्तव्य को अभिव्यक्त किया तथा प्रजा के अधिकारों का सरंक्षण करते हुए दिखाई देते हैं। राम राज्य में एक साधारण

से धोबी को भी अपनी बात रखने का पूर्ण अधिकार था। तुलसीदास जी ने जिस रामराज्य की कल्पना की है। उसमें कोई दीन दुःखी दरिद्र नहीं है और नहीं कोई गुणों से हीन है। राजा प्रजा हर प्रकार से सुखी साधन संपन्न है। तुलसीदास जी ने दूसरों के हितों की रक्षा करने को ही सबसे बड़ा मानव धर्म माना है। उनका कहना है कि हम किसी को अपने वचनों से भी आंतरिक दुख नहीं पहुंचा सकते और यही सच्चा मानव धर्म है।

जो अनीति कछु बाबू भाई।
तो मोही बरजेऊ भय बिसराई।।
माली भानु किसान सम, नीति निपु नर पाल।
प्रजा भाग बस होहिगे, कबहूं कबहु कलिकाल।।
पर हित सरिस धरम नहि भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।

तुलसीदास जी कहते हैं की राजा को एक निश्चित सीमा में बंद कर चलना चाहिए जिसमें कोई अत्याचार ने हो राजा के साथ बुरा व्यवहार में हो एक आदर्श राजा सदा मर्यादा का पालन करता है। राम एक आदर्श राजा थे जिन्होंने प्रजा पालन के लिए अपनी सीता का भी त्याग कर दिया था। प्रभु रामचंद्र जी स्वयं कह रहे हैं कि यदि मैं प्रजा के साथ कोई अन्याय करूं तो प्रजा निडर होकर मुझ मुझे उस अनुचित कार्य से रोक सकती है। तुलसीदास जी ने राजा राम के चरित्र को आदर्श रूप में मानव जाति के सम्मुख प्रस्तुत किया है जिससे वे सदा प्रजा के प्रिय बने रहे। राजा राम ने अपनी प्रजा का पालन अपनी संतान की तरह किया। वे अपनी प्रजा को अच्छी भारत पर चलते देखना चाहते थे और स्वयं भी सुमार्ग का पालन करते थे। रामचरितमानस में उन्होंने प्रभु श्री रामचंद्र जी के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया है जो आज के युग में अनुकरणीय है। प्रभु रामचंद्र जी ने ही राम राज्य के द्वारा आधुनिक लोकतंत्र की नीव रखी जिसमें सभी व्यक्तियों को समानता के अधिकार स्वतंत्रता का अधिकार था। बोलने के अधिकार का वर्णन मिलता है।

तुलसीदास जी मर्यादावादी कवि थे उन्होंने लोक कल्याण के लिए आदर्शवादी दृष्टिकोण अपनाया तुलसी युग में राजा और प्रजा दोनों ने ही आदर्शवादी भावना को अपनाते हुए विश्व कल्याण की कामना की है क्योंकि राम राज्य में सभी लोग गुणवान हैं। अच्छे आचरण का पालन करने वाले हैं और काम क्रोध लोभ मोह अहंकार का त्याग करने वाले हैं।

संदर्भ सूची :-

1. कबीर ग्रंथावली।
2. कवितावली।
3. रामचरितमानस।

aligarhi786@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 11-19

Correlationship Between Anthropometric Variables and Performance Abilities Among Hanball Players of Haryana

Dr. Satbir Singh Sanga
Associate Professor, Physical Education, Govt. College, Hisar.

ABSTRACT

Aim of study was to find out co-relationship between anthropometric variables and performance abilities among Handball players of Haryana. A sample of 102 Men Handball players were selected on purposive selection basis between age group of 18 to 24 years among last three position holders teams at K. University, Kurukshetra, M.D. University, Rohtak and Haryana State Handball Championships. Standard materials were used to measure the Anthropometric variables, where as playing abilities were judged by a panel of three judges on five scale point during Inter-college and State championships. Data was interpreted by applying mean, S.D., stepwise regression analysis and Pearson's product moment statistical techniques.

Correlation Matrix between playing abilities and Anthropometric variables confirmed that age, height, biacromion width, arm length, upper arm length, leg length, calf circumference, sitting height and supra iliac skin fold, thigh skinfold, sub scapular skinfold, calf skin fold, bicep skinfald, tricep skinfold were essential parameters for the performance in handball game, whereas weight and shoulder width were found non

significant. Multiple regression on all the 17, on 16 exceeding height and on 15 parameters excluding sitting height and length, was applied to solve multicollinary of height with sitting height and leg length. Therefore, the final equation of 2nd set was chosen for the study because by applying this height itself came to be a significant contribution towards playing abilities and R2 also improves slightly. In conclusion of final equation namely height, calf circumference, supra iliac skinfold, thigh skinfold, bicep skinfold and tricep abilities were found very powerful in predicting the playing ability of handball players.

Key words: Anthropometric variables, Playing abilities of handball players.[1]

INTRODUCTION

Games and sports have gained tremendous importance in almost all the countries of the world. Every country is trying to win more modals in international sports competitions and has its eyes set on international recognition while organising sports at the grass root level. New incentives sufficient infrastructure and standardised sports equipments are being provided by the agencies interested in the development in sports to see their nations at the top of the medal winning countries in the world competitions. A lot of research is being done on all aspects of sports. Performance at International level not only requires certain physical and physiological qualities of fitness but also a good physical structure. Now a days body build gets physical attention at the time of selection of players for games and sports where high level competition is required. In modern sports anthropometric measurements and their relationship with motor abilities are matter of importance for coaches as well as players for making training schedule. Handball is a fast game, characterised by incredible athletic performance, during a handball

match players performs 190 rhythm variations, 279 change of directions, 16 jumps and 485 high intensity movements in 60 minutes. Physical conditioning in handball is extremely important for top performance along with appropriate physical structure and body size suitable for this game. That's why we say "Athletes are born but not made. The above statement states the importance of anthropometric variables in the process of athletes nurturing to elite level.

Anthropometry, according to Phillips and Hornack (1979) "The measurement of structure and proportion of the body is called anthropometry." Parnell (1951) Tanner (1964) De Garay et al. (1974), Hirata (1979), Kansal et al. (1980), Uppal and Roy (1986), Chauhan (1986), Sodhi (1991) etc. have given the characteristics of various sportsmen for specific events, relationship of body measurement,physical fitness with specific events and games to assist in the team selection of sportsmen. Measurements of body size include such descriptive information as height, weight and surface area, while measures body proportions describe in relationship between height and weight, among lengths, widths and circumferences of various body segments.

An evidence of this, we observe the well proportionate physique of state, and university level handball players of Haryana. Inter- relations between the physique and performance have led to more systematic examinations of the physical requirements necessary to achieve the performance in Handball Championships at University and State level. Hence, the present investigators are interested in finding the relationship and prediction of selected anthropometric variables with performance in handball at University and State level championships of Haryana.

Purpose of the study: Purpose of the study was to find out the correlationship between Anthropometric parameters and their effects on playing abilities on university and state level Handball players.

Significance: The results of the study may be significant to physical education teachers and coaches for screening and selection of teams, designing suitable training schedule and a feed back for players to further improve their performance.

METHOD AND PROCEDURE

To achieve the objectives of the study a purposive sampling technique was used among the Men Handball teams securing first three places in the Inter-college championships of Kurukshetra University, M.D. University, Rohtak and. Haryana State. Total 102 players were considered as subjects for collection of data between age group of 18 to 24 years. The measurements of height, sitting height, trunck length, leg length, fore leg length, weight, arm length, fore arm length, calf circumferences, thigh skin fold, supra iliac skinfold, subscapular skinfold, bicep skinfold and tricep skinfold etc. were takenwith help of anthropometer. The circumference with steel tape andskinfold measure with skinfold calliper. All measurements were taken according to the instructions given by Weiner and Lourie (1969).

The panel of three judges measured the playing abilities of thesubjects during the Inter-college and State Men Handball competitions on five point scale; on the basis of their all round performance. The average of scores given by three judges were considered as final score.

ANALYSIS OF DATA

Datawasinterpretedby applying mean, S.D., step wiseregression analysis andPearson'sproductmoment statisticaltechniques.

RESULTS AND DISCUSSION

Table 1.1

The results of the study were presented and interpreted as under:

Sr. No.	Parameters	Mean	S.D.	C.V %
1.	Age (Year)	22.18	1.96	8.84
2.	Height (cm)	174.31	5.07	2.91
3.	Weight (kg)	65.85	7.10	10.78
4.	Shoulder width (mm)	79.13	5.71	7.22
5.	Bi-acromion width (mm)	45.08	2.32	5.15
6.	Arm lenght (cm)	79.10	3.43	4.33
7.	Upper arm lenght (cm)	36.33	1.70	4.68
8.	Forearm lenght (cm)	28.54	1.71	5.99
9.	Leg Lenght (cm)	87.24	3.85	4.42
10.	Calf circumferences (cm)	34.01	2.20	6.47
11.	Sitting height (cm)	87.08	2.96	3.40
12.	Supra iliac sin fold (mm)	10.97	5.18	47.10
13.	Thigh dkin fold (mm)	8.59	2.96	34.46
14.	Sub scapular din fold (mm)	7.27	2.43	33.43
15.	Calf skin fold (mm)	7.23	2.55	35.27
16.	Bicep skin fold (mm)	2.55	0.84	32.94
17.	Tricep skin fold (mm)	4.03	1.28	31.76

30% and above are significant.

Table 1.1 shows the mean values, standard deviations and coefficients of variation of anthropometric variables. It is therefore evident that the variation in age, height, weight, shoulder width, bi-acromion width, arm length, leg length calf circumference and sitting height ranged between 2.91 to 10.71 percent according to the values of

coefficients of variation and these variation were insignificant because these were less than 30 percent, whereas variations of supra- iliac skinfold, thigh skin fold, sub-scapular skin fold, calf skin fold, bicep skinfold and tricep skin fold variables had more than 30 percent or more. So this level of variations might have its impact on playing abilities.

Table 1.2

Correlation Matrix Between Playing Ability and Anthropometric Variables

Sr. no	Variables	Correlation	Level of Significance
1.	Age (Year)	0.287	<01
2.	Height (cm)	0.674	<01
3.	Weight (kg)	0.128	NS
4.	Shoulder width (mm)	0.093	NS
5.	Bi-acromion width (mm)	0.358	<0.01
6.	Arm lenght (cm)	0.547	<0.01
7.	Upper arm lenght (cm)	0.494	<0.01
8.	Forearm lenght (cm)	0.117	NS
9.	Leg Lenght (cm)	0.450	<0.01
10.	Calf circumferences (cm)	0.480	<0.01
11.	Sitting height (cm)	0.578	<0.01
12.	Supra iliac sin fold (mm)	0.199	<0.05
13.	Thigh dkin fold (mm)	0.491	<0.01
14.	Sub scapular din fold (mm)	0.280	<0.01
15.	Calf skin fold (mm)	0.497	<0.01
16.	Bicep skin fold (mm)	0.282	<0.01
17.	Tricep skin fold (mm)	0.616	<0.01

Table 1.2 reveals that age, height, biacromion width, arm length, upper arm length, leg length, calf circumference, sitting height, high skin fold, sub scapular fold, calf skin fold, bicep skin fold, and tricep skin fold

were found essential parameters for performance in Handball game at 0.01 level of significance; whereas supra-iliac skin fold was found essential at significance 0.05 level. Weight and shoulder width were not found significant at any level to performance in Handball.

Table 1.3

Effect of Anthropometric Parameters on Playing Ability

Sr. No.	Variable	Regression Coefficient	R^2 value	Contribution towards R^2	Level of Significance	%Contribution towards R^2
2	Height	0.036	0.6945	13.11	< 0.05	18.18
10	Calf circumference	0.100		11.21	< 0.01	16.14
12	Supra – iliac skin fold	0.046		4.99	< 0.01	7.18
13	Thigh skin fold	-0.094		14.31	< 0.01	20.60
16	Bicep skin fold	-0.311		7.68	< 0.01	11.06
17	Tricep skin fold	-0.218		18.15	< 0.01	26.14
(a)	Intercept (a)	-4.22		--	NS	---

R^2 = 6945

F-ratio = 36.50

Level of significance < 01

Difference in R^2 of first and final equation = 0.7224 -0.6945 = 0.279

The equation is as under:

$y=4.22 + 36X_2+0.100X_2 +0.46X_2-0.94X_{13}-0.311X_{16}-0.218X_{17}$

where Y is playing ability.

The results of the combined contribution of anthropometric variables, through the application of multiple regression has been presented in Table 1.3. Logically there were two types of combinations of anthropometric parameters. First of all, all the 17 parameters were tried out, but there was a problem of multicollinearity of height with sitting height and leg length. These three variables cancel the effect of each other in the final equation in this trial. In order to overcome this

problem, two different sets of parameters were tried. First set include sixteen variables including sitting height and leg length excluding height. The final equation came out to be the same as was found in case of first trial when all seventeen parameters were tried. Therefore, another set of parameters including 15 parameters was tried which included height and excluded sitting height and leg length. Now height came to be a significant contribution towards playing abilities and R2 also improved slightly. Therefore, the final equation of 2nd set was chosen for the study. When the regression analysis found that all the skin fold except supra iliac skin fold needs to be controlled while height calf circumference and supra iliac skin fold still have their role to play towards the preliminary multiple regression which was found 72.24 percent variation in playing abilities of handball players, while variables included in the final run equation, namely height, calf circumference, supra iliac skin fold, thigh skin fold, bicep skin fold, and tricep variables are found important in the playing abilities of handball players. This shows that nine variables other than mentioned above secured a negligible share to the tune of only 2.79 percent of variation. This revealed that five variables including in the final run equation were very powerful in predicting the player's ability in handball.

CONCLUSION

The anthropometric variables namely age, height, biacromion width, arm length, upper arm length, leg length, calf circumference, sitting height, supra iliac skin fold were found to be positively significant in the performance of handball players. However, following anthropometric variables considered meaningful to draw out the final equation.

1. Height (2)
2. Calf circumference (10)

3. Supra-iliac skin fold (12)
4. Thigh skin fold (13)
5. Bicep skin fold (16)
6. Tricep skin fold (17)
7. The final equation came to be as under :-

$y = 4.22 + 36X_2 + 0.100X_2 + 0.46X_2 - 0.94X_{13} - 0.311X_{16} - 0.218X_{17}$

where Y is playing ability.

REFERENCES

1. Baljit Singh (2007) Test and measurement in physical education, Sports Publication, New Delhi.
2. Clarke, H.B. (1967) Relationship of strength Anthropometric measurement of physical performance involving trunk and legs. Research Quarterly, 28.
3. Cozen F.W., (1930) A study of structure in relation to physical performance "Research Quarterly".
4. De Garay, A.L. Levine, L2 Carter, J.E.L. (1974) Genetic Anthropological studies of Olympic athletes, Academic Press, London, New York.
5. John, Willey and Sare Inc, New York. Tanner, J.H. (1964) Physique of Olympic.
6. Kansal, D.K. (1986) "Need for Anthropometric counselling and some other steps for improving sports performance: Modern Prospective in Physical Education and Sport Science. Chief Editor Sindhu, L.S. Harnam Publication, New Delhi.
7. Kansal, Davinder K (1966) Test and Measurement in Sports Physical Education. D.A.S. Publication, Kalka Ji, New Delhi.
8. Philips D. Allen, Horneck James, E (1979) Measurement and Evaluation in Physical Education.
9. Subash (1995) The relationship between selected Anthropometric and performances in Athletics programme of High and senior secondary school students.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 20-22

वित्तीय साक्षरता की आवश्यकता

मंजू
शोधार्थी,

प्रस्तावना :-

साक्षरता शाब्दिक अर्थ पढ़ने समझने लिखने से जानने में आता है। वित्तीय साक्षरता एक वित्तीय योजना बनाने का इरादा रखती है, जो अपने लिए उपयुक्त है। धन का सही ढंग से उपयोग को समझने की क्षमता वित्तीय साक्षरता है। दूसरे शब्दों में इसका मतलब किसी व्यक्ति में मौजूद कुछ कौशलों तथा ज्ञान से हैं जिसके बल पर वह सोच समझकर प्रभावशाली निर्णय ले पाता है। विभिन्न देशों में वित्तीय साक्षरता की स्थिति अलग–अलग है।

वित्तीय शिक्षा का अर्थ व परिभाषा :-

वित्तीय शिक्षा का अर्थ होता है धन के बारे में सही जानकारी प्राप्त करना, जिससे हम अपने धन का सही प्रबंधन करते हुए अपने वित्तीय भविष्य को सुरक्षित एवं बेहतर बना सकें।

परिभाषा :-

वित्तीय साक्षरता व्यक्तिगत वित्तीय प्रबंधन, बजट और निवेश सहित विभिन्न वित्तीय कौशलों को समझने और धन के सही ढंग से उपयोग को समझने की क्षमता है। वित्तीय साक्षरता हमें अपनी आमदनी व उचित प्रबंधन करने के लिए रास्ता बताती है।

आवश्यकता :-

वित्तीय शिक्षा की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि अब समय बदल चुका है, अमीर और अमीर होता जा रहा है किन्तु माध्यम वर्ग ओर गरीब होता जा रहा है। हमारी वित्तीय समस्याएं और बढ़ती जा रही हैं, किंतु फिर भी इस समस्या का समाधान नजर नहीं आ रहा है। सिर्फ यही नहीं वित्तीय समस्या के कारण ही समाज में गरीबी, घरेलू हिंसा, अपराध एवं भ्रष्टाचार आदि असमाजिक समस्याएं भयानक रूप लेती जा रही हैं, जिससे हमारा जीवन अस्त व्यस्त होता जा रहा है। इसलिए सभी व्यक्ति चाहे स्त्री हो या पुरुष उसे वित्तीय रूप से शिक्षित होना जरूरी हो गया है।

क्योंकि वित्तीय साक्षरता से हमारे विचारों में बदलाव आएगा, जिससे हमारे काम बदल जायेंगे और जब हमारे काम बदल जायेंगे तब हमारे परिणाम भी बदल जायेंगे। क्योंकि हम एक ही काम को बार बार करते हैं और हर बार अलग परिणाम की अपेक्षा करते रहते हैं किंतु हमारे परिणाम नहीं बदलते। अतः हमें जिंदगी के परिणाम बदलने है तो हमें काम बदलने होंगे और काम तभी बदलेंगे जब हमारे विचार बदलेंगे। इस तरह जब हमारे वित्तीय विचारों में बदलाव आएगा तब समाज में भी वित्तीय बदलाव आएगा और जब हमारा समाज वित्तीय रूप से शिक्षित

होगा तब हमारा देश भी वित्तीय रूप से मजबूत होगा, जिससे न केवल हमारा बल्कि देश का भी आर्थिक स्वरुप बदलेगा। जहां वित्तीय समस्या की नहीं बल्कि वित्तीय समाधान की स्थिति निर्मित हो जाएगी, जो कि सिर्फ और सिर्फ वित्तीय शिक्षा से ही सम्भव है।

वित्तीय शिक्षा का प्रचार-प्रसार :-

वित्तीय शिक्षा का विस्तार करना हमारा फर्ज और कर्तव्य दोनों है जिससे हमारे साथ साथ सभी का आर्थिक कल्याण हो सके तथा वर्तमान में व भविष्य की बढ़ती हुई वित्तीय समस्याओं का समाधान हो सके। यदि हमें समस्या का नहीं बल्कि समाधान का हिस्सा बनना है तो हमें यह जिम्मेदारी निभानी होगी। जबकि आज भारत को सिर्फ विचारों की नहीं बल्कि एक वित्तीय विचार की सख्त जरूरत है। जब हमारे समाज का एक–एक परिवार आर्थिक रूप से मजबूत होगा तभी हमारा देश भी आर्थिक रूप से मजबूत होगा।

आज का वित्तीय जगत पिछली पीढ़ी की तुलना में अत्यंत जटिल है। चालीस साल पहले स्थानीय बेंको और बचत संस्थाओं में चेक और बचत खातों को चलाने के बारे में सरल जानकारी पर्याप्त थी। अब ग्राहकों में विशेषकर ग्रामीण नागरिकों में विभिन्न प्रकार के वित्तीय उत्पाद व सेवा व इन्हे उपलब्ध कराने वालों को पहचानने की क्षमता होनी चाहिए। वित्तीय शिक्षा केवल निवेशकों के लिए ही नहीं बल्कि अपने बजट को संतुलित करने के लिए, बच्चों की पढाई व माता–पिता की सेवा के लिए, बचत कर रहे परिवारों के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण है। भारत विकास प्रवेश द्वार द्वारा वित्तीय साक्षरता पर सामग्री विकसित करने और वेबसाइट, मल्टी मीडिया, सी डी और अन्य माध्यम से इस सामग्री को प्रसारित करने की भी योजना बनाई गई है।

समय–समय पर टी. वी. पर भी किसानो के लिए वित्तीय साक्षरता जागरूक अभियान चलाया जाता है जिससे किसानो को बेंको से लोन लेने, कौनसी फसल उगानी है की योजना बनाना व फसल बिक्री दर समझना आदि विषय पर किसानो को साक्षर किया जाता है, जिससे वे कम खर्च में अधिक बचत कर सके। इसलिए स्कूल कॉलेज स्तर पर भी वित्तीय साक्षरता का ज्ञान करना जरूरी है इससे वित्तीय साक्षरता के आधारभूत नियम पता हो, जैसे – बजट, बचत, खर्च। यदि हमारे पास वित्तीय शिक्षा है तो हम अच्छी तरह पैसे का प्रयोग करके काफी मात्रा में बचत कर सकते हैं।

वित्तीय साक्षरता का महत्व :-

यह वित्त का अध्ययन करने वालों को सशक्त बनाता है। लोगों के पास आर्थिक मुद्दे से जुड़ी जितनी ज़्यादा जानकारी होती है, वे उतनी ही चतुराई से पैसा खर्च करते हैं। वित्तीय साक्षरता सिखाने की प्रक्रिया में, इस बात को समझाने का सबसे ज्यादा जोर बच्चों और कॉलेज के छात्रों को दिया जाता है।

यह जिम्मेदारी लेना सिखाता है। जिन युवाओं ने वित्तीय साक्षरता का अध्ययन नहीं किया है, वे उन लोगों की तुलना में गैर–जिम्मेदाराना व्यवहार करने की अधिक संभावना रखते हैं, जिन्होंने शायद इसे खेल–खेल में सीखा हो। ये 'भविष्य के वयस्क' जानते हैं, कि निवेश कैसे करना है, बिलों का भुगतान कैसे करना है, पैसे कैसे बचाने है। वे ऐसी स्थिति आने का मौका नहीं देंगे, जिसमें उनके पास अपार्टमेंट के भुगतान के लिए पैसे न हो, वे अपनी क्रेडिट हिस्ट्री की निगरानी करेंगे और पानी और गैस के लिए समय पर भुगतान करेंगे।

यह खराब वित्तीय आदतों के लिए एक निवारक उपाय बन जाएगा। यदि किसी व्यक्ति के पास वित्तीय साक्षरता है, तो वह डस्ड योजनाओं में निवेश नहीं करेगा और पैसे के साथ जुआ नहीं खेलेगा। वह उन लोगों

से प्रभावित नहीं होगा जो उसे किसी चीज पर पैसा खर्च करने के लिए राज़ी करने की कोशिश करते हैं। और यह सब सक्षम वित्तीय तैयारी से होता है।

यह सुनिश्चित करता है कि आपके पास एक एयरबैग है। वो एयरबैग नहीं जो आपकी कार में होता, बल्कि वित्तीय एयरबैग। अलग–अलग देशों के आंकड़े बताते हैं किरू हर वयस्क आने वाले कल, परसों और अगले छह महीने के लिए पैसे नहीं बचाते है। तो ऐसे समय में जब आपके पास नौकरी नहीं होती हैं या आप कोई काम लेते नहीं हैं, वित्तीय एयरबैग आपको उसी स्तर के खर्च के साथ 3–6 महीने तक जीने की अनुमति देता है, जिस तरह आप तब जी रहे थे, जब आपके पास नौकरी थी। आर्थिक रूप से साक्षर व्यक्ति किसी भी स्थिति में खुद को सँभालने में सक्षम होगा, नौकरी जाने से उसे डर नहीं लगेगा। यह पॉइंट महिलाओं के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है – वे अभी भी दुनिया के कई देशों में आर्थिक रूप से उत्पीड़ित हैं। समान पदों पर काम करते हुए और समान योग्यताएं रखते हुए, महिलाएं अक्सर पुरुषों की तुलना में कम कमाती हैं, बहुत बार खुद को कर्ज के बोझ में दबा पाती हैं और खुद के खर्चे पर उन्हें प्रसूति अवकाश (मैटरनिटी लीव) पर जाने के लिए मजबूर किया जाता है।

वित्तीय साक्षरता की समस्या :–

इसकी मुख्या समस्या लोगों में, समाज में बचत करने की आदत डालना और लोगों के अनावश्यक खर्चों को कम करने का ज्ञान देना है। बहुत बार अच्छी खासी आय वालों को भी आर्थिक संकट का शिकार होते देखा गया है। इसकी मुख्य वजह उनकी आदतें है। 2020 में वित्तीय साक्षरता बढ़ाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने 'वित्तीय साक्षरता' नामक एक परियोजना शरु की थी। इसका उद्देश्य स्कूल व कॉलेज जाने वाले बच्चे, महिलाएं, ग्रामीण शहरी गरीब और वरिष्ठ नागरिकों को वित्तीय जानकारी उपलब्ध कराना है।

निष्कर्ष :–

अतः बेहतर व्यवसाय के लिए वित्तीय साक्षरता उपयोगी है। सुरक्षित भविष्य के लिए आदत और प्रबंधित आय–व्यय योजना संभव है, अगर सभी आर्थिक रूप से साक्षर हो। वित्तीय साक्षरता एक ऐसा तरीका व ज्ञान है जिससे सभी अपनी बचत बढ़ाने में सक्षम हो। वित्तीय साक्षरता से सभी अपने खर्चों पर नियंत्रण लगाकर अपनी मौजूदा व भावी वित्तीय स्थिति को मजबूत व बेहतर कर सकें। वित्तीय ज्ञान की कमी खराब वित्तीय विकल्प बनाने में योगदान दे सकती है, जो व्यक्तियों और समुदायों के लिए हानिकारक हो सकती है। अतः सभी को वित्तीय साक्षरता का ज्ञान होना जरूरी है।

संदर्भ सूचि :–

1. Financial Literacy – A way to Financial Well-being (Raushan Kumar)
2. Financial Management (S. Chand)
3. Financial Literacy – ISBN 9798885467032 (Vijay Potidar)

8529292078

manjuarnav26@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 23-27

उपेन्द्रनाथ अश्क जी के 'स्वर्ग की झलक' नाटक में चित्रित पति-पत्नी का संबंध

श्रीमान डेनियल राजेश
हिंदी प्राध्यापक, दि अमेरिकन कॉलेज, मदुरै : 2

परमेश्वर के द्वारा स्थापित किया गया श्रेष्ठ संबंध है पुरुष–स्त्री का संबंध। इसलिए पति–पत्नी का संबंध पवित्र माना जाता है। पति–पत्नी और बच्चों का समूह परिवार कहलाता है। परिवार समाज की नींव है। परिवार में पति–पत्नी दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पति को पत्नी का साथ देना एवं पत्नी को पति का साथ देना जरूरी है।

पति–पत्नी दोनों को एक दूसरे के प्रति मदद करने का विचार रखना चाहिए। कई घरों में तो पति–पत्नी दोनों ही काम पर जाते हैं। ऐसे में घर के कामों को दोनों को मिलकर करना चाहिए। इससे किसी एक पर काम का दबाव नहीं पड़ेगा और दोनों को एक दूसरे के साथ समय ज्यादा बिताने का भी मौका मिलता है।

उपेंद्रनाथ अश्क प्रसिद्ध उपन्यासकार, निबंधकार, लेखक तथा कहानीकार थे। आप हिन्दी एवं उर्दू जानते थे। आपने आदर्शोन्मुख, कल्पना प्रधान अथवा कोरी रोमानी रचनाएँ कीं। आपने सन् 1939 ई. में 'स्वर्ग की झलक' नाटक की रचना की। उपेंद्रनाथ अश्क जी को सन् 1972 ई. में सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। इसके अलावा उपेंद्रनाथ अश्क को 1965 में संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था।

प्रस्तुत लेख में उपेन्द्रनाथ अश्क जी के 'स्वर्ग की झलक' नाटक में चित्रित पति–पत्नी के संबंध के बारे में विचार करेंगे।

'स्वर्ग की झलक' उपेन्द्रनाथ अश्क जी का दूसरा नाटक है। लेकिन यह उनका पहला सामाजिक नाटक है। इसकी शैली आधुनिक है। यह नाटक आधुनिक नारी तथा मध्यवर्गीय आधुनिकाओं के अस्वस्थ सामाजिक जीवन पर एक व्यंग्य है। इस नाटक में विवाह और प्रेम की समस्या के एक पहलू का यथार्थ उद्घाटन भी होता है।

रघु एक पत्रकार है। उसकी पहली पत्नी की मृत्यु के बाद उसके बड़े भाई और भाभी उस पर जोर देते हैं कि वह अपनी साली रक्षा से विवाह कर लें। किन्तु रघु अपने नये मित्र– अशोक और राजेन्द्र की सुशिक्षित

पत्नियों जैसी अप–टू–डेट पत्नी चाहता है और रक्षा केवल 'भूषण' पास, सीधी–सादी लड़की है। इसीलिए रघु कहता है –

इस 'भूषण' के रहते हुए भी पत्र तक वह ठीक से नहीं लिख सकती। बात करने, कपड़ा पहनने की उसे तमीज़ नहीं। चार मित्र आ जायें तो लाज से दुबक कर अपने कमरे में जा बैठे। मैं पूछता हूँ, आप किस तरह मुझे फिर चक्की का पाट गले में बाँधने को कहते हैं?'[1]

इस विरोध के कारण भाभी रघु की शादी प्रोफ़ेसर राजलाल की बी० ए० पास संगीत कला दक्ष अप–टू–डेट लड़की के साथ करने का निर्णय करती है।

रघु अपने मित्र अशोक से दावत का निमंत्रण पाकर उसके घर जाता है। मि. अशोक की पत्नी सीता शिक्षित है और अच्छी तरह साड़ियाँ पहनना जानती है। लेकिन वह घर के काम–काज में तनिक भी हाथ नहीं बँटाती। अशोक अपनी पत्नी सीता से बताए बिना अपने मित्र रघु को दावत के लिए बुला लेता है। इसलिये दावत के आयोजन में वह साथ नहीं देती।

अशोक रघु को दावत देने के लिये सीता से रोटी सेंकने बार बार विनती करता है। उसे 'रानी' पुकार कर उसकी खुशामदी करके कार्य साधना चाहता है। उससे चिढ़कर सीता रघु से इस प्रकार कहती है :–

'आपने मुझे पागल समझ रखा है। एक बार कह दिया, मुझ में हिम्मत नहीं।'[2]

इससे यह मालूम होता है कि शिक्षित आधुनिका से शादी करके अशोक को कितना कष्ट उठाना पड़ता है और ये आधुनिकाएँ पति का कितना आदर करती हैं।

सीता रघु से इस प्रकार कहती है –

"उठो रानी!..... उठो रानी! इस रानी से तो मैं बांदी भली।"[3]

इन बातों से सीता का दर्प और कठोरता का पता चलता है।

वह रोटी सेंकने से इसलिये इनकार करती है कि उसकी बेटी ऊषा ने उसे रात भर सोने नहीं दिया। बच्ची को दूध पिलाने उसे दो बार उठना पड़ा। अशोक कहता है कि रोज़ वही बच्ची को दूध पिलाता है। एक दिन सीता ने दूध पिलाया तो इसमें कौन सी अपत्ति है? यह सुन कर सीता और भी तन जाती है और कड़क कर कहती हैं–

"मैंने कितनी बार आपसे नहीं कहा कि एक नौकर ऊषा के लिये और रख दो और रसोइये भी तो दो होने चाहिए।"[4]

इससे यह स्पष्ट है कि सीता पत्नी का दायित्व समझकर घर संभालना नहीं जानती। साथ ही घर संभालने में वह अशोक से सहयोग करना भी नहीं चाहती।

अशोक दावत के लिये रोटी लेने बाहर जाता है। तब अशोक की डेढ़ साल की बच्ची ऊषा नींद से जागकर रोने लगती है। सीता थके–मांदे चिड़चिड़े स्वर में कहती है –

"सो जा रानी सो जा!"[5]

तब रघु उससे बच्ची को अपने पास देने को कहता है। तब सीता उससे इस प्रकार कहती है –

"नहीं जी, यह अपने पापा के अतिरिक्त और किसी के पास नहीं जाती। मैं तो जैसे इसे काटती हूँ।"[6]

इससे यह मालूम होता है कि सीता के मन में परिवार संभालने की दायित्वहीनता के अलावा मातृ–प्रेम का भी अभाव है।

अशोक रघु से पति–पत्नी के संबंध के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए यों कहता है –

"मेरा और श्रीमती अशोक का भी यह विचार है कि पति–पत्नी दो अलग–अलग हस्तियाँ हैं। दोनों अपने अपने कृतित्व के लिये उत्तरदायी हैं। न पत्नी पर पति के काम का जिम्मा है, न पति पर पत्नी के कृत्य की जिम्मेदारी।"[7]

यहाँ हम देख सकते हैं कि 'पत्नी पति की सहधर्मिणी व अर्धांगिनी' वाली बात को अशोक और श्रीमती अशोक नहीं मानते।

बीमार बच्चे को भी संभालते हुए दावत के प्रबंध का पूरा भार अशोक को अपने ऊपर लेना पड़ता है जिसके कारण दावत पर आये रघु को भूखे ही उसके घर से जाना पड़ता है। शिक्षित पत्नी के संकुचित हृदय के कारण अपने मित्र के सामने उसे अपना मुँह काला करना पड़ता है।

अशोक के घर दावत पर गये रघु वहाँ कुछ खाये बिना वहाँ से निकलकर अपने दूसरे मित्र राजेंद्र के घर जाता है। वहाँ श्रीमान राजेंद्र और श्रीमती राजेन्द्र की पारिवारिक दशा भी इसी प्रकार की है। श्रीमती राजेन्द्र शिक्षित युवती है; नृत्य–कला व शिखालंकार में निपुण है। उसे घर की देखभाल में कोई दिलचस्पी नहीं। बाहरी कामों में व्यस्त रहती है। बीमार बच्चे की देखभाल करने और उसका इलाज करने तथा दो दिन से बिना खाये उपवास रखने वाले पति को खाना खिलाने की चिंता उसे तनिक भी नहीं, वह हर समय अपने नृत्य–प्रदर्शन की चिंता में ही डूबी रहती है। इसी कारण से घर नरक बन जाता है। राजेन्द्र अपने दुख की बातों को रघु से सुनाता है –

"मैं सोचता हूँ रघु, आदमी को किसी पल चौन नहीं, पत्नी अशिक्षित थी तो रोते थे, शिक्षित है तो रोते हैं।"[8]

राजेंद्र आजकल की शिक्षा का प्रभाव जो हमारी औरतों पर जो दिनों पड़ रहा है, उसके बारे में इस प्रकार अपना विचार प्रकट करता है –

"मैं सोचता हूँ, शिक्षा का जो घातक प्रभाव हमारे यहाँ की औरतों पर दिनों–दिन पड़ रहा है, यह उन्हें किधर ले जायेगा और उनके साथ हम गरीबों को भी।"[9]

श्रीमती राजेंद्र अपने यहाँ मेहमान होकर आये हुए रघु से 'कंसर्ट' देखने आने का आग्रह करके उस पर पाँच टिकट थोप देती है। इसलिए रघु एस. आर.सभा की चौरिटी कंसर्ट देखने जाता है। सभा में श्रीमती राजेंद्र का नृत्य बड़ा सफल रहता है। श्रीमती राजेंद्र के बाद शशि गाना गाती है। फिर उमा का नृत्य होता है। उमा प्रोफेसर राजलाल की ग्रेजुएट और सुंदर लड़की है। वह गाने–बजाने व नृत्य कला में भी निपुण है।

कंसर्ट की समाप्ति पर उमा और रघु दोनों मिलकर बातें करते हैं। तब उमा रघु से कहती है कि उसने अशोक की पुस्तक 'स्वर्ग की झलकश पढ़ी है। तब रघु उससे पूछता है कि क्या वह उसमें उक्त विचारों से सहमत है। उसका जवाब देते हुए उमा इस प्रकार कहती है –

"मैं उनके एक–एक शब्द से सहमत हूँ। पति–पत्नी दो अलग–अलग हस्तियाँ हैं।"[10]

इससे यह मालूम होता है कि उमा भी श्रीमती अशोक (सीता) और श्रीमती राजेन्द्र ही की तरह के विचार रखने वाली है। रघु उमा की सब बातें सुनकर ठहाका लगाता है और घर लौटता है। घर आने पर भाभी उमा को देखने की बात करती हैं। लेकिन शिक्षित लडकी से विवाह करने का रघु का इरादा अब बदल गया है।

आखिर रघु को अशोक व राजेन्द्र के पारिवारिक जीवन की तुलना अपने भाई और भाभी के जीवन से करके देखने का अवसर मिलता है। वह इस नतीजे पर पहुँचता है कि कम आमदनीवाले मध्य वर्गीय युवक को अव्यावहारिक व संकुचित विचारवाली शिक्षित नारी से ब्याह करना महँगा पड़ेगा। इसलिये वह यह कहते हुए कि मुझे तितली नहीं, संगिनी चाहिए, अपनी साली रक्षा जो ज्यादा न पढ़ी लिखी है उससे शादी करने का निश्चय कर लेता है।

वह भाभी से कहता है – मैं उमा को देखना नहीं चाहता।

"संगिनी, जो मेरे बोझ को हल्का करें....न कि उसे बढ़ा कर मेरी गर्दन तोड़ दे! ——— मैं संगिनी चाहता हूँ, तितली नहीं।"[11]

रघु अपने भाई साहब से इस प्रकार कह देता है –

उमा स्वर्ग के सपने देख रही है। "जिस स्वर्ग की झलक वे देखती हैं, वह हमारे स्वर्ग से भिन्न है।'[12]

अंत में वह रक्षा से विवाह कर लेने का अपना निर्णय सुनाता है।

इस तरह आरंभ से अंत तक रघु के इर्द–गिर्द नाटक की कथावस्तु चक्कर काटती है। रघु के द्वारा लेखक ने मध्यवर्गीय नवयुवक की सही झाँकी प्रस्तुत की है जो बाहरी तड़क–भड़क से आकर्षित होकर प्रभावित होकर विवाह के बारे में गलत निर्णय लेने पर तुला हुआ है और बाद में यथार्थ को पहचान कर सही निर्णय पर आ जाता है।

इस तरह अश्कजी ने पति–पत्नियों का संबंध कैसे होने चाहिए, और कैसे न होना चाहिए – इन बातों पर अपने विचार स्पष्ट कर दिये हैं।

'स्वर्ग की झलक' की भूमिका में अपने उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लेखक ने स्वयं लिखा है–

'यदि उसे (शिक्षित लड़की को) विवाह कर, सीधा–सादा जीवन बिताना पड़ता है तो उसे इस सीधे–सादे जीवन पर नाक–भौ न चढ़ानी चाहिए!.....चाहिए यह कि जहाँ शिक्षा पा कर नारी स्वाभिमान, आत्मविश्वास, व्यापक ज्ञान तथा समाज सेवा की भावनाएँ पाये, वहाँ अपना संतुलन भी न खोये। तभी समाज की स्वस्थता कायम रह सकेगी।'[13] नाटक का मूल उद्देश्य तो इसी सन्तुलन की ओर इशारा करना है। जितना मज़ाक उड़ाया गया है, वह सब असन्तुलित जीवन के एकांगीपन का है। नाटक से ध्वनित होता है कि न तो केवल

फ़ैशन–परस्ती आधुनिकता का नाम है और न अशिक्षा का नाम पुरातनता है। दोनों के समन्वय से ही नारी का स्वस्थ विकास संभव है। रघु की भाभी के चरित्र में इस नूतन–पुरातन के समन्वय की कुछ झलक है।

पति–पत्नी का संबंध हमेशा आदर्श होना चाहिए। "सभी पढ़ी–लिखी लड़कियाँ बुरी नहीं होतीं, वैसे ही सभी अशिक्षित लड़कियाँ अच्छी नहीं होतीं।"[14] पति शिक्षित हो या अशिक्षित हो, वैसे ही पत्नी शिक्षित हो या अशिक्षित हो, यह कोई बात नहीं। लेकिन पति–पत्नी दोनों, एक दूसरे का साथ देने से ही वैवाहिक जीवन सुख संपन्न होगा। इसलिए पति–पत्नी की एकता में कभी भी फूट नहीं होनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. उपेन्द्रनाथ अश्क, स्वर्ग की झलक, नीलाभ प्रकाशन, इलाहबाद, पचीसवां सं. 2013 (पृ. 68, अं. 1)
2. वही (पृ. 77, अं. 2)
3. वही (पृ. 77, अं. 2)
4. वही (पृ. 77, अं. 2)
5. वही (पृ. 81, अं. 2)
6. वही (पृ. 81, अं. 2)
7. वही (पृ. 83, अं. 2)
8. वही (पृ. 90, अं. 3)
9. वही (पृ. 90, अं. 3)
10. वही (पृ. 123, अं. 4, दृ. 3)
11. वही (पृ. 127, अं. 4, दृ. 4)
12. वही (पृ. 127, अं. 4, दृ. 4)
13. वही (पृ. 11)
14. वही (पृ. 109, अं. 4, दृ. 2)

9976563929

jdanielrajesh@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 28-30

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर का चिन्तन

डॉ. बैद्यनाथ चर्मकार
अतिथि विद्वान–राजनीति शास्त्र, शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ (म.प्र.)

सारांश :–

बोधिसत्व डॉ. अम्बेडकर का जीवन संघर्ष, व्यवस्था परिवर्तन के लिए ही था पूर्व प्रचलित सामाजिक व्यवस्था असमानता और अन्याय तथा घृणा–भाव पर आधारित थी। जिसमें प्रत्येक वर्ण का व्यक्ति अपने से उच्चवर्णों के व्यक्ति को सम्मान और आदर से देखता है और प्रत्येक वर्ण का व्यक्ति अपने से निम्नवर्णों के व्यक्ति को हेय और घृणा भाव से देखता था। इसलिए बाबा साहब अम्बेडकर का कथन है कि ''अन्याय और असमानता पर आधारित इस हिन्दू धर्म में रह कर हम कुछ भी नहीं कर सकते। यह चतुर्वर्ण व्यवस्था मनुष्य मात्र की उन्नति के लिए महाघातक है। चतुर्वर्ण व्यवस्था फूंक मारने से नहीं उड़ाई जा सकती। यह केवल रूढ़ि ही नहीं है बल्कि धर्म बन गयी है।'' डॉ. अम्बेडकर इस वर्ण व्यवस्था को मानव द्वारा स्वार्थ के वशीभूत होकर बनाई हुई मनगढ़ंत व्यवस्था बताते हैं। इसी प्रकार जाति और छुआछूत की भावना के विषय में कुछ तथाकथित समाज सुधारक लोग जातिभेद को सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहों के माध्यम से दूर करने की दुधारी चाल चलते है। ऐसे लोगों को उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर कहते हैं ''जातिभेद को मिटाने की सच्ची रीति अन्तवर्णीय विवाह और अन्तर्जातीय सहभोज करना नहीं वरन् उन धार्मिक भावनाओं को नष्ट करना है जिन पर जाति–प्रथा की नींव रखी गयी थी।'' इस जाति प्रथा को वे स्वराज्य के लिए सबसे अधिक घातक मानते थे इसीलिए उन्होंने कहा था कि प्रचलित वर्ण व्यवस्था और जाति–व्यवस्था के दो एक उदाहरणों से इसकी गंभीरता का आप अनुमान लगा सकेगें जिसके परिवर्तन को बाबा साहब सामाजिक उन्नति के लिए अनिवार्य मानते थे।

मनुस्मृति में मनु ने लिखा है कि चतुर्थ वर्ण शूद्र का कर्म शेष तीनों वर्णों की सेवा, गुलामी करना ही परम धर्म है। यदि वह इस सेवा कार्य में जरा भी उदासीनता दिखाता है तो उसे निःसंदेह नरक मिलेगा। इस सेवा कार्य के बदले में उसे फटे–पुराने उतारे हुए कपड़े, जूठा अन्न और बिछाने तथा ओढ़ने के लिए पवाल पुरस्कार में दिया जाना चाहिए। उसे कभी भी विद्या नहीं पढ़ानी चाहिए समर्थ होने पर भी शूद्र धन का संचय न करने पावे उसके धन को राजा तुरंत छीन ले क्योंकि धनी होकर वो शूद्र ब्राह्मणों को ही कष्ट देगा। यही कारण था कि बाबा साहब ने इस तथाकथित धर्मग्रन्थ को फाड़ा ही नहीं बल्कि सार्वजनिक रूप से उसे जलाया भी था।

शोध प्रविधि :–

इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के माध्यम से संकलित किया गया है। पत्र–पत्रिकाओं एवं पुस्तकों के आधार पर अध्ययन किया गया है। इस हेतु इसमें विद्वानों का भी मार्गदर्शन लिया गया है।

उद्देश्य :–

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में तो भाग नहीं लिया परन्तु वे अछूतों के नये नेता थे। डॉ. अम्बेडकर को बम्बई विधान सभा में दलित सदस्य के रूप में नामांकित किया गया था दिनांक 24 फरवरी, 1927 को उन्होंने अपना पहला भाषण बजट पर दिया और अंग्रेजों द्वारा बनाये गये बजट की आलोचना की थी। डॉ. अम्बेडकर को बम्बई विधान सभा के अन्य सदस्यों के साथ ही साइमन कमीशन के साथ सहयोग करने हेतु बनाई गई समिति का सदस्य बनाया गया और उस समय अम्बेडकर द्वारा एक माँग पत्र साइमन कमीशन को दिया गया जिसमें भारत की स्वायत्तता के साथ ही दलित वर्गों के सीटों के आरक्षण के साथ संयुक्त निर्वाचन मण्डल की माँग की थी, उन्होंने बम्बई के कपड़ा श्रमिकों की पहली हड़ताल में भी रुचि ली ताकि दलित वर्गों के लिए हितों की रक्षा की जा सके।

समस्या :–

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार काँग्रेस एक राजनीतिक दल न होकर राष्ट्रीय आन्दोलन था। राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने की आवश्यकता पर उन्होंने जोर दिया परन्तु दलित वर्गों के उत्थान के लिए उनका विश्वास था कि दलितों के सामाजिक स्तर को ऊँचा किया जाए। ब्रिटिश सरकार ने लंदन में एक गोलमेज सम्मेलन 12 नवम्बर, 1930 से आयोजित किया इस हेतु 89 सदस्यों का नामांकन किया गया था डॉ. अम्बेडकर को इस सम्मेलन में दलितों का प्रतिनिधित्व करना था। इस सम्मेलन में काँग्रेस पार्टी सम्मिलित नहीं हुई। गोलमेल सम्मेलन में डॉ. अम्बेडकर ने भारत के लिए ''डोमिनियन स्टेट्स'' की माँग प्रस्तुत की, साथ ही उन्होंने यह आशंका व्यक्त की कि जब तक नये संविधान में राजनीतिक व्यवस्था एक विशिष्ठ प्रकार की न हो तब तक दलित वर्ग उसमें भाग नहीं ले पाएँगे। डॉ. अम्बेडकर के स्वतंत्र निर्भीक और साहस पूर्ण भाषण से सम्मेलन के सभी सदस्य तथा ब्रिटेन के अखबार आश्चर्यजनक रूप से प्रभावित हुए।

समाधान :–

डॉ. भीमराव अम्बेडकर भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन के समय कहा था कि भारत में काँग्रेस सिर्फ देश की आजादी की लड़ाई लड़ रही है परन्तु मैं देश की आजादी के साथ–साथ दलित वर्गों की आजादी की लड़ाई लड़ रहा हूँ। भारत के इतिहास में यदि बाबा साहब अंग्रेजों के साथ रहे भी तब भी उन्होंने भारत की आजादी का समर्थन कर यहाँ के लोगों को स्वायत्तता देने की बात हमेशा करते थे। बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर ने साइमन कमीशन, गोलमेज सम्मेलन, पूना पैक्ट सहित कई अवसरों पर राष्ट्रहित व आजादी के सामने स्वयं अपने हक व अधिकारों से वंचित रहने तक सीमित किया।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर यदि राष्ट्रहित को सर्वोपरि नहीं मानते तो इतिहास बदला हुआ मिलता इतिहासकारों का मानना है कि यदि अम्बेडकर दलित हितों को राष्ट्र से पीछे नहीं मानते तो भारत की आजादी के समय पाकिस्तान के साथ–साथ एक नये 'अछूतिस्तान' राष्ट्र का जन्म होता जिसे अंग्रेजी सरकार मानने में जरा भी देर नहीं करती। इस प्रकार 1927 से लेकर देश की आजादी तक व संविधान बनने व लागू होने तक

डॉ. अम्बेडकर के राष्ट्रीय योगदान को यह देश और समाज हमेशा याद रखेगा।

व्यक्ति अपने युग और समाज की देन होता है। युग और समाज की सीमाओं में जीना उसकी नियति होती है दूसरे शब्दों में, समाज और युग की सीमाओं के पार जा पाना सामान्य व्यक्ति के बस में नहीं होता किन्तु प्रत्येक समाज और युग में कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो आँख मूँदकर समाज के साथ नहीं चलते वे स्थापित व्यवस्था में भागीदार बन उससे लाभ उठाने के स्थान पर उसमें निहित विरोधाभास, शोषण व अन्याय के विरुद्ध संघर्ष का आह्वान करते हैं तथा सम्बन्ध वैचारिकी (आइडियोलॉजी) एवं मूल्यों के वाहक बनने के स्थान पर उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन के सूत्रधार बनते हैं।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने अपने सामाजिक दर्शन के विषय में स्वयं लिखा है कि ''मेरा समाज दर्शन तीन शब्दों में निहित है– स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व–भाव लेकिन इन तत्वों को देखकर किसी को यह नहीं समझना चाहिए कि मैंने इन शब्दों का अनुकरण फ्रांस की क्रान्ति से किया है। मेरे इस दर्शन की जड़ें धर्म से हैं न कि राजनीतिक विज्ञान में मैंने इन्हें अपने गुरु बुद्ध से सीखा है। अस्तु बाबा साहब के सामाजिक दर्शन को जानने और समझने के लिए बुद्ध का धर्म और दर्शन समझना होगा।

उपर्युक्त सामाजिक दर्शन के तीन तत्वों में निम्नांकित बातें समाहित हैं :– स्वतंत्रता के अन्तर्गत बोलने, आराधना करने तथा एकत्रित एवं संगठित होने की स्वतंत्रता। समानता के अन्तर्गत करुणा और मैत्री यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि क्या बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर अपरिमित स्वतंत्रता और समानता के पक्षधर थे? उत्तर नकारात्मक है। यहाँ वे भगवान बुद्ध के माध्यम मार्ग का निर्देश देतें है। भ्रातृत्व–भाव अर्थात करुणा और मैत्री के अभाव से स्वतंत्रता और समानता फल–फूल नहीं सकती और न ही सुदृढ़ समाज का निर्माण ही कर सकती है।

निष्कर्षतः बाबा साहब का यह मानना है कि मनुष्य को वास्तविक मनुष्य के रूप में समाज के सुख शान्तिपूर्वक जीने के लिए नैतिकता है। जो कार्य तथा आचरण, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व–भाव की रक्षा करते हैं वे कार्य जो स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व–भाव की रक्षा करते है वे ही शुभ कार्य तथा नैतिक कार्य हैं। इसके विपरीत वे कार्य जो स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व–भाव के मूल्यों को नष्ट करते हैं, और जाति व्यवस्था को इसलिए अस्वीकार करते हैं, क्योंकि उसमें स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व–भाव को कोई स्थान नहीं हैं। उपर्युक्त तीनों तत्व बौद्ध धर्म में प्राप्त होते हैं। इसीलिए वे इसे संसार के मानव समाज के लिए सर्वोत्तम धर्म मानते हैं।

सन्दर्भ :–

1. राजवंश, डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड, महामानव डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर, 2009, अमन प्रकाशन, कानपुर, पृ. 18
2. रत्तू, नानक चन्द, डॉ. अम्बेडकरः कुछ अनछुए प्रसंग, 2003, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 22
3. रावत, भद्रशील, राष्ट्र निर्माण में बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर का योगदान, 2002, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 26
4. राही, राजेन्द्र, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर की जीवन कथा, 2003, आनन्द प्रकाशन दिल्ली, पृ. 15
5. सिंह, डॉ. रामगोपाल, डॉ. अम्बेडकरः सामाजिक–आर्थिक विचार दर्शन, 2014, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ. 31

devdasphilosophy@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 31-35

भारतीय सांस्कृतिक और मानवीय मूल्यों का आख्यान : कुंतल रासो

डॉ. अतुल कुमार पाण्डेय,
डॉ. सुप्रिया सिंह
सहायक प्राध्यापक, भाषा विभाग (हिंदी), सेंट क्लारेट महाविद्यालय, बैंगलोर।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल मे रासो काव्य परंपरा के अंतर्गत कई रासो काव्यों का वर्णन मिलता हैं। जिसमें प्रमुख रूप से पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो, बीसलदेव रासो, हम्मीर रासो, विजयपाल रासो और खुमाण रासो का नाम आता है। इसके अलावा भी कई छोटे–बड़े रासो साहित्य के ग्रंथ जैन साहित्य के अंतर्गत देखने और पढ़ने को मिल जाते हैं। रासो काव्यो का मूल प्रतिपाद्य धार्मिक, राजनैतिक और श्रृंगारिक रहा है। जिस समय रासो काव्य लिखे गए, उस समय देश के अधिकांश भागों पर मुस्लिम शासको का शासन था, या कहे कि एक ऐसी स्थिति थी जब देश मे चारों तरफ अशांति और भय का वातावरण व्याप्त था। अधिकांश राज्यों में आपसी वैमनस्व था। जो थोड़े बहुत देशभक्त राजा थे, वे सुख–वैभव त्यागकर हमेशा शत्रुओं से लोहा लेते थे। अधिकांश क्षत्रिय राजाओं और शासकों पर बाहरी और विदेशी संप्रभुता का प्रभाव था। यही स्वर और काव्य प्रतिपाद्य हिन्दी साहित्य के विद्वान डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति के चरित काव्य 'कुंतल रासो' में मिलता है। 'कुंतल रासो' आधुनिक युगीन बीसवीं सदीं में डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति द्वारा लिखा गया चरित काव्य है। जो रासो काव्य परंपरा को आधार बनाकर लिखा गया है। इस चरित काव्य मे कुंतल नरेश वीर जंबुकेश्वर के प्रभावशाली चरित्र का सुंदर वर्णन है।

डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र के शब्दों में– "इस ग्रंथ द्वारा कवि की प्रतिभा का परिचय प्राप्त होता है। इस आधुनिक युग में भी कवि रासो ग्रंथो की परंपरा बनाए रखने में सफल रहे। यह निःसंदेह गौरव की बात है।"[1] वीर जंबुकेश्वर ने अपने शासन काल में दिल्ली सुल्तानों से कई युद्ध किये। उनका अंतिम युद्ध सुल्तान तुगलक के साथ हुआ। जिसका कारण था, तुगलक के फुफेरे भाई बाहुद्दीन को अपने शरण में लेना और तुगलक से दुश्मनी मोल लेना। इस युद्ध में उन्होंने अपना सब कुछ लुटा दिया और युद्ध के अंत में वीरगति पाई। यह जानते हुए भी वीर जम्बुकेश्वर ने अपने मूल्यों और आदर्शो को नहीं छोड़ा। 'प्राण जाई पर वचन न जाई' के सिद्धांत का पालन करते हुए वे अंत तक शरणागत की रक्षा करते रहे।

'कुंतल रासो' की वीरोचित भाव पर आधारित आख्यान और चरित काव्य है। यह काव्य ऐसे कई सांस्कृतिक और मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा करता है, जो भारतीयता की धरोहर है तथा जिसके लिए भारत संसार भर में जाना जाता है। इस काव्य में शरणागत की रक्षा, मानवतावाद, धर्म का उदार स्वरुप, कर्म का सन्देश,

राष्ट्रीय भावना, समतावाद, हिन्दू–मुसलमान एकता, देशाभिमान, वीर धर्म और स्वतंत्रता प्रेम के मूल्यों को दिखाया गया है। इस काव्य की मूल कथा राजा जम्बुकेश्वर की कथा है, जिसमें एक शरणागत की रक्षा के लिए उन्होंने अपनी जान की बाजी लगा दी। उनका यह कृत्य भारतीय सांस्कृतिक परंपरा का द्योतक है। "शरणागत की रक्षा भारतीय उच्च लोकदृष्टि है। शरणागत की रक्षा करने वाले के विरुद्ध सन्नद्ध होने वाले को सर्वसामान्य नैतिक भावना का शत्रु अर्थात लोकशत्रु के रूप में देखता है।"[2] तुलसीदास या अन्य रामकाव्यो के रचयिताओं ने भी विभीषण को शरण में लेते समय दुसरे सचिवो और सेनानायको द्वारा राम को ऐसा न करने के लिए कहा गया है, पर राम ने शरणागत विभीषण की रक्षा करना अपना धर्म समझा। इतना ही नहीं शरणागत की रक्षा के लिए ही 'हम्मीर रासो' में हम्मीर का अल्लाउद्दीन से युद्ध होना वर्णित किया गया है। ठीक उसी प्रकार कुंतल नरेश जम्बुकेश्वर ने डरे हुए बाहुद्दीन को अपनी शरण में लेकर उसकी प्राणरक्षा का वचन दिया। इससे वे दिल्ली के सुल्तान के शत्रु हो गए :–

"कुंतल वर ने दी 'बाहुद्दीन, को शरण और सो मोल लिया।
दिल्लीपति से था वैर, वैर ने समर कांड था खोल दिया।"[3]

कवि ने इस शरणागत वत्सल प्रसंग में जम्बुकेश्वर की तुलना प्रभु श्री राम से भी की है :–

"ये वीर जम्बुकेश्वर कुंतल, सम्राट आनेंगोदिश महा।
अतिरिक्त राम के तत्समान/शरणागत रक्षक ईश कहाँ?"[4]

तुगलक ने जम्बुकेश्वर को सन्देश भी दिया कि अगर आपने बाहुद्दीन को हमारे हवाले नहीं किया तो इसके भीषण परिणाम भुगतने होंगे। मैं सौ लाख सैनिक लेकर आऊंगा और कुंतल साम्राज्य को तहस–नहस कर दूंगा। यह सुनकर जम्बुकेश्वर की भौहें तन गयी थी। इसी भावना को उद्धृत करते हुए विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने रासो काव्य की प्रकृति के बारे में लिखा है कि "रासो काव्य केवल वीरत्व की प्रशंसा में लिप्त लोकवाह्य काव्य नहीं था। उसमे लोक प्रचलित भावना वीरत्व के उल्लास का प्रतिपादन किया जाता था। कही लोक शत्रु का नाश होता था और कही वीरत्व का प्रदर्शन।"[5] यही भाव कुंतल रासो में भी मिलता है–

"तन गयी जम्बुकेश्वर प्रभु की, भौहें; मुख–मुद्रा अरुण हुई।
तलवार कड़कने लगी पगी, आत्मा की ज्वाला तरुण हुई।।"[6]

शरणागत की रक्षा करके राजा ने मानवतावाद का भी सन्देश दिया। इस मानवतावाद की आंच जब देश के आन–बान और शान तक पहुंची तो वीर और देश भक्त पीछे नहीं हटे। उनका स्वाभिमान और राष्ट्रप्रेम उन्हें अपने देश की रक्षा के लिए प्रेरित करता है। बाहुद्दीन ने जब देखा कि मेरी वजह से सम्पूर्ण कुंतल साम्राज्य आग की लपटों में जल रहा है तो उसने कुंतल नरेश से याचना की कि वह उसे तुगलक को सौप दे, पर उन्होंने कहा की अगर वह ऐसा करेगे तो मानवता का धर्म कलंकित हो जाएगा। जो कुंतल नरेश के स्वाभिमान, मानवतावाद और शरणागत वत्सल की भावना को द्योतित करता है, उन्होंने कहा –

"तुम जाओगे तो साथ जंबू, –केश्वर का यश भी जाएगा,
तुम जाओगे तो साथ शम्भू, श्रीधर का यश भी जाएगा।
तुम जाओगे तो साथ अग्नि, मानव मन मुरझा जाएगा,
तुम जाओगे तो मनुज धर्म, शोभा वन मुरझा जाएगा।

जो भी हो, जाने नहीं तुम्हें, मैं दूंगा, तुमको पालूंगा,
प्रण के पौधे को पनपाने, मैं आंसू खून बहाऊंगा।"[7]

यह परंपरा और यह वीरोचित मूल्य भारत की धरोहर है। जो देश के प्रत्येक नागरिक में होनी चाहिए। यही भावना भारत देश को सिरमौर भी बनाती है। संकट चाहे कितने ही विकट क्यों ना हो? धीर और कर्मयोगी पुरुष कभी भी अपने कर्म और कर्तव्य पथ से पीछे नहीं हटता। भारतीय संस्कृति कर्मफल पर विश्वास करती है। "हमारे यहाँ कर्म की संस्कृति पर गहन विचार किया गया है और बताया गया है कि "मनुष्याःकर्म लक्षणः" अर्थात मनुष्य का लक्षण कर्म ही है। कर्म करते हुए ही वह मनुष्य बनता है।"[8] साथ ही जो भी करें पूर्ण मनोयोग और मूल्यों को ध्यान में रखकर करें। भारतीय शास्त्रों में कहा गया है 'मूल्यों के विरुद्ध किये गए कार्यो की परिणति सदैव गलत होती है। कार्य की सार्थकता, विशिष्टता एवं गुणवत्ता मूल्यों को ही दर्शाती है।' यह कर्म सन्देश ही हमारी परंपरा और संस्कृति का आधार है। इसी कर्म का सन्देश देते हुए कुंतल नरेश कहतें है –

"आकाश घनो से डरता क्या? गिरी आंधी से घबराता क्या।
खेतल टूटे कि धरा फूटे, मृगराज नयन भर आता क्या।।"[9]

मैं सिर्फ अपने कर्म और कर्तव्य पालन कर रहा हूँ। फल अच्छा हो या बुरा, कर्म करते रहना मनुष्य की नियति है और यही होना भी चाहिए। जब तुम्हारी रक्षा का दायित्व लिया है तो इसकी रक्षा करना हमारा कर्म और धर्म है –

"कुछ भी हो, हमने तो तुमको, ले लिया मुल्क में, फिर घर में।
ले लिया बंधू, अन्तःपुर में, ले लिया बंधू अपने उर में।।"[10]

कुंतल रासो में राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय भावना की भी उद्भावना मिलती है। व्यक्ति के लिए देश से बड़ा ना कुछ है और ना ही कुछ होना चाहिए। यह चेतना वेदकाल से ही विद्यमान है। "माता भूमिः पुत्रोहम पृथिव्याः।"[11] अर्थात भूमि माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ। जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान है। इस पर संकट आये तो तन, मन और धन सबका अर्पण करने से पीछे नहीं हटना चाहिए। इसी राष्ट्रीय भावना की परिणति कुंतल रासो में दिखती है। जब बल्लारी के राजा के पुत्र, वीर जम्बुकेश्वर को अपने राज्य का राज्यकोष अर्पण कर देते है, तो उन्हें जम्बुकेश्वर मना करते हैं। इस बात का उत्तर देते हुए जम्बुकेश्वर कहते है कि जब राज्य संकट, अकाल या दुःख की घड़ी में हो तो घर में धन रखना पाप है। यह धन देश और प्रजा की संपत्ति है।

"जब राज्य धर्म संकट में है, दुःख में अकाल या रण में है।
धन घर में रखना तब अपुण्य, धन का विलास वितरण में है।
बलिहारी राज बलिजो को दे, आशीष जम्बुकेश्वर बोले।
'सम्पति प्रजा की थाती है, तुमने रहस्य सुन्दर खोले।"[12]

कुंतल रासो में भारतीय सांस्कृतिक परंपरा की उदार चरित की भावना और वीरोचित भाव का जगह–जगह में प्रदर्शन है। सच्चे अर्थो में धार्मिक व्यक्ति बहुत सीधा–साधा होता है। इसमें कोई संशय नहीं है कि कुंतल नरेश धार्मिक व्यक्ति नहीं थे। लेकिन क्षत्रिय होने के नाते उनका वीरोचित धर्म भी था। इसी भावना को देखते हुए स्वामी विवेकानंद जी का कथन है कि "भारत की संस्कृति अक्षय–अमर इसलिए रह सकी है कि

उसने नीति को नहीं धर्म को अपने जीवन में अनुप्राणित किया।"[13] जब तुगलक ने अपने सिपेसालार हसन अली को कुंतल देश पर आक्रमण के लिए भेजा तो उसे मुँह की खानी पड़ी। जम्बुकेश्वर की तलवार उसके गर्दन पर थी, तभी उनके मन में यह विचार आया कि एक बाहुद्दीन के प्राणों की वह रक्षा कर रहे हैं और दूसरी तरफ दूसरे के प्राण लेने जा रहे है। यही सोच कर उन्होंने हसन अली को जीवनदान दे दिया –

"एक के लिए इतना करता, औरो को काहे को मारे?
जाने दो इसको, जीने दो, पशुता पर नरता क्यों वारे।"[14]

दूसरे जब स्वयं तुगलक का पुत्र युद्धभूमि में वीर जम्बुकेश्वर के हाथों में पड़ जाता है तो कुंतल सेना के सैनिको की आवाज आती है कि इसका वध कर दो। जैसे ही वह तलवार उठाकर वार करने जाते है उनके मन में यही सवाल आता है और उनके पुत्र का चेहरा उनके सामने आ जाता है जो यह कह रहा है कि यह मेरा अनुज है, आप क्रोध और युद्ध के जोश में इसकी हत्या क्यों कर रहे हैं, और कुंतल नरेश ने उसे छोड़ देते हैं।

"श्री कम्पिलेश का हाथ उठा, करवाल उठा था काल उठा।
पर रुके कुंतलेश्वर क्षण में, मन में ज्यो एक सवाल उठा।
राणा के दृग में राजकुंवर, छा गए और वे कहते थे,
'यह अनुज हमारा, मत मारो, क्यों आप क्रौय में दहते हो।
चकराया सिर कुंतल पति का, हट गए वहां से पल भर में,
चकराया सिर तुगलक का भी, यह समां देखते संगर में।"[15]

कुंतल रासो हिन्दू–मुस्लिम एकता का बेजोड़ आख्यान है। जहाँ देश में आज हिन्दू–मुस्लिम एक दूसरे के प्रति अविश्वास का भाव रखतें हैं। दोनों के अन्दर एक–दूसरे के प्रति नफ़रत की भावना है। वही कुंतल रासो के माध्यम से कवि एक सन्देश देते है कि संसार में सबसे बड़ा धर्म मानव धर्म है, सभी मनुष्य एक–दूसरे के भाई–बंधू है। एक मुस्लिम शरणागत की रक्षा एक हिन्दू शासक करते हैं और यह सन्देश जन–जन के लिए प्रेषित करते हैं –

"तुम हुए सगे भाई मेरे, हम में न भेद, हम बांधव है।
तुम मुसलमान मैं हिन्दू हूँ, कर्तव्य धर्म में मानव है।"[16]

निष्कर्षतः देखा जाये तो सच्चे अर्थों में कुंतल रासो भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना करने वाला चरित आख्यान है, डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति जी ने इस रासो काव्य के माध्यम से जन–जन को मानवता का सन्देश देने की कोशिश की है। भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के अनुसार व्यक्ति का दृष्टिकोण ऊँचा होना चाहिए। यही हमें मनुष्य बनाता है। जीवन एक आदर्श और उद्देश्य को साथ लेकर जीना चाहिए। संस्कृति का अर्थ है वह कार्य पद्धति जो संस्कार उत्पन करे। व्यक्ति की उच्छृंखल मनोवृति पर नियंत्रण स्थापित कर उसे कैसे संस्कारी बनाया जाये, यही भारतीय सस्कृति का ध्येय है। इसी को स्थापित करने के लिए ऐसे चरित काव्यों की रचना भारतीय साहित्य में की जाती है। इस दृष्टि से सरगु कृष्णमूर्ति जी द्वारा लिखा गया 'कुंतल रासो' उत्तम कोटि का चरित काव्य है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूंची :-

1. कुंतल रासो (कुंतल रासो की भूमिका)– डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति, पेज– 23, छायांकिता पब्लिशिंग हाउस, बैंगलोर।
2. हिंदी साहित्य का अतीत –पृष्ठ–150, विश्वनाथ प्रसाद, वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
3. कुंतल रासो : डॉ सरगु कृष्णमूर्ति, पृष्ठ –25
4. वही, पृष्ठ –25
5. हिंदी साहित्य का अतीत – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृष्ठ 151, वाणी प्रकाशन।
6. कुंतल रासो – डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति, पृष्ठ –26
7. वही, पृष्ठ –45
8. महाभारत–अश्वमेघ पर्व (सन्दर्भ) भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व श्री रामशर्मा आचार्य, पृष्ठ 230, प्रकाशक–अखंड ज्योति संस्थान।
9. कुंतल रासो – डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति, पृष्ठ–45
10. कुंतल रासो – डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति, पृष्ठ –44
11. अथर्ववेद –(सन्दर्भ) भूमि, जन और संस्कृति (निबंध) – वासुदेवशरण अग्रवाल।
12. कुंतल रासो – डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति, पृष्ठ–40
13. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व –श्री रामशर्मा आचार्य, पृष्ठ 230, प्रकाशक – अखंड ज्योति संस्थान
14. कुंतल रासो – डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति, पृष्ठ–28
15. वही, पृष्ठ –35
16. वही, पेज –44

ई मेल – atul@claretcollege.edu.in

दूरभाष 9450379930

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 36-47

ऊधम सिंह नगर के बाढ़ सम्भावित क्षेत्रों का भौगोलिक अध्ययन

(रूद्रपुर ब्लॉक के विशेष संदर्भ में)

सूरज कुमार, शोध छात्र
डॉ. कमला बोरा, असिस्टेंट प्रोफेसर
भूगोल विभाग, एस0 बी0एस0 पी0 जी0 कॉलेज, रूद्रपुर।

सारांश :-

बाढ़ मनुष्य और पर्यावरण के बीच विनाशकारी पारस्परिक क्रियाओं में से एक हैं। बाढ़ आपदा जो एक ओर उपजाऊ मैदान का निर्माण करती तो दूसरी ओर आवासीय क्षेत्रों में विनाशकारी प्रभाव डालकर मानव जीवन के साथ ही वन्य जीव–जन्तुओं के जीवन को भी अस्त–व्यस्त कर देती है। मनुष्य द्वारा अभी तक आपदाओं को अपने अनुकूल करने अथवा उस पर नियन्त्रण रखने में ठोस कामयाबी नहीं मिल पायी, परन्तु वर्ष दर वर्ष ऐसी अपदाओं के सम्पर्क में आने से मनुष्य अपने ज्ञान और अनुभव के अधार पर यह अवश्य समझ गया है कि ऐसी विनाशकारी आपदाओं पर नियंत्रण नहीं किया जा सकता लेकिन सजग रहकर व उचित प्रबन्धन के माध्यम से इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है। भारत में बाढ़ लगभग हर साल आती है इस प्राकृतिक आपदा को नियंत्रित करने की तमाम कोशिशों के बावजूद अचानक नदियों में जब बहाव अधिक होता या उनका रास्ता बदलता जाता है तो इंजीनियरों एवं वैज्ञानिकों की सारी योजनाएं विफल हो जाती जो इन्हे आश्चर्य में डाल देती हैं। हाल ही के वर्षों में आयी अनेक बाढ़ आपदाओं के बाद यह आम शिकायत रही है कि बाढ़ नियंत्रण के मद में होने वाले भारी खर्च का अपेक्षित परिणाम नहीं मिल पाता है।

बीते एक दशक में बढ़ती बाढ़ की घटनाओं, जनसख्ंया वृद्धि और अतिक्रमण होते नदी तट से यह भी स्पष्ट है कि नदी के अपवाह क्षेत्रों में मानव निर्मित संरचनाओं के कारण नदी के निर्गत और तलछट के बीच का संतुलन प्रभावित हुआ है। विभिन्न प्रकार की आपदायें यहां दृष्टि गोचर होती है जैसे बाढ़, भूकम्प, चक्रवात, भूस्खलन, सूखा आदि है, समय–समय पर इन प्राकृतिक आपदाओं से वृहद जन समुदाय को जान माल की क्षति होती है। इसलिए भारत विश्व के सबसे ज्यादा आपदा वाले देशों की श्रेणी में गिना जाने लगा है। वर्ष 2008 की विनाशकारी बाढ़ से उत्तर बिहार और नेपाल के 30 लाख से ज्यादा लोगों को प्रभावित किया था। उत्तराखण्ड में प्राकृतिक आपदाओं में बाढ़ एक प्रमुख आपदा है जो बादल फटने, अत्याधिक वर्षा होने व बांध के टूटने जैसे कारणों से आती है इसमें अत्याधिक मात्रा में जल ग्रामीण, शहरी क्षेत्रों के साथ–साथ मैदानी भू–भागों में एकत्रित होकर अनियत्रिंत रूप से भू–खण्ड जल समाधि ले लेते है जिसे जल सैलाब नाम से भी जाना जाता है। इससे

समस्त प्राणी समूह को आर्थिक व मानवीय रूप में हानि उठानी पड़ती है। बाढ़ के बाद लोगों की बदहाली और बाढ़ की प्रक्रिया के बारे में नीति नियामकों और जनता की पूरी गैर समझदारी के कारण लोगों ने महसूस किया कि बार–बार आने वाली इस विभिषिका के हल के लिए वैज्ञानिक शोध एवं अभियांत्रिक समाधनों के अलावा इस बारे में लोगों को शिक्षित भी करने की जरूरत है ताकि बाढ़ से निपटने का स्थाई समाधान और जागरूकता पैदा की जा सके। कई उदाहरणों में बाढ़ से निपटने के अभियांत्रिक समाधान न सिर्फ तात्कालिक प्रभाव के साबित हुए हैं, बल्कि वे बाढ़ प्रभावित इलाकों में रहने वाले लोगों के बीच सुरक्षा का भ्रम भी पैदा करते हैं। बाढ़ के प्रति लोगों में जागरूकता करना महत्वपूर्ण है। ऐसा कर बाद में होने वाली बाढ़ की विभिषिका का ज्यादा कारगर तरीके से मुकाबला करने के लिए तैयार किया जा सकता है। इस प्रकार की हानि को कम करने अथवा रोकने के लिए बाढ़ आपदा प्रबन्धन की आसानी से किया जा सकता है।

कुंजी शब्द : नगरीय तीव्र बाढ़; Urben Flash Flood (UFF)

प्रस्तावना :–

भारत की भौगोलिक संरचना और जलवायु में विविधता होने के कारण यह अन्य देशों के भौगोलिक स्वरूप की अपेक्षा भारत को विश्व में विशेष स्थान दिलाती हैं। परन्तु यह भौगोलिक विभिन्नता कही न कही आपदाओं (बाढ़, सूखा, वनाग्नि, अतिवृष्टि, भूस्खलन व चक्रवात आदि) के प्रति अति संवेदनशील हैं। सीमित संसाधनों के फलस्वरूप आपदा प्रभावितों की संख्या अधिक होती हैं। जिसके कारण प्रभावित लोगों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने में समय लगता हैं और विकास की क्रिया बाधित हो जाती हैं। जलवायु परिवर्तन व मानसूनी जलवायु होने के कारण भारत में हर वर्ष कभी एक क्षेत्र में, तो कभी दूसरे क्षेत्र को बाढ़ की आपदा का सामना करना पड़ता है।

वर्तमान शताब्दी के कुछ ही वर्षो में भारत ने अभूतपूर्व परिमाण की बाढ़ आपदाओं का सामना किया हैं। विगत 10 या 12 वर्षों से आपदा की संवेदनशीलता में वृद्धि हो रही है। हिमालयी राज्यों में बाढ़ व अन्य प्रकार की अपदाओं की दृष्टि से उत्तराखण्ड एक संवेदनशील राज्य है। उत्तराखण्ड में अगस्त 2012 अत्यधिक वर्षा होने से उत्तरकाशी में असीगंगा घाटी में, वर्ष 2013 केदार घाटी (उत्तराखण्ड) में आयी बाढ़ (800 लोग मरे) की घटना ने देश के सम्मुख बहुत ही विनाशकारी दृश्य प्रस्तुत किया। जिसमें बाढ़ के कारणों व प्रभावों का विश्लेषण देश–विदेश के वैज्ञानिकों ने शोध के माध्यम प्रस्तुत किये है। अगस्त 2017 मलपा गाड में बाढ़, 7 फरवरी 2021 ग्लेशियर टूटने के कारण चमोली बाढ़ (83 लोग मृत), 17.18 अक्टूबर 2021 की वर्षा की बाढ़ ने पूरे उत्तराखण्ड (मृत्यु 43) को प्रभावित किया। उत्तराखण्ड राज्य में कुमॉऊ मण्डल के तराई क्षेत्र–जनपद ऊधम सिंह नगर में वर्ष 2004, 2008 जुलाई 2013, अगस्त 2018 और सितम्बर 2019, तराई क्षेत्र–जनपद ऊधम सिंह नगर की तहसील रूद्रपुर में अगस्त/17–18 अक्टूबर 2021 जिसके कारण जन–धन की हानि होना, कृषि उपज का नष्ट होना, शिक्षा और विकास योजनाओं में बाधा उत्पन्न हुई। यद्यपि जनसंख्या वृद्धि, नदी तटों पर अतिक्रमण अव्यवस्थित नगरीकरण, अत्यधिक संवेदनशील क्षेत्रों में भवनों का निर्माण, डूब युक्त स्थानों पर बसासत, पर्यावरणीय क्षति एवं जलवायु परिवर्तन आदि महत्वपूर्ण कारण है जोकि आपदा की स्थिति को और अधिक भयावह बनाते हैं और जनजीवन के नुकसान के कारण बनते है। जिसके निवारण हेतु उचित योजनाओं और प्रबन्धन का किया जाना आवश्यक है।

शोध उद्देश्य :-

रुद्रपुर के शहरी क्षेत्र में बाढ़ सम्भावित क्षेत्रों की पहचान करने के साथ ही संवेदनशीलता का आंकल़न व प्रबन्ध का अध्ययन करना है।

1. बाढ़ सम्भवित क्षेत्रों की पहचान करना।
2. बाढ़ आपदा से प्रभावित समुदाय का अध्ययन करना।
3. पशुद्यन क्षति का आंकलन करना।
4. बाढ़ आपदा के कारणो की पहचान, अध्ययन व प्रबंधन करना।

अध्ययन क्षेत्र :-

रुद्रपुर तहसील उत्तराखण्ड के कुमाऊँ हिमालय के सबसे दक्षिण में स्थित तराई प्रदेश उधम सिंह नगर का मुख्यालय जिसका अक्षांशी व देशान्तरीय विस्तार 28°58′ से 28°97′ उत्तरी अक्षांश व 79°23′ से 79°39′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है समुद्र तल से ऊंचाई 219 मीटर तथा कुल क्षेत्रफल 158 वर्ग किलोमीटर तथा औसत वार्षिक वर्षा 1429 मि.मी. है यह क्षेत्र भूकम्प जोन 4 के अर्न्तगत आता है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार कुल 29622 परिवारों की जनसंख्या 1,54,554 जिसमें से नगर नगर पालिका की जनसंख्या 1,40,884 थी इसमें कुल महिलाओं की जनसंख्या 47% तथा कुल पुरूष जनसंख्या 53% है जबकि वर्तमान में रूद्रपुर नगर पालिका की कुल 33,435 परिवारों की जनसंख्या 1,75,723 जो नगर के 40 वार्डों में निवास करती है। इसमें कुल महिलाएं 46% तथा पुरुष 54% तथा कुल साक्षरता 74% जिसमें 82% पुरुष साक्षरता व 67% महिला साक्षरता है नगर का कुल लिंगानुपात 852 व कुल जनसंख्या घनत्व 1112 वर्ग कि0मी0 है।

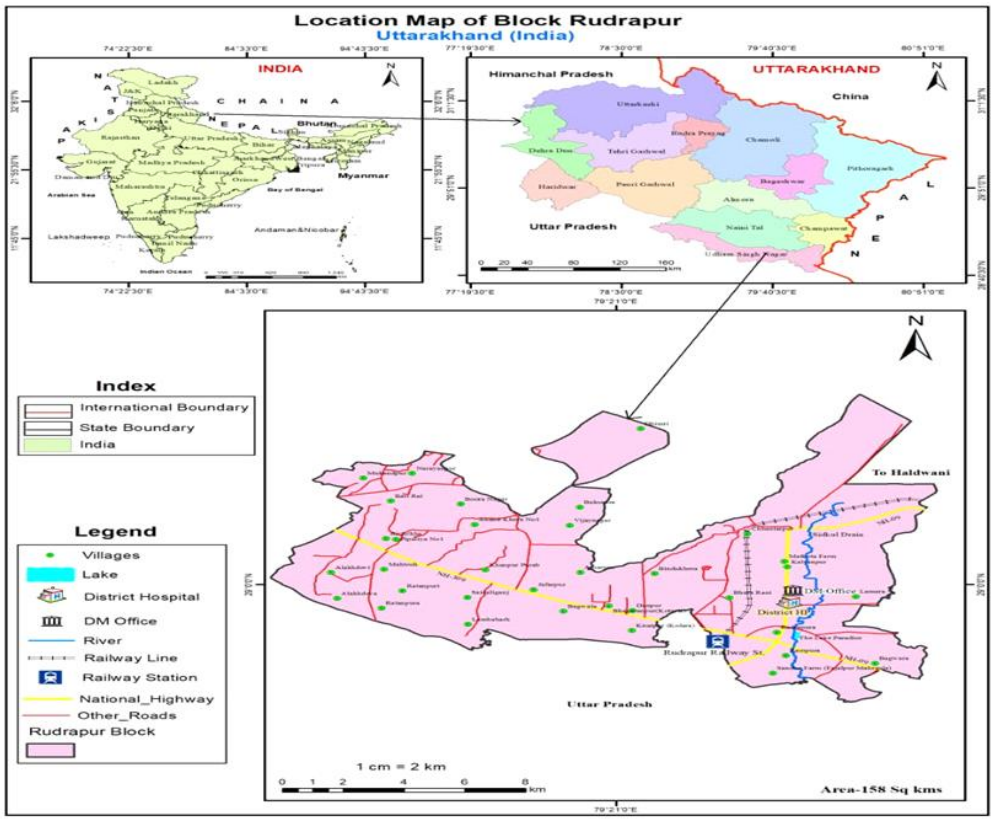

Made by GIS Anylist-Niraj

स्थिति अध्ययन :–

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण के लिए रुद्रपुर शहर के कुल 40 वार्डो में से 12 वार्डों का चयन किया गया जिनमें साधन सम्पन्न (उच्च वर्ग) व मलिन बस्तियों में रहने वाले लोग (निम्न वर्ग) के लोग निवास करते हैं तथा इसमें कल्याणी नदी तट के निकट से लेकर 6 किलोमीटर दूर तक स्थित आवास समूहो को सम्मिलित किया गया। जिसमें कच्चे–पक्के आवास दोनों सम्मिलित हैं। निम्नलिखित सारणी में चयनित क्षेत्र, परिवारों की संख्या व कुल जनसंख्या को दर्शाया गया है। सारणी एक में आंकड़ों के अनुसार सर्वेक्षित क्षेत्र के कुल परिवारों की संख्या 10457 है। जिसमें कुल जनसंख्या 53449 जिसमें पुरूष 52% तथा महिलाएं 48% हैं। इन बस्तियों में 7 मलिन बस्तिया जो अतिक्रमित भूमि पर स्थित हैं 5 पूर्ण विकसित व साधन सम्पन्न बस्तियां है।

सारणी 1– चयनित क्षेत्र

क्र0 सं0	वार्डों का नाम	परिवार संख्या	कुल जनसंख्या	बस्ती का प्रकार
1.	ट्रांजिट कैम्प	820	3986	मलिन
2.	जगतपुरा	840	4369	मलिन
3.	खेड़ा उत्तर	799	4473	मलिन
4.	रविन्द्र नगर 1	1028	46547	मलिन
5.	भूत बंगला	797	4483	मलिन
6.	मुख्य बाजार	821	4349	विकसित
7.	आदर्श कालोनी	903	4789	विकसित
8.	बिगवाडा	857	4272	मलिन
9.	भूरारानी	871	4197	विकसित
10.	पहाड़गंज	764	4437	मलिन
11.	आवास विकास	887	4425	विकसित
12.	एलाइन्स	1070	4953	विकसित
	योग	10457	53449	विकसित

स्रोतः– नगर निगम रुद्रपुर

बाढ़ प्रभावित क्षेत्र :–

18–20 अक्टूबर वर्ष 2021 में अध्ययनकर्ता द्वारा सर्वेक्षण के कार्य में जो अवलोकन व प्रयोगिक सर्वेक्षण के आधार पर बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों की पहचान की गयी। जिसमें यह देखा गया कि किन–किन क्षेत्रों में जल भराव की समस्या अत्यधिक है इसमें प्रमुख रुद्रपुर के नगरी क्षेत्र जल भराव की समस्या से ग्रस्त थे जिसमें पश्चिमी ट्रांजिट कैम्प, उत्तरी खेड़ा, जगतपुरा, शिवनगर, दक्षिणी खेड़ा, भूतबंगला उ0पू0, रम्पुरा पू0, पहाड़गंज, संजय नगर, दूधिया नगर, मुख्य बाजार, आदर्श कॉलोनी और कल्याणी–व्यू रविन्द्र नगर प्रमुख है।

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों का वर्गीकरण :–

1. **अत्यधिक संवेदनशील क्षेत्र :–** इसमें उन क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया। जहां के निवासी स्थानों में 8 से 10 फीट तक जलभराव हो जाता है तथा यह क्षेत्र कल्याणी नदी के तट से 80–100 मीटर के अन्तर्गत

सम्मिलित है इसमे प्रमुख क्षेत्र जगतपुरा, ट्रांजिट कैम्प, पश्चिम शिव नगर, संजय नगर, दूधिया नगर, पहाड़गंज, खेड़ा उत्तर, भूत बंगला, उत्तर पूर्वी भदईपुरा, रम्पुरा पूर्वी और कल्याणी व्यू/रविन्द्र नगर आदि सम्मलित है।

उत्तरी खेड़ा

पूर्वि ट्राजिस्ट कैंम

2. **संवेदनशील क्षेत्र :–** फुलसुंगा, मुखर्जी नगर ट्रांजिट कैम्प, औद्योगिक क्षेत्र, मुख्य बाजार, इन्द्रा कॉलोनी, खेड़ा मध्य पश्चिम आवास विकास पूर्वी।

मुख्य बाजार

मध्य खेड़ा

3. **कम संवेदनशील क्षेत्र :–** ट्रांजिट कैम्प, मध्य, आजाद नगर, विवेक नगर, बिगवाड़ा, खेड़ा दक्षिण, रम्पुरा मध्य, राजा कॉलोनी।

इन सभी क्षेत्रों के अलावा अन्य क्षेत्रों में बाढ़ का प्रभाव नहीं होता है जिसमें प्रमुख रुप से रम्पुरा मध्य–पश्चिम, फाजलपुर महरौला, सिर गोटिया, गांधी कॉलोनी, आदर्श कॉलोनी, एस आर डी1 डी2, एलाएन्स, भूरारानी, सिंह कालोनी, इन्द्रा कालोनी, घास मण्डी, आवास विकास पश्चिमी और सिडकुल है। अत्यधिक संवेदनशील क्षेत्र, संवेदलशील क्षेत्र के सभी आवास नजूल भूमि पर स्थापित किये गए हैं। अर्थात रुद्रपुर की 84% जनसंख्या सरकारी भूमि पर निवास करती है जिसमें से रुद्रपुर की कुल आबादी का 45.75% जनसंख्या मलिन बस्तियों में रहती है।

सारणी 2 :– बाढ़ प्रभावित परिवारों की संख्या व घरों में जलस्तर फीट में

क्र0 सं0	क्षेत्र का नाम	कुल परिवार	प्रभावित परिवार	जलस्तर
1.	ट्रांजिट कैम्प	820	537	3.7
2.	आदर्श कालोनी	903	57	1.5
3.	जगतपुरा	840	519	3–4.6

4.	खेड़ा उत्तर	799	365	4–5
5.	रविन्द्र नगर	1028	235	2–2.5
6.	भूत बंगला	797	247	4–5
7.	मुख्य बाजार	821	–	2–3.5 (मार्ग पर)
8.	बिगवाडा	857	72	2
9.	भूरारानी	871	177	2–2.5
10.	पहाडगंज	764	150	3
11.	आवास विकास	887	–	2 मार्ग पर
12.	एलाएन्स	1070	–	1.6 मार्ग पर
	योग	10647	2359	

स्रोत– व्यक्तिगत सर्वेक्षण 19 अक्टूबर, वर्ष 2021

अतः सारणी सख्या 2 में प्रदर्शित आंकड़ो के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक बाढ़ प्रभावित क्षेत्र ट्रांजिट कैम्प पश्चिम, जगतपुरा, खेड़ा उत्तर, रविंद्र नगर, भूतगंगला, भूरारानी, बिगवाड़ा, आदर्श इन्द्रा कालोनी और पहाड़गंज में कुल 2359 परिवार बाढ़ आपदा से प्रभावित थे। इसमे सर्वाधिक 519 परिवार जगतपुरा में प्रभावित हुए जिसमें सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्रों में 7 मलिन बस्तियां है जो नदी तट पर अतिक्रमण कर, भूमि पर आवास बनाकर रह रहे है।

बाढ़ आपदा के प्रमुख कारण :–

18–19 अक्टूबर वर्ष 2021 में बाढ़ आपदा का प्रभाव :

इस वर्ष ने पूरे उत्तराखंड को प्रभावित किया परिणामस्वरूप तीव्र वर्षा व भू–स्खलन की आपदा में 47 लोग की मृत्यु हो गयी इसमें से कुमाऊँ मडंण्ल के सभी 6 जनपदों–ऊधम सिंह नगर, नैनिताल, चम्पावत, अल्मोड़ा, बागेश्वर और पिथौरागड़ में भारी वर्षा और बाढ़ के कारण कुल 40 लागों की मृत्यु हो गई। वर्ष 2021 में 18–19 अक्टूबर की बाढ़ से ऊधम सिंह नगर के रुद्रपुर शहर में विस्तृत क्षेत्रों को प्रभावित हुए। भूरारानी, शान्ति बिहार, हंस बिहार, आदर्श इन्द्रा कॉलोनी 1.5 से 2.0 फिट तक आवासों में जल भराव की स्थिति उत्पन्न गई तथा तीन पानी डाम, बिगबाड़ा के पास एन0एच0 309 पर जल भराव हो जाने के कारण क्षतिग्रस्त होने से वाहनो की आवाजाही में अवरोध उत्पन हो जाता है।

1. बदलता वर्षा का प्रतिरूप वा अनियमित वर्षा :–

बढ़ती जनसंख्या औद्योगिक विकास और वृक्षों व वनों के कटान ने प्राकृति व मौसम के प्राकृतिक स्वरूप को सर्वाधिक प्रभावित किया है जिसके कारण वर्षा ऋतु के अलावा भी अन्य ऋतु में वर्षा होना अथवा अल्प समय में अत्यधिक वर्षा होने से भी बाढ़ की घटनाएं दृष्टिगत हो रही है। सारणी संख्या 2 का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि पिछले 10 वर्षा में सर्वाधिक कुल वर्षा 1823.3 मि.मी. वर्ष 2013 में व सबसे कम 943.8 मि. मी. वर्ष 2012 में हुई जबकि मानसून के दौरान सबसे अधिक वर्षा 649.1 मि.मी. जुलाई में व 616.4 मि.मी. अगस्त वर्ष 2018 में और सबसे कम वर्षा 21.2 मि.मी. जून वर्ष 2012 तथा 36.6 मिमी सितम्बर 2021 में दर्ज की गई

सारणी 2

Rainfall in 2012-2021

Year,s Month	2012	2013	2014	2015	2016	2017	2018	2019	2020	2021	Total
Jan.	25.2	41.2	112.4	32.8	0	60.4	6.8	14.2	118.2	18.6	**429.8**
Feb.	0.6	132.1	120.4	8.4	2.5	0	4	33.4	23.2	4.6	**329.2**
Mar.	3.8	13.4	69	87.1	0.9	3.6	0	6.2	46.1	0.0	**230.1**
Apr.	7.4	8.4	13	20.1	0	4	42.2	14.4	70.8	4.1	**184.4**
May	0	1.2	17.8	30.1	135.4	39	22.8	0.0	61.1	190.6	**498**
June	21.2	603.4	113.8	332.6	171.2	73	172.8	257.0	222.4	132.0	**2099.4**
July	269.2	394.2	428	380.6	499.1	505	649.1	239.5	402.7	239.8	**4007.2**
Aug.	391.8	455	89	335.7	201.6	440.6	616.4	332.3	249.5	299.7	**3411.6**
Sept.	224.6	77.8	38.2	112	166.2	336.8	224.6	290.6	56.3	36.6	**1563.7**
Oct.	0	86.4	45.4	5	0	0	2.6	0.0	0.0	427.5	**566.9**
Nov.	0	0	0	2	0	0	4.2	29.2	0.0	8.0	**43.4**
Dec.	0	10.2	40.1	0	0	2.8	0.8	79.8	2.5	0.0	**136.2**
Total	**943.8**	**1823.3**	**1087.1**	**1346.4**	**1176.9**	**1465.2**	**1746.3**	**1296.6**	**1252.8**	**1361.5**	**13500**

स्रोत :– मौसम विभाग कृषि वि0वि0 पन्तनगर।

जबकि वर्ष 2021 के ही अक्टूबर माह में 427.5 मि.मी. वर्षा हुई। वर्ष 2012 से 2021 तक दस वर्षों की कुल औसत वार्षिक वर्षा 1350 मि.मी. है। मौसम विभाग पन्तनगर कृषि विश्वविद्यालय रुद्रपुर से प्राप्त वर्षा के आंकड़ों का विश्लेषण करने के उपरान्त सारणी संख्या 2 में प्रस्तुत आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2012 से वर्ष 2016 के मध्य 5 वर्षा में जून में कुल 1242 मि.मी. जुलाई में व अगस्त में 1971.1 सितंबर में 1618 और अक्टूबर में 136 मि.मी. वर्षा दर्ज की गई जबकि

Rainfall - 2012-2021

Sr.No.	MONTH	2012-2016	2017-2021
1	Jan.	211.6	218.2
2	Feb.	264	65.2
3	March	174.2	55.9
4	April	48.9	135.5
5	May	184.5	313.5
6	Jun	1242.2	857.2
7	July	1971.1	2036.1
8	Aug.	1473.1	1938.5
9	Sept.	618.8	944.9
10	Oct.	136.8	430.1
11	Nove.	2	42.6
12	Dece.	50.2	87.6
13	Total	6377.4	7118.3

स्रोत :– सारणी 2

ग्राफ : 1

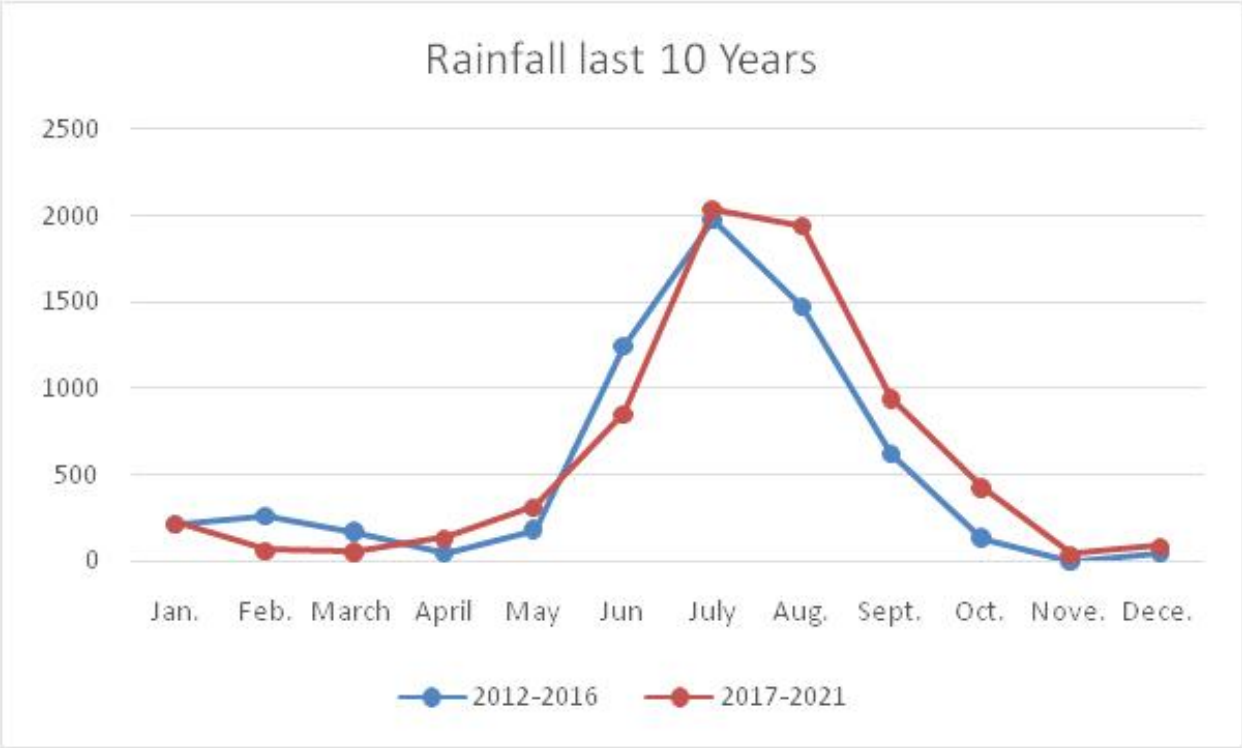

स्रोत :– सारणी 2.

वर्ष 2017 से 2021 पिछले पांच वर्षों में जून में कुल वर्षा 857.2 (पिछले वर्ष के मुकाबले कम), जुलाई, अगस्त, सिम्बर व अक्टूबर में क्रमशः 2036.1, 1938.5, 944.9, और 430.1 मि.मी. वर्षा हुई जो कि पिछले 5 वर्षा के 2012 से 2016 के मध्ये इन्ही माह के मुकाबले वर्षा अधिक प्राप्त हुई है; जैसा कि यह ग्राफ 1 में भी स्पष्ट होता है। पिछले 10 वर्षों के इतिहास में अक्टूबर माह में सर्वाधिक वर्षा वर्ष 2021 में 18–19 अक्टूबर में 427. 5 मिमी में (24 घण्टे) में हुई। अतः 18–19 अक्टूबर वर्ष 2021 में रुद्रपुर में अत्यधिक वर्षा के कारण तीव्र बाढ़ आयी।

2. नदी मार्ग व तट में अतिक्रमण :–

कल्याणी नदी अपने उद्‌गम् स्थल पन्तनगर के पत्थरचट्टा में सैनिक फार्म से निकल कर 2.5 किलोमीटर प्रवाहित होने के बाद 3.7 औद्योगिक अस्थान क्षेत्र में उत्तर–मध्य भाग से प्रवाहित होती हुई आगे कि ओर रूद्रपुर भाहर में4.2 किलोमीटर तक संघन आवासों से अतिक्रमित तट व संकीर्ण होते नदी मार्ग को पार कर कृषि युक्त क्षेत्रों को सिंचते हुए अपने मार्ग पर जनपद उधम सिंह नगर की सीमा से बाहर निकल कर उत्तर प्रदेश राज्य की सीमा में प्रवेश कर जाती है। 16 से 17 वर्ष पूर्व कल्याणी नदी अपने नाम के अनुरूप ही मानव समाज के साथ ही समस्त जीव–जन्तु पशु पक्षियों का पालन पोषण के रूप में कल्याण करती चाहे वह सिंचाई के रूप में, प्यास बुझाने, पवित्र स्नान से लेकर धार्मिक आयोजनों तक इस नदी के जल का प्रयोग किया जाता था परन्तु आज औद्योगिकरण और विकास के युग में शासन–प्रशासन से उपेक्षित यह नदी अपने अस्तित्व के लिए लड़ रही है। औद्योगिक क्षेत्र सिड़कुल क्षेत्र में नदी को एक नाले का रूप दे दिया गया तथा ट्रांजिस्ट कैम्प पश्चिम, जगतपुरा, शिवनगर, उत्तर खेड़ा, भूत बंगला, पूर्वी रम्पुरा और रविन्द्र नगर में पूर्व व पश्चिम दोनों किनारों पर

अत्याधिक अतिक्रमण कर नदी के प्राकृतिक प्रवाह मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो गया है। उत्तरी खेड़ा, पश्चिमी ट्रांजिट कैम्प, जगतपुरा में अतिक्रमण के परिणाम स्वरुप कल्याणी नदी के वर्तमान चौड़ाई क्रमशः 2.5 मीटर, 6 मीटर और पश्चिम रम्पुरा में 8–10 मीटर तक जबकि रुद्रपुर में प्रसिद्ध अटरिया मन्दिर के पास नदी की वास्तविक चौड़ाई 53 मीटर थी।

अतः नदी मार्ग में अतिक्रमण होने के फलस्वरूप वर्षा के जल को नदी से प्रवाहित होने के लिए पूर्ववत की तरह या आवश्यकतानुसार उचित मार्ग प्राप्त नहीं हो पाता व अवरोध के कारण धारा प्रवाह धीमा हो जाता साथ ही पीछे से आता जल नदी तल में जल की मात्रा को बढ़ा देता जिसके कारण जल नदी तल से ऊपर प्रवाहित होने लगता और यही जल बाढ़ का रूप ले लेता है। शहर की 48.2 प्रतिशत जनसंख्या नदी तट के दोनों तरफ निवास करती है जिसका मल–मूत्र व अन्य अपशिष्ट नदी में डाला जाता है और साथ ही 300 से अधिक छोटे–बड़े उद्योग व फैक्ट्रीयों का दूषित जल नदि में छोड़ा जाता जिसके कारण कल्याणी में गाद के समान अपशिष्ट और कचरा जमा हो जाता जो वर्षा ऋतु में नदी जल के प्रवाह को धीमा करता तथा परिणाम स्वरूप यह भी बाढ़ आने का कारण बनता है।

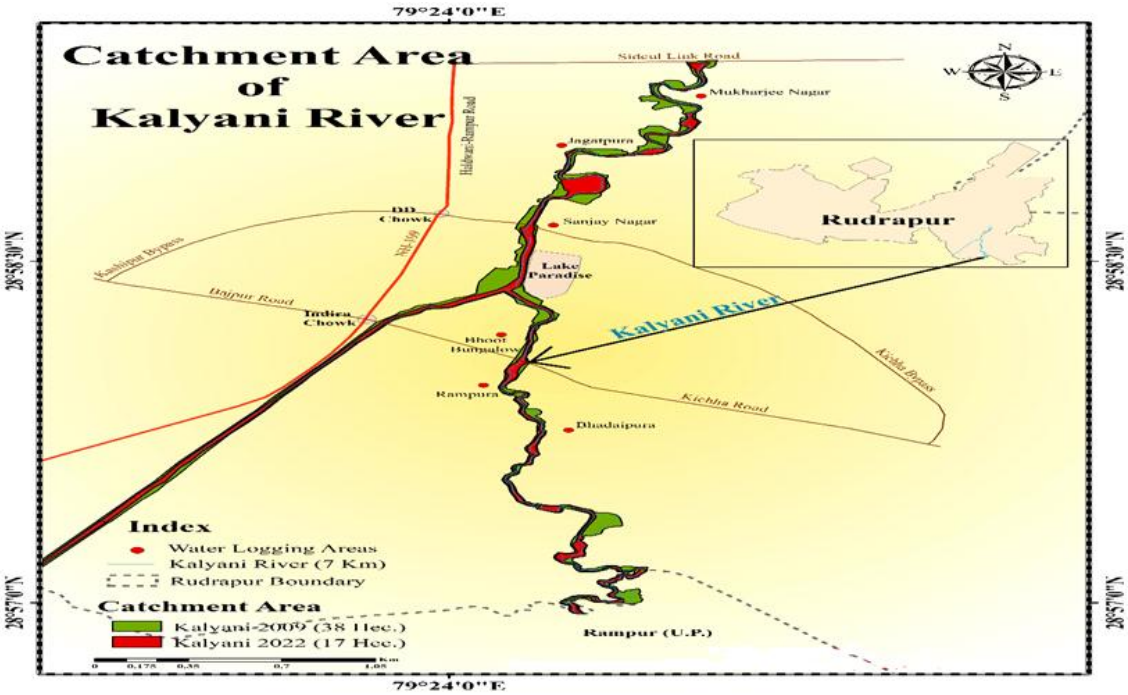

स्रोत :– जी0आई0एस0 सेल विकास भवन रुद्रपुर।

रुद्रपुर के कल्याणी नदी जलागम क्षेत्र पिछले साल में 44.7 प्रतिशत तक कम हो गया है जो क्षेत्र 2009 में 38 हैक्टेयर था वह अब घटकर 17 हैक्टेयर हो गया है।

18–19 अक्टूबर वर्ष 2021 में बाढ़ आपदा का प्रभाव :–

इस वर्षा ने पूरे उत्तराखंड को प्रभावित किया परिणामस्वरूप तीव्र वर्षा व भू–स्खलन की आपदा में 47 लोगों की मृत्यु हो गयी जिसमें से कुमाऊँ मडंण्ल के सभी 6 जनपदों–ऊधम सिंह नगर, नैनिताल, चम्पावत, अल्मोड़ा, बागेश्वर और पिथौरागड़ में भारी वर्षा और बाढ़ के कारण कुल 40 लोगों की मृत्यु हो गई। वर्ष 2021 में 18–19 अक्टूबर की बाढ़ नेऊधम सिंह नगर के रुद्रपुर शहर में विस्तृत क्षेत्रों को प्रभावित किया। भूरारानी,

शान्ति बिहार, हंस बिहार, आदर्श इन्द्रा कॉलोनी के आवासों में जल भराव की स्थिति उत्पन्न गई तथा तीन पानी डाम, बिगबाड़ा के पास एन0एच0 309 पर जल भराव हो जाने के कारण क्षतिग्रस्त होने से वाहनो की आवाजाही में अवरोध उत्पन बना रहता है। इसके अतिरिक्त बाढ़ आपदा के विनाशकारी प्रभाव के कारण रूद्रपुर में लोगों को जान–माल के नुकसान के साथ ही आर्थिक रूप से फसल व पशुधन क्षति भी हुई।

प्रभावित पशुधन :-

व्यक्तिगत सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त आंकड़ों जो कि सरणी सख्या 3 के अनुसार 59 भैंस तथा 54 गाय/बछड़े अर्थात छोटे–बड़े कुल 113 पशु बाढ़ की आपदा में मारे गए जिसमें लावारिस मृत मवेशीयों में 23 गाय और 8 भैसें कुल 31 मवेशी थे। जबकि नगर निगम रूद्रपुर के द्वारा7 मवेशी कल्याणी नदी मुख्य पुल पूर्वीरम्पुरा के पास बाढ़ में मृत मिले। अतः कुल मृत 39 गायों में से 23 लावारिस गाय तथा कुल 47 भैंस में से 8 भैंस लावारिस मृत पायी गयी। जबकि मवेशी के 31 लावारिस मृत मिले इन सभी मृत 86 पशुओं को नगर निगम द्वारा भूमि में दफनाया गया। आपदा प्रबन्ध विभाग, रुद्रपुर के अनुसार कृषि क्षेत्र में किसानों की 4200 हैक्टेयर धान की फसल 18–19 अक्टूबर वर्ष 2021 की वर्षा से क्षतिग्रस्त हो गई अर्थात एक आंकलन के अनुसार 916.65 लाख का नुकसान हुआ। बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में लोगों को आश्रय स्थलों में जाना पड़ा बिताना पड़ा। इस बाढ़ में प्रभावित जन समूह के घरों में पानी भर जाने से घरो में रखे अनाज, खान–पीने की वस्तुएं, राशन आदि नष्ट हो गया और कई परिवारों को तो भूखे रहकर गुजारा करना पड़ा।

सारणी 3–प्रभावित मवेशी

क्रमांक	क्षेत्र का नाम	गाय	भैस
1.	भूतबंगला	8	31
2.	शिवनगर	6	9
3.	ट्रांजिट कैम्प पश्चिम	2	4
4.	फुलसुंगा	5	2
5.	जगतपुरा	8	1
6.	आवास विकास पूर्वी	16	7
7.	पहाड़गंज	9	5
8.	योग	54	59

स्रोत–व्यक्तिगत सर्वेक्षण

पशुधन् क्षति

धान की क्षतिग्रस्त फसल

बाढ़ नियंत्रण एवं प्रबंधन :–

चूंकि उत्तराखण्ड बाढ़ आपदा, भूरस्खलन, बादल फअना, वनाग्नि और भूकंप जैसी आपदाओं के कारण एक संवेदनशील राज्य है। अतः प्रत्येक प्रकार की आपदा जोखिम के प्रभाव को कम करने व आपदा से बचने के लिए एक सुनिश्चित योजना तैयार और क्रियान्वयन के लिए प्रबन्धन की आवश्यकता होती है क्योंकि प्राकृतिक आपदाओं को नियंत्रण नहीं किया जा सकता परंतु इनसे होने वाले प्रभाव को कम किया जा सकता है।

अतः रूद्रपुर में बाढ़ आपदा के प्रभाव को कम करने के उपाय :–

1. आपदा व आपदा प्रबन्धन के बारे में लोगों को जागरूक करना।
2. नदी मार्ग पर प्राकृति अपवाह मार्ग को सुरक्षित करना।
3. नदी के दोनों किनारों की दीवारों से लगे तट की बाहर की ओर 35 मीटर दूर तक बने आवासों व परिवारों को अन्य स्थान पर बसाना तथा तट को खाली कराना।
4. शहर के कृत्रिम अपवाह तंत्र में सुधार करना।
5. अनियमित क्रम में निर्मित/स्थापित आवासों में सुधार करना तथा इसे लेकर आगे की योजनाओं को बनाने।
6. कूड़ा–कचरा और सीवेज को नदी में डालने से रोकने के लिए योजना बनाना।
7. निचले व संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान करना।
8. आपदा आने से पूर्व आम जन–मानस तक आपदा की सूचना समय रहते देना।

निष्कर्ष एंव सुझाव :–

वर्षा ऋतु में अत्यधिक जल जब बहुत तेजी गति से आगे बढ़ता और जब नदी में जलस्तर अधिक हो जाता तब यह जल नदी की दीवार को पार कर विस्तृत तटीय क्षेत्रों, नगरीय व ग्रामीण क्षेत्रों में फैल कर विनाशकारी प्रभाव डालता है, जिसे बाढ़ आपदा कहते है। प्राचीन समय से ही मानव सभ्यता का विकास नदी के समिपस्थ क्षेत्रों में हुआ है। अतः मानव का नदी तट व निचले क्षेत्रों में वास करने के कारण ही बाढ़ का सामना करना पड़ता है। इसके अलावा अन्य कारणों में जनसंख्या वृद्धि, नदी मार्गों मे अतिक्रमण, जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वॉर्मिंग जो बाढ़ की विभिषिका को ओर अधिक विनाशकारी बनाते है। 18–19 अक्टूबर 2021 की बाढ़ आपदा में 113 मवेशीयों की मृत्यु हो गयी साथ ही 4200 हैक्टेयर धान की फसल क्षतिग्रस्त हुई। बाढ़ आपदा से प्रभावित आवासों में 2 फिट से लेकर 8 फिट तक जल भराव हो गया जिसके कारण 2 दिन प्रभावित जन –समूह को आश्रय स्थलो, और जल में डूबे घरों की छतों पर रहने को मजबूर थे और जलभराव होने से घरों में रखा अनाज खराब हो गया।

रुद्रपुर शहर में बाढ़ आने के प्रमुख कारणों में अनियमित वर्षा व वर्षा के प्रतिरूप में परिवर्तन होने के परिणामस्वरूप भी बाढ़ की घटनाओं में वृद्धि हो रही है पहले अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक मानसून के कमजोर होने से वर्षा कम होती, परन्तु वर्तमान समय में मानसून का देर से आना तथा देर से लौटने के परिणामस्वरूप यहां अक्टूबर माह के अन्तिम सप्ताह तक वर्षा का प्रभाव स्पष्ट देखा जा रहा है, जिसके कारण मवेशीयों, धान की फसल और जन–धन को भारी वर्षा तथा बाढ़ आपदा से क्षति हो रही है। नदी मार्ग व नदी तटों में अतिक्रमण कर बनाये जा रहे मानवीय आवासों के कारण और मुख्य नदी धारा में कूड़ा–कचरा व सीवरेज डालने के कारण

भी धारा प्रवाह में अवरोध होने से बाढ़ की विभिषिका में वृद्धि हो रही है।

अतः आवश्यकता है कि पर्यावरण संरक्षण व जागरूकता कार्यक्रम स्थायी स्तर पर चलाये जाए, अधिक से अधिक वृक्ष नदी तटों पर लगाये जाये नदी व तटो को सभी प्रकार के अवरोधो और अतिक्रमण से मुक्त रखा जाए, जिससे धारा प्रवाह नदी में सुचारू रूप से बना रहे तथा बाढ़ आपदा के प्रभाव को कम किया जा सके।

संदर्भ/ग्रन्थ (Bibliography) :-

1. Asthana, A.K.L. and Asthana, Harshita (2014)- Geomorphic cloudburst and flash floods in Himalaya with the special referenceto Kedarnath area of Uttarakhand, India International Journal of Advancement in the Earth and Environmentle science, 2(2), pp.16-24
2. Khanduri,Sushil (2017)- Disaster hit Pithoragarh Districtof Uttarakhand Himalaya: Causes and implications.Int. J. Geor.Nat. Disast.,7(2), pp.1-5
3. Rautela, P. (2012)- Investigations in the Asi Ganga valleyon the aftermath of flash flood/landslide incidents in August in 2012.Technical Report, Disaster Mitigation & Management Center, Dehradun, pp.1-48
4. Pant, Vedika and Pande,Ravindera k.(2012)-Community Based Disaster Risk Analysis (CBDRD):Case Studies from Uttarakhand, India.Global Journal of Human-Science(US). pp-2
5. Khundari,Sushil.and Sajwan,K.S.(2016)-Flash flood in Himalayawith with special reference to Mori Tehsil of Uttarakhand, India.publication, IJCRM, pp10-18
6. Pankaj G. & Anand, S. (2018) - Flash Flood and its mitigation: A case study of Almora Uttarakhand. India Journal of Environmental Hazard1:104.
7. Sinha Anil (2012) "Natural disaster management in Indian" country report relif Administration inIndia. P.P. 01-23
8. Saxena Rashmi (2007) – "Monsoon floods A Recurring Hazard FOCUS Vol-01 P.P. 01-20
9. Rana Narendra Kumar and Tyogi Nutan (2008) - Assement of flood risk zone using R. S and G I S a study of Gorakhpur UP Geographical review of india Vol- 70- P.P. 304-315.
10. Bhattacharjee N and Barman. R(2009)"Flood and their Hazard Impact in Flood plain dwellers in mangalai sub division assam : A studay in Geographical.

mail id-20692suraj@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 48-54

नागार्जुन के काव्य में मानवीय चेतना के स्वर

सतीश कुमार भारद्वाज
असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी विभाग), महर्षि दयानंद राजकीय कन्या महाविद्यालय, दादूपुर रोड़ान (करनाल)
(कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र से संबद्ध)

बाबा नागार्जुन को आधुनिक हिंदी साहित्य की प्रगतिवादी काव्यधारा का अत्यंत महत्वपूर्ण कवि माना जाता है। उनके काव्य पर युगीन परिस्थितियों का गहरा प्रभाव पड़ा और उन्होंने अपने युग के यथार्थ को ही अपनी कविताओं का प्रधान विषय भी बनाया। उनके काव्य की अनेक विशेषताएँ हैं, जिनमें मानवीय चेतना की अभिव्यक्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता कही जा सकती है। उनके अनुसार मानवीय मूल्य ही हमारी वैचारिकता के केंद्र होते हैं और उनके आधार पर ही सामाजिक व्यवहार का भी निर्धारण होता है। वे न केवल अपने सामाजिक परिवेश से प्रभावित हुए थे बल्कि उन्होंने अपने काव्य में मानवीय मूल्यों की स्थापना करने का प्रयास करके समाज को प्रभावित भी किया। उन्होंने अपने जीवन के विविध अनुभवों को काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए शाश्वत जीवन–मूल्यों को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। प्रगतिशील विचारधारा ने भी उनके दृष्टिकोण को व्यापकता प्रदान की जिसकी छाप उनके काव्य पर स्पष्ट दिखाई देती है।

लोकचेतना की व्यापकता उनके साहित्य का अभिन्न अंग रही है और उन्होंने तो अपने आप को 'जनकवि' कहकर ही संबोधित किया है। उनके लिए 'बाबा' शब्द का प्रयोग जनमानस के उनके प्रति असीम स्नेह और आत्मीयता का परिचायक है। उन्होंने प्रारंभ से ही लोकजीवन के विविध पक्षों और मानवीय मूल्यों को अपने काव्य का विषय बनाया जिसके कारण उनकी गणना हिंदी साहित्य के महान कवियों में होती है। अनेक विद्वानों ने उन्हें आधुनिक युग का कबीर कहकर संबोधित किया है। प्रस्तुत आलेख में उनके काव्य में अभिव्यक्त मानवीय चेतना पर एक दृष्टि डालने का लघु प्रयास किया गया है।

मानवीय मूल्यों में प्रेम की भावना को उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त है और यह मानव जीवन का अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष भी है। इसके लिए मनुष्य सदियों से समर्पण और त्याग की भावना को महत्व देता रहा है। प्रेम मानव जीवन को संचालित करने के लिए ऊर्जा का संचार करता है और इस जीवन को जीने योग्य बनाता है। नागार्जुन ने भी अपने काव्य में प्रेम की अनेक प्रकार से अभिव्यक्ति की है, लेकिन उनके प्रेम–वर्णन की विशेषता यह है कि इसमें वासना या सुख–भोग की इच्छा के स्थान पर एक शालीनता है। उनके अनुसार प्रेम मानवीय संवेदनाओं को विस्तार देने का साधन है। उनकी कविताओं में अभावग्रस्त जीवन में प्रेम की वेदना को अत्यंत भावुकता से प्रकट किया गया है। उनकी कविता 'तन गई रीढ़' का उदाहरण देखिए–

'झुकी पीठ को मिला

किसी हथेली का स्पर्श
तन गई रीढ़।
महसूस हुई कंधों को
पीछे से,
किसी नाक की सहज उष्ण निराकुल साँसें
तन गई रीढ़।
कौंधी कहीं चितवन
रंग गए कहीं किसी के होंठ
निगाहों के जरिए जादू घुसा अंदर
तन गई रीढ़।'

उन्होंने किसी ईश्वरीय शक्ति के स्थान पर मानवीय गरिमा को ही सर्वोपरि माना है और भाग्य के स्थान पर कर्म को अधिक महत्व दिया है। उन्होंने मानव को प्रतिष्ठित करते हुए 'युगधारा' में कई कविताएं लिखी हैं। मनुष्यता के प्रति उनकी प्रतिबद्धता कई कविताओं में अभिव्यक्त हुई है। उन्होंने कविता को मानवमात्र के सुख–दुख की अभिव्यक्ति का माध्यम मानते हुए 'मनुष्य हूँ' कविता में स्पष्ट कहा है–

'कवि हूँ, सच है
इसलिए क्या
आतप–वर्षा–हिम भी मुझसे दब जाएँगे?
कवि हूँ पीछे, पहले तो मानव ही हूँ
अति मानव या लोकोत्तर किसको कहते हैं
नहीं जानता।'

उनके व्यक्तित्व के साथ–साथ उनकी कई कविताओं पर भी बौद्ध दर्शन का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। इसके प्रभाव के कारण ही उन्होंने मानव जीवन को अनित्य और दुखमय माना है। उनके काव्य में वेदना और करुणा के तत्व बौद्ध दर्शन से ही प्राप्त हुए हैं। ईश्वर के अस्तित्व और वेदना को संबोधित करती हुई उनकी कविता 'कल्पना के पुत्र हे भगवान!' का उदाहरण देखिए–

'कल्पना के पुत्र हे भगवान!
चाहिए मुझको नहीं वरदान
दे सको तो दो मुझे अभिशाप
प्रिय है जलन, प्रिय है संताप
चाहिए मुझको नहीं यह शांति
चाहिए संदेह, उलझन, भ्रांति
रहूँ मैं दिनरात ही बेचैन
आग बरसाते रहें ये नैन।'

उनकी अधिकतर कविताओं का केंद्रीय विषय मानव ही है, इसलिए स्वाभाविक रूप से मानव के दुखों

की भी उन्होंने अत्यंत स्वाभाविक और विशद व्याख्या की है। मानव जीवन की विविध अनुभूतियों की सहज अभिव्यक्ति 'वे और तुम' कविता में प्रकट हुई है। कृषक और श्रमिक वर्ग के प्रति अपना सरोकार प्रकट करते हुए उन्होंने इस कविता में कहा है :–

'वे लोहा पीट रहे हैं
तुम मन को पीट रहे हो
वे पत्तर जोड़ रहे हैं
तुम सपने जोड़ रहे हो।
उनकी घुटन ठहाकों में घुलती है
और तुम्हारी घुटन?
उनींदी घड़ियों में चुरती है।'

अन्य प्रमुख कवियों की भाँति नागार्जुन भी जातिगत भेदभाव को मानवता के लिए अभिशाप मानते थे। उन्होंने भारतीय समाज में फैली छूआछूत की भावना को मानवता का अपमान कहा था। 'करेंगे बस आज प्रायश्चित' कविता में जाति–धर्म के आधार पर लोगों को बाँटने की प्रवृत्ति पर उन्होंने करारा प्रहार किया है। 'हरिजन गाथा' कविता में भी उच्च जाति के लोगों द्वारा दलितों पर किए गए अत्याचारों और उनके विद्रोह की भावना का उन्होंने अत्यंत सटीक वर्णन किया है :–

'ऐसा तो कभी नहीं हुआ था कि
हरिजन–माताएँ अपने भ्रूणों के जनकों को
खो चुकी हों एक पैशाचिक दुष्कांड में
ऐसा तो कभी नहीं हुआ था।' ....
'दिल ने कहा– अभी जो भी शिशु
इस बस्ती में पैदा होंगे
सब के सब सूरमा बनेंगे
सब के सब ही शैदा होंगे।'

नागार्जुन ने मनुष्यों में किसी भी प्रकार के भेदभाव को अस्वीकार करते हुए समता को ही महत्व दिया है। उनके अनुसार समान व्यवहार द्वारा ही मनुष्य के दुखों को दूर किया जा सकता है जबकि भेदभाव समाज में दूरियाँ पैदा करके दुख और संताप का कारण बनता है। उन्होंने अपने काव्य में अनेक स्थानों पर करुणा भाव के साथ संपूर्ण शोषित वर्ग के प्रति अपनी संवेदना को प्रकट किया है। उनकी कविता 'हरिजन गाथा' में यही भाव प्रकट हुए हैं :–

'सब के दुख में दुखी रहेगा
सब के सुख में सुख मानेगा
समझ–बूझकर ही समता का
असली मुद्दा पहचानेगा।'

उनके काव्य पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि वे कभी भी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के समर्थक नहीं

रहे। उन्होंने पूँजीवाद को आर्थिक और सामाजिक विषमता का मूल कारण मानते हुए कहा है कि स्वतंत्रता के बाद भारत में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था स्थापित होने के कारण श्रमिकों और किसानों का शोषण निरंतर बढ़ता ही गया है। उनके श्रम और उत्पादन का पूरा लाभ पूँजीपतियों के हाथों में चला जाता है और वे अभावग्रस्त जीवन जीने के लिए मजबूर किए जाते रहे हैं। इसका कड़ा विरोध करते हुए उन्होंने अपनी कविता 'सच न बोलना' में कहा है :–

'जमींदार है, साहूकार है, बनिया है, व्यापारी है,
अंदर–अंदर विकट कसाई, बाहर खद्दरधारी हैं।
सब घुस आए, भरा पड़ा है, भारत–माता का मंदिर,
एक बार जो फिसले अगुआ, फिसल रहे हैं फिर–फिर।'

नागार्जुन वर्ग–विषमता की कड़ी आलोचना करते हुए इसे मिटाने को मानव की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण मानते थे। उन्होंने कविता को सामाजिक असमानता और शोषण के विरुद्ध एक हथियार की तरह ही प्रयोग किया है। 'नाकहीन मुखड़ा' और 'खुरदरे पैर' जैसी कविताएं गरीब और शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रकट करती हैं। उनके अनुसार देश की यह विडम्बना है कि जो खाली होने चाहिएँ थे, वे भरे हुए हैं और जो भरे हुए होने चाहिएँ थे, वे खाली हैं। वे पूँजीपतियों के स्थान पर किसान–मजदूर और श्रमिक वर्ग को सशक्त करने के पक्षधर थे। उनके अनुसार जब तक जमींदार और पूंजीपति वर्ग सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित करता रहेगा, तब तक गरीबों और पिछड़े वर्गों को न्याय नहीं मिल सकता। उनकी कविता 'लाल भवानी' में उनके इन क्रांतिकारी विचारों की झलक स्पष्ट दिखती है–

'नहीं मिलेगा साजिश करने का मौका गद्दारों को,
वतन–फ़रोशी का न मिलेगा ठेका ठेकेदारों को;
सपने में क्षमा मिलेगी नहीं कभी हत्यारों को,
एक–एक कर कैद करेगी जनता रंगे सियारों को;
नौकरशाही का यह रद्दी ढाँचा होगा चूरम–चूर,
सुजलां–सुफलां के गायेंगे गीत प्रसन्न किसान–मजूर।'

उनके अनुसार आज के स्वार्थी और भौतिकतावादी युग में मानवीय मूल्यों व नैतिकता के स्थान पर धन–वैभव को ही अधिक महत्व दिया जाता है। उन्होंने धन को जीवन के लिए आवश्यक तो माना है, लेकिन अनैतिकता पूर्वक धन संचय और लोभ की प्रवृत्ति को अनुचित माना है जो पतन का कारण भी बनती है। 'संशय में पड़ गए तथागत' कविता में उन्होंने कहा है कि अधिक बुद्धिमान समझे जाने वाले लोग ही अधिक लोभी होते हैं–

'अर्थचक्र में पिष्ट–प्रपीड़ित जन–जीवन है क्षुब्ध;
धर्मचक्र है झंडों पर ही, टिकटों पर है बुद्ध।' ....
'जितनी जिसमें बुद्धि, लोभ भी उतना ही विकराल;
घूम रहे हैं राजपथों पर डाकू अँगुलिमाल।'

उनका मानना था कि स्वतन्त्रता के उपरांत भारत के जनसाधारण ने उन्नति का जो स्वप्न सँजोया था,

वह कुछ ही वर्षों में रेत के महल की तरह ढह गया। इसका प्रमुख कारण निरंतर बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार था जिसे देखकर उनका हृदय कराह उठा था क्योंकि इसमें गरीब जनता का उत्पीड़न सम्मिलित था। भ्रष्टाचार रूपी इस रावण को देखकर उन्होंने अपना आक्रोश 'रामराज' कविता में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है–

'रामराज में अबकी रावण नंगा होकर नाचा है
सूरत शक्ल वही है भैया बदला केवल ढाँचा है
नेताओं की नीयत बदली फिर तो अपने ही हाथों
धरती माता के गालों पर कस कर पड़ा तमाचा है।'

नागार्जुन लोकतन्त्र के प्रबल समर्थक हैं और उनका मानना है कि वास्तविक लोकतन्त्र द्वारा ही मानवता का कल्याण हो सकता है। उन्होंने लोकतन्त्र का दिखावा करने की प्रवृत्ति को मानव–समाज के लिए घातक माना है। साथ ही उन्होंने यह भी चेताया है कि वर्तमान में लोकतन्त्र के नाम पर पूँजीवादी व्यवस्था का ही बोलबाला है। धनबल व बाहुबल से लोकतन्त्र का गला घोंटा जा रहा है। 'अब तो बंद करो हे देवी, यह चुनाव का प्रहसन!' कविता में इस व्यवस्था पर करारा प्रहार हुआ है–

'मतपत्रों से भरी पेटियाँ नभ में नाच रही हैं
बंदूकें उनकी सहेलियाँ जो हो साथ वही हैं
उड़ते–उड़ते फुर्तीले कर ठप्पे मार रहे हैं
मौसम चुप है, पीले पत्ते सोच विचार रहे हैं।'

उन्होंने मानवमात्र की स्वाधीनता को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हुए इसे मानव की सहज प्रवृत्ति कहा है। उनके अनुसार स्वाधीनता सबसे बढ़कर है और इसके लिए कोई भी त्याग या बलिदान किया जा सकता है। 'छापामारों का गीत' कविता में उन्होंने इसे सर्वाधिक महत्व देते हुए इसी प्रकार के भावों को अभिव्यक्ति प्रदान की है–

'हमको है आजादी प्यारी
जीवन और यौवन से बढ़कर
तन से, मन से और धन से बढ़कर
हमको है आजादी प्यारी
इस दुनिया की सभी वस्तुओं से बढ़कर
हमको है आजादी प्यारी।'

उनके अनुसार मानव जीवन के कुछ विशिष्ट उद्देश्य होते हैं और उनकी प्राप्ति के लिए कुछ मूल्यों का निर्धारण किया जाता है। बहुत कम लोग ही अपने जीवन के जुझारूपन, स्वाभिमान और आदर्शवादिता से समाज के लिए प्रेरक बन पाते हैं। हिंदी साहित्य के एक ऐसे ही विशिष्ट कवि निराला को श्रद्धांजलि देते हुए उन्होंने 'प्यासी पथराई आँखें' में अपने भावों को इस प्रकार प्रकट किया है–

'कोई आए तुमसे सीखे
वह द्वापर वाली शरशय्या की चुभन आज
आए कोई तुमसे सीखे

युग–युग का हलाहल पीना
आए कोई तुमसे सीखे, यह रक्तदान
आए कोई तुमसे सीखे, यह स्वाभिमान।'

नागार्जुन ने जब साहित्य रचना प्रारम्भ की थी, उस समय मार्क्सवाद अपने चरम पर था। इसलिए उनके जीवन पर मार्क्सवाद का भी प्रभाव रहा है, लेकिन उनकी संवेदनाएँ सदैव सर्वहारा वर्ग से जुड़ी रही हैं जिसके कारण वे जनकवि के उत्तरदायित्व का निर्वहन करने में सफल रहे हैं। उनकी कामना है कि अज्ञानता का अंधकार दूर हो और विषमता की दीवार ढह जाए ताकि समाज के सभी वर्गों के व्यक्ति सुखी हों। इसी आशय को प्रकट करती 'लेनिन तुझको लाल सलाम' कविता की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :–

'ढहे विषमता की प्राचीर
पुंछे कोटि नयनों के नीर
मिटें मनुजता के सब रोग
सहज सुखी हों सारे लोग।'

उन्होंने राजनेताओं, अवसरवादियों और भ्रष्टाचारियों पर भी व्यंग्य किया है जो अपने निजी स्वार्थों के कारण मानवता को ही भूल चुके हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात गांधी के नाम पर वोट बटोरने और अपने स्वार्थ को सिद्ध करने की प्रवृत्ति बढ़ गई थी, जिससे अवसरवादिता का बोलबाला था और मानवीय मूल्यों का पतन हो रहा था। इससे आहत होकर कवि ने गांधी जी के मार्ग पर चलने का दंभ भरने वालों की मानसिकता पर व्यंग्य करते हुए कहा है :–

'बेच–बेच कर
गांधी जी का नाम
बटोरो वोट
हिलाओ शीश, निपोड़ो खीस
बैंक बैलेन्स बढ़ाओ
राजघाट पर बापू की वेदी के आगे
अश्रु बहाओ।'

उन्होंने जहाँ अपने युग की विषमताओं और पीड़ित मानवता के यथार्थ चित्र प्रस्तुत किए हैं, वहीं आस्था के स्वरों को भी अपनी विशिष्ट शैली में प्रस्तुत किया है। उन्हें यह पूर्ण विश्वास था कि शिक्षा और जनजागृति द्वारा इन समस्याओं का समाधान अवश्य होगा। 'तुम किशोर, तुम तरुण' कविता में घोर निराशा में भी आस्था और संकल्प के स्वर दिखाई देते हैं :–

'निविड़ अविद्या से मन मूर्छित
तन जर्जर है भूख–प्यास से
व्यक्ति–व्यक्ति दुख–दैन्य ग्रस्त है
दुविधा में समुदाय पस्त है
लो मशाल, अब घर–घर को आलोकित कर दो

सेतु बनो प्रज्ञा–प्रयत्न के मध्य
शांति को सर्वमंगला हो जाने दो।'

यहाँ प्रस्तुत कुछ उदाहरणों के माध्यम से यह स्पष्ट है कि नागार्जुन ने जीवन के विविध अनुभवों को अपने रचनाकर्म में सम्मिलित करके मानवीय मूल्यों को संवेदनापूर्वक अपने काव्य में अभिव्यक्त किया। उनका काव्य तो लोकजीवन की अनुभूतियों का अथाह सागर है, जिसमें से कुछ मोती उदाहरणस्वरूप चुनने का एक लघु प्रयास यहाँ किया गया है। उनके काव्य में भारतीय जनमानस के प्रति अटूट स्नेह भरा हुआ दिखाई देता है। यह निर्विवाद रूप से माना जा सकता है कि उनके काव्य में मानवीय चेतना का स्वर ही सर्वोपरि रहा है। उनकी कविता साहित्य मर्मज्ञों के लिए जितनी विशिष्ट है उतनी ही साधारण लोगों के लिए भी महत्वपूर्ण है।

उन्होंने कविता को सामाजिक विषमताओं पर गहरी चोट करने और मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिए एक हथियार की तरह कुशलतापूर्वक प्रयोग किया। उनकी कविता में लोकचेतना और मानवीय मूल्यों को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। इसीलिए उन्हें जनवादी काव्यधारा का प्रतिनिधि कवि कहा जाता है। उन्होंने पूरे आत्मगौरव के साथ अपने आप को जनकवि कहा है, जिसका परिचय उनकी निम्नलिखित पंक्तियों में ही मिल जाता है–

'जनता मुझसे पूछ रही है, क्या बतलाऊँ?
जनकवि हूँ, मैं साफ कहूँगा, क्यों हकलाऊँ?'

उनके बारे में विश्वनाथ त्रिपाठी ने उचित ही कहा है– 'नागार्जुन को देखकर हम अनुमान कर लेते थे कि सरहपा, कबीर, तुलसी कैसे रहे होंगे। नागार्जुन सच्चे अर्थों में भारतीय संस्कृति के प्रतीक थे।' वे खरी मानवीय चेतना के कवि थे और लोक जीवन से गहरा लगाव होने के कारण ही उनकी काव्याभिव्यक्ति में सामान्य जनजीवन के दुख–दर्द पर्याप्त ईमानदारी से प्रकट हुए हैं, जिसके कारण आत्मीयता से लोगों ने उन्हें 'बाबा' कहकर संबोधित किया। उनके काव्य में जनजीवन से सीधे जुड़ने की जो प्रवृत्ति पाई जाती है, वह आधुनिक काव्य में अन्यत्र दुर्लभ है। उन्हें आधुनिक युग का कबीर कहना सर्वथा उचित है।

संदर्भ :–

1. शोभाकांत (सं.) – नागार्जुन रचनावली (खंड 1–2) (2003), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राजेश जोशी (सं.) – नागार्जुन रचना संचयन (2012), साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
3. विजय बहादुर सिंह – नागार्जुन का रचना संसार (2014), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. डॉ. ज्ञानेश दत्त हरित – जनकवि नागार्जुन (2010), निरूपमा प्रकाशन, मेरठ (उत्तर प्रदेश)
5. उत्तर प्रदेश (मासिक पत्रिका) – मार्च–मई 2011 संयुक्तांक (नागार्जुन विशेषांक), सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)
6. भाषा (द्वैमासिक पत्रिका) – मार्च–अप्रैल 2011 अंक (अंक 238), केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली।
7. अजय तिवारी – नागार्जुन की कविता (2005), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

satish.bhardwaj.iaf@gmail.com
Mobile No : 94664-79517

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 55-58

नागरिकता संशोधन अधिनियम (C.A.A.) का साम्प्रदायिक राजनीति के सन्दर्भ में आलोचनात्मक मूल्यांकन

मुकेश कुमार, शोध–छात्र
डॉ. बीना जोशी, विभागाध्यक्ष,
राजनीति विज्ञान विभाग, इन्दिरा प्रियदर्शिनी राजकीय बालिका स्नातकोत्तर वाणिज्य महाविद्यालय, हल्द्वानी
नैनीताल, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, भारत।

सारांश :–

प्रस्तुत शोध आलेख नागरिकता संशोधन अधिनियम (C.A.A.) का वर्तमान साम्प्रदायिक राजनीति के सन्दर्भ में आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है। इस लेख में नागरिकता संशोधन अधिनियम (C.A.A.) के प्रमुख तथ्यों का विवरण दिया गया है। शाहीनबाग प्रदर्शन और भड़काऊ बयानों के जरिए साम्प्रदायिक सौहार्द बिगाड़ने की कोशिश का विवरण दिया गया है। नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 के विरोध में भड़की साम्प्रदायिक हिंसा एवं उसकी वीभत्सता का वर्णन किया गया है। मामला सुप्रीम कोर्ट में होने के बावजूद विभिन्न संगठनों द्वारा सिर्फ विरोध के लिये विरोध किया गया, इस बात का भी वर्णन है। C.A.A. के विरोध में किए गये प्रदर्शन कालान्तर में देश विरोधी प्रदर्शन में तब्दील हो गए। इस प्रकार के विरोध प्रदर्शन से लोकतान्त्रिक संस्थाओं के प्रति लोगों के विश्वास में कमी आती है।

बीज शब्द :–

नागरिकता संशोधन विधेयक 2019, नागरिकता अधिनियम 1955, शाहीनबाग प्रदर्शन, दिल्ली विधानसभा चुनाव 2020, दिल्ली साम्प्रदायिक हिंसा, सुप्रीम कोर्ट।

नागरिक संशोधन अधिनियम भारत की संसद द्वारा वर्ष 2019 में पारित एक केन्द्रीय कानून है जिसके द्वारा नागरिकता अधिनियम 1955 को संशोधित करके यह व्यवस्था की गई है कि 31 दिसम्बर 2014 के पहले पाकिस्तान, बांग्ला देश एवं अफगानिस्तान से भारत आए हिन्दू, बौद्ध, सिख, जैन, पारसी एवं ईसाई को भारत की नागरिकता प्रदान की जा सकेगी। इस विधेयक में भारतीय नागरिकता प्रदान करने के लिये आवश्यक 11 वर्ष तक भारत में रहने की शर्त में भी ढील देते हुये इस अवधि को केवल 5 वर्ष तक भारत में रहने की शर्त के रूप में बदल दिया गया है। नागरिकता संशोधन विधेयक को लोक सभा ने 10 दिसम्बर 2019 को तथा राज्य सभा ने 11 दिसम्बर 2019 को पारित कर दिया था। 12 दिसम्बर 2019 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने के साथ ही यह विधेयक अधिनियम बन गया और भारत के राजपत्र में प्रकाशित होने के साथ ही 10 जनवरी 2020 से

यह अधिनियम प्रभावी हो गया है।

नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 में मुख्य तथ्यों का विवरण निम्नवत् है :-

1. नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 के अन्तर्गत तीन देशों बांग्लादेश, पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान से धर्म के आधार पर प्रताड़ित होकर भारत आने वाले 6 धर्मों यथा–हिन्दू, सिख, बौद्ध जैन, पारसी एवं ईसाई को भारत की नागरिकता प्रदान करने की व्यवस्था की गई है।
2. इस अधिनियम के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि इन तीन पड़ोसी देशों के अल्पसंख्यक यदि 5 वर्ष से भारत में रह रहे है तो वे भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकते है। पहले भारत की नागरिकता प्राप्त करने के लिये 11 वर्ष भारत में रहना अनिवार्य था।
3. जो प्रवासी 31 दिसम्बर 2014 से भारत में अवैध रूप से रह रहे है वे अब भारतीय नागरिकता हेतु आवेदन कर सकेंगे।

इस अधिनियम की विशेष बात यह है कि इसमें मुसलमान शरणार्थियों को नागरिकता नहीं प्रदान की जा सकेगी। इसके पीछे यह कारण दिया गया है कि ये तीन देश बांग्लादेश, पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान इस्लामी देश है और मुस्लिम बहुसंख्यक है।

नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 को संसद द्वारा पारित किए जाने के साथ ही साम्प्रदायिक राजनीति के एक नए किन्तु विवादित अध्याय की शुरूआत हुई। विपक्षी दलों द्वारा देश के विभिन्न भागों में इसके खिलाफ विरोध–प्रदर्शन किए गए एवं भय और भ्रम का माहौल बनाकर एक समुदाय विशेष के हितों के हनन होने की अफवाह फैलाई गई। यह अफवाह फैलाई जाने लगी कि इस नए अधिनियम से उनकी नागरिकता छीनकर उन्हे यातना शिविरों में डाल दिया जाएगा। इस अधिनियम में मुसलमानों को शामिल नहीं किया गया जिसके कारण मुसलमान भाईयों को यह बताया गया कि उनकी नागरिकता खतरे में है। ऐसी स्थिति में उन्हे सड़कों पर उतरने के लिये भड़काया गया। फलस्वरूप देश के अनेक हिस्सों में विरोध–प्रदर्शन किए गए। इसी क्रम में नई दिल्ली के शाहीनबाग में विरोध प्रदर्शन के लिये दिल्ली को नोएडा से जोड़ने वाली सड़क के रूप में सार्वजनिक स्थान को बंधक बना लिया गया।

25 दिसम्बर 2019 से शुरू होने वाले इस विरोध–प्रदर्शन की अगुवाई महिलाओं द्वारा की गई। लगभग तीन महीने पुराना यह प्रदर्शन सबसे लम्बे समय तक चलने वाला प्रदर्शन बनकर उभरा है। साम्प्रदायिक राजनीति करने वालों के लिये शाहीनबाग एक अवसर की तरह उपस्थित हुआ है। अपने भड़काऊ बयानों के जरिए सत्ता पक्ष एवं विपक्ष दोनों ने इसका राजनीतिक लाभ उठाने की भरपूर कोशिश की। ऐसे माहौल में दिल्ली विधानसभा चुनाव 2020 का आयोजन किया गया। इस चुनाव में साम्प्रदायिक राजनीति, तुष्टिकरण एवं ध्रुवीकरण का भरपूर प्रयास किया गया। दिल्ली विधानसभा चुनाव 2020 का चुनाव परिणाम आश्चर्य जनक रहा जिसमें आम आदमी पार्टी को 70 सदस्यीय विधानसभा में 62 सीटें एवं भारतीय जनता पार्टी को 08 सीटों पर सफलता प्राप्त हुई। कांग्रेस का इन चुनावों में खाता भी नहीं खुल पाया।

नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 के विरूद्ध विरोध प्रदर्शनों की चरम परिणति साम्प्रदायिक हिंसा के रूप में देखने को मिली। शाहीनबाग से शुरू हुए विरोध–प्रदर्शन जाफराबाद, चाँदबाग आदि जगहों तक फैल गए जिसमें नागरिकता संशोधन अधिनियम के विरोध एवं समर्थन में व्यापक रूप से प्रदर्शन हुए। दोनों पक्षों के टकराव

ने एक उन्मादी हिंसा को जन्म दिया फलस्वरूप साम्प्रदायिक हिंसा से 23 फरवरी से 29 फरवरी 2020 तक उत्तर–पूर्वी दिल्ली जलती रही। इस हिंसा में मरने वालो की संख्या बढ़कर 54 तक पहुँच गई जिसमें हवलदार रतनलाल एवं आई0 बी0 ऑफिसर अंकित शर्मा प्रमुख है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन :–

लोक सभा में नागरिकता संशोधन विधेयक 2019 पर हुई चर्चा में बोलते हुए केन्द्रीय गृहमन्त्री श्री अमित शाह ने सदस्यों के साथ ही देश को आश्वस्त करते हुये कहा था कि यह विधेयक नागरिकता देने वाला है, लेने वाला नहीं। स्पष्ट है कि इस अधिनियम के विरूद्ध विरोध–प्रदर्शनों के जरिए राजनीतिक दल अपनी संकीर्ण राजनीतिक आकांक्षाओं की पूर्ति करना चाहते थे। केन्द्रीय गृहमंत्री द्वारा 2014–2019 की अवधि तक पड़ोसी देशों के व्यक्तियों को नागरिकता प्रदान की गई जिसका विवरण तालिका द्वारा निम्नवत् है–

वर्ष	अफगानिस्तान	पाकिस्तान	बांग्लादेश	श्रीलंका	म्यांमार	कुल
2014	249	267	24	04	NIL	544
2015	234	263	16,14,864′	17	NIL	15,394
2016	244	670	39	35	NIL	988
2017	117	476	49	34	01	677
2018	30	4560	19	12	NIL	511
2019	40	809	25	11	NIL	885
कुल	914	2,935	15,036	113	01	18,999

स्त्रोत :– गृह मन्त्रालय की रिपोर्ट, 4 मार्च 2020, नई दिल्ली।

2015 में भारत–बांग्लादेश भूमि सीमा समझौते पर हस्ताक्षर के पश्चात 14,864 बांग्लादेशियों को नागरिकता अधिनियम 1955 की धारा–7 के अन्तर्गत नागरिकता प्रदान की गई है।

संविधान द्वारा किसी भी अधिनियम की वैधानिकता का निर्णय करने का उत्तरदायित्व सुप्रीम कोर्ट को दिया गया है। इस अधिनियम के विरूद्ध सुप्रीम कोर्ट में विभिन्न याचिकाएँ दायर की गई है जिन्हे बड़ी बेंच सुनेगी। यद्यपि विरोध–प्रदर्शन करने का अधिकार संविधान देता है किन्तु यह विरोध प्रदर्शन हिंसक नहीं होने चाहिये। शाहीनबाग प्रदर्शन के मामले में सार्वजनिक स्थान पर कब्जा करने और जनता को जान–बूझकर परेशान करने की संविधान इजाजत नहीं देता। नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 के विरोध में देश–विरोधी नारे एवं भड़काऊ बयान दिए गए प्रदर्शन वक्त गुजरने के साथ ही देश विरोधी प्रदर्शन में तब्दील हो गए।

निष्कर्षत : यह कहा जा सकता है कि किसी भी अधिनियम की वैधता तय करने का संवैधानिक उत्तरदायित्व माननीय सुप्रीम कोर्ट का है। ऐसी स्थिति में नागरिकता संशोधन अधिनियम विरोधी प्रदर्शन महज एक राजनीतिक हथकंडे से अधिक कुछ नहीं है। ऐसे प्रदर्शनों के माध्यम से अराजकता को बढ़ावा मिलता है और साथ ही संविधान की आड़ में असंवैधानिक एवं असामाजिक कार्यों को करने की एक गलत परम्परा का सूत्रपात होता है। ऐसे प्रदर्शन लोकतन्त्र एवं लोकतान्त्रिक संस्थाओं के प्रति लोगों के विश्वास को कमजोर करते है। लोकतन्त्र में प्रत्येक व्यक्ति को विरोध–प्रदर्शन का अधिकार है किन्तु सिर्फ विरोध के लिये विरोध किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भारत का राजपत्र, 12 दिसम्बर 2019, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. केन्द्रीय चुनाव आयोग, दिल्ली विधानसभा, चुनाव परिणाम 2020
3. अग्निहोत्री, डॉ. कुलदीप चन्द्र, Nagrikta Sanshodhan Adhiniyam Ke Virodh Ki Rajniti (2020)
4. गुमास्ते, विवेक, The CAA- NRC (2021)
5. महन्त, एन0जी0, Citizenship Debate over NRC & CAA Assam and the Politics of History (2021)
6. रॉय, अनुपमा, Citizenship Regimes, Law and Belonging : The CAA and the NRC (2022)
7. मुखर्जी, संचिता, Indian Citizenship Decoded : Beyond Emotional outburst and Political Predictions (2021)
8. थापर, रोमिला, On Citizenship (2021)
9. अरोड़ा, मोनिका, Delhi Riots 2020 : The Untold Story (2020)
10. सलाम, जिया उस, Shaheen Baagh : From a Protest to a Movement (2020)

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 59-67

भारत में जनांकिकीय प्रवृत्तियाँ एवं उनका प्रभाव और समाधान का परिदृश्य

(साक्षरता एवं जन्मदर के विशेष संदर्भ में)

डॉ. वेदप्रकाश
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष – भूगोल
किसान (पी० जी०) कॉलेज सिम्भावली, जनपद हापुड़ (उत्तर प्रदेश)–245207

सारांश :-

किसी भी देश के आर्थिक विकास के निर्धारक घटकों में प्रमुख घटक साक्षरता है। देश के विकास हेतु प्राकृतिक, मानवीय संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है, परन्तु अभी भी देश में विकास हेतु आवश्यक कुशल एवं प्रशिक्षित जनशक्ति का आभाव है। शिक्षा एक ऐसा आर्थिक एवं सामाजिक घटक है जो व्यक्ति की उत्पादकता में वृद्धि के साथ साथ एक सुदृढ परिवार एवं समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत की साक्षरता, यानी जनसंख्या के माध्यम से उन लोगों की संख्या को दर्शाती है जो किसी भाषा को पढ़ और लिखने में सक्षम हैं। यह एक महत्वपूर्ण प्रमाणित सांख्यिकीकीय और सामाजिक पैमाना है जो एक देश के शिक्षा और विकास के स्तर को प्रभावित करता है। भारत की साक्षरता का इतिहास यातायात करता है, जिसमें समय के साथ सुधार हुए हैं, लेकिन अभी भी देश भर में साक्षरता की अवस्था में अंतर है। साक्षरता दर जनसंख्या के लिए गणना की जाती है और इसे प्रतिशत में प्रकट किया जाता है। 2021 के आंकड़ों के अनुसार, भारत की साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत है। यह देश के बड़े जनसंख्या के कारण एक बड़ी संख्या का दर्जा है। जनसंख्या के मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता की दर अधिक है, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह दर कम होती है। साक्षरता का स्तर भारत के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में भी भिन्न है। केरला, त्रिपुरा, मिज़ोरम और दमन और दीव द्वीप सम क्षेत्रों में सबसे ऊचा साक्षरता स्तर है, जहां साक्षरता दर अधिकांशीय तौर पर 90 प्रतिशत से अधिक है।

दूसरी ओर, बिहार, राजस्थान, ज्हारखंड और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में साक्षरता दर कम होती है, जो राष्ट्रीय औसत से कम होती है। साक्षरता के माध्यम से, भारत ने विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। सरकार ने मुख्य रूप से शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किए हैं, जैसे कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, मुख्यमंत्री ग्रामीण साक्षरता अभियान, बाल पोषण योजना और सर्व शिक्षा अभियान। भारतीय सरकार के साथी संगठनों, गैर सरकारी संगठनों और गैर सरकारी संगठनों ने भी साक्षरता को बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उन्नत और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा, शिक्षायतन और शिक्षा सामग्री के पहुंच को

बढ़ाने के लिए विभिन्न पहल शुरू की गई हैं। भारत की साक्षरता दर बढते आ रही है, लेकिन इसके बावजूद अभी भी कई चुनौतियाँ हैं जो साक्षरता के क्षेत्र में उठी हुई हैं। कुछ मुख्य चुनौतियों में शामिल हैं समाजिक–आर्थिक असमानता, जाति–धर्म और लिंग पर आधारित विभेद, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की कम पहुंच, और स्त्रियों की साक्षरता में कमी। भारत सरकार और संबंधित संगठनें इन चुनौतियों का सामना करने के लिए नई पहलें ले रही हैं। समाजिक और आर्थिक असमानता को कम करने, जाति और धर्म पर आधारित विभेदों को हटाने, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की गुणवत्ता और पहुंच को बढ़ाने, और स्त्रियों के साक्षरता स्तर में सुधार करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। इसके साथ ही, तकनीकी प्रगति और डिजिटलीकरण भी साक्षरता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इंटरनेट और मोबाइल फोन के प्रयोग से शिक्षा और साक्षरता के क्षेत्र में पहुंच को बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है।

प्रस्तावना :–

किसी भी देश के आर्थिक विकास में वहाँ की जनसंख्या का महत्वपूर्ण योगदान होता है। जनसंख्या राष्ट्र की सम्पत्ति होने के साथ साथ राष्ट्र का दायित्व भी होता है किसी भी देश का आर्थिक विकास तथा सुख समृद्धि एक बड़ी सीमा तक उस देश की जनसंख्या एवं उपलब्ध प्राकृतिक ससाधनों पर निर्भर करती हैं आज विश्व जनसंख्या का आँकलन करने पर हम यह पाते है कि आज संपूर्ण विश्व की जनसंख्या में निरंतर तेजी से वृद्धि हुई हैं, जो सम्पूर्ण विश्व के लिये गंभीर चिंता का विषय है। विश्व के साथ–साथ भारत की जनसंख्या में भी विभिन्न जनगणनाओं के आंकड़े उठाकर देखने पर ज्ञात होता है कि भारत की जनसंख्या में भी 1872 प्रथम जनगणना के बाद से वर्ष 2001 तक निरंतर वृद्धि देखी गई है। वर्ष 2011 की जनगणना के परिणामों से यह खुशी अवश्य हुई है कि जहां जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर वर्ष 2001 में 2.15 प्रतिशत थी वह घटकर वर्ष 2011 में 1.76 प्रतिशत रह गई है तथा साक्षरता में वृद्धि के साथ–साथ साक्षरता की दर में भी वृद्धि हुई है। 2001 में साक्षरता 64.83 प्रतिशत थी, जो 2011 की जनगणना में बढ़कर 74.04 प्रतिशत हो गई है तथा साक्षरता स्त्री–पुरूष असमानता में 4.91 प्रतिशत की कमी आई है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से भारत में जनांकीय प्रवृत्ति एवं उनके प्रभावों को जानने का प्रयास निम्न उद्देश्यों से किया है।

शोध के उद्देश्य :–

1. भारत में जनसंख्या वृद्धि दर को ज्ञात करना?
2. शिक्षा व जनसंख्या वृद्धि की दर में संबंध को ज्ञात करना?
3. परिवार कल्याण कार्यक्रमों का जनसंख्या वृद्धि पर पड़ने वाले प्रभावों को ज्ञात करना?
4. जनसंख्या वृद्धि का खाद्यान्न उपलब्ध पर पड़ने वाले प्रभावों को ज्ञात करना।
5. जनसंख्या वृद्धि के अन्य प्रभावों को ज्ञात करना।

शोध प्रविधि :–

07 वर्ष और उससे अधिक आयु का व्यक्ति जो भाषा को समझ सकता हो उसे लिख और पढ़ सकता हो साक्षर कहलाता है प्रस्तुत शोध द्वितीयक समंकों पर आधारित है। समंकों के संकलन हेतु विगत दशकों की जनगणना जैसे 1984, 1991, 2001 एवं 2011 से संबंधित जनसंख्या पत्रिकाओं एवं विभिन्न शोध पत्रिकाओं,

समाचार पत्रों का उपयोग किया गया है। संकलित समंकों का प्रतिशत, मानचित्र एवं आरेखों द्वारा प्रस्तुति करण किया गया है।

विश्लेषण :–

शोध उद्देश्यों को ज्ञात करने के लिये द्वितीयक समंकों का उपयोग किया गया है तथा प्रस्तुत शोध पत्र में जनसंख्या वृद्धि के सामाजिक व आर्थिक पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। विशेष रूप से साक्षरता दर व जन्म दर को एक यंत्र के रूप में प्रयोग कर साक्षरता का जन्मदर पर पड़ने वाले प्रभावों का आकंलन किया गया है। साथ ही बढ़ती जनसंख्या का खाद्यान्न उपलब्धता व उत्पादकता पर पड़ने वाले प्रभावों को आंकने का प्रयास इस शोध पत्र में किया गया है जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। बढ़ती जनसंख्या किसी भी राष्ट्र के लिये चुनौती व परिसम्पति दोनों रूपों में होती है क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र के पास प्राकृतिक संसाधनों का भंडार होता है। उनका उचित दोहन उस देश की श्रम शक्ति पर निर्भर करता है। स्वस्थ जनसंख्या देश को समृद्ध एवं खुशहाल बनाने में अपना सहयोग प्रदान करती है नई विकास योजनाओं को जन्म देकर दुनिया के अन्य राष्ट्र के सामने एक मिसाल कायम कर सकती है किन्तु दूसरा पहलू यह है कि तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या राष्ट्र के आर्थिक सामाजिक पर्यावरण पर बुरा असर भी डालती है। आज भारत की जनसंख्या 2011 की जनगणनानुसार 1,2,1,0,1,93,422 करोड़ आंकलित की गई है तथा यह माना जा रहा है कि 2001–2011 के दौरान भारत की जनसंख्या में ब्राजील की जनसंख्या वाला देश होगा। तथा वर्ष 2030 में भारत विश्व की सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश होगा।

इस प्रकार भारत की जनसंख्या में होने वाली निरंतर वृद्धि चिंताजनक है, किन्तु सुखद पहलू यह भी है कि भारतीय जनसंख्या में 65 प्रतिशत् जनसंख्या युवाओं की है (अर्थात् 35 से 50 वर्ष की उम्र के लोगो की) जो देश के विकास में अपना सकारात्मक योगदान प्रदान कर सकते है। भारत की लगभग आधी आबादी ऊर्जावान है और उनकी क्षमता का भरपूर उपयोग किया जा सकता है। गुणात्मक एवं प्रतिभा सम्पन्न युवाओं का यह वर्ग भारत को विश्व का सबसे बड़ा मानव संसाधन निर्यातक एवं रोजगार आयातक दोनों ही बना रहा है।

उपरोक्त तालिका अनुसार विश्व में तेजी से बढ़ती जनसंख्या का 7 अरब को छूना जनसंख्या वृद्धि एवं जन्मदर की वृद्धि को दर्शाता है। जन्मदर में वृद्धि संभावित मानवीय क्षमता में वृद्धि का द्योतक है।

भारत में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर एवं दशक में परिवर्तन की स्थिति :–

भारत की जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती जा रही है। यह वृद्धि चिंताजनक है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 1,21,01,93,422 करोड़ थी, जो अमेरिका, इंडोनेशिया, ब्राजील, पाकिस्तान व बांग्लादेश की कुल सम्मिलित जनसंख्या के बराबर है किंतु इस जनगणना का सुनहरा पक्ष यह है कि पिछले दशक (1991–2001) की तुलना में जनसंख्या की वृद्धि दर में गिरावट दर्ज की गई है। वर्ष 1991–2001 में जहां भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर 21.15 प्रतिशत थी वह वर्ष 2011 के दौरान घटकर मात्र 17.64 प्रतिशत रह गई है। भारत में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर को विभिन्न जनगणनानुसार निम्न तालिका द्वारा व्यक्त किया गया है।

तालिका –1

क्रम संख्या	वर्ष	जनसंख्या (करोड़ों में)	प्रतिदशक वृद्धि दर (%)	औसत वार्षिक घातक वृद्धि दर (%)
1	1901	23.83	–	–
2	1911	25.20	+5.75	0.56
3	1921	25.13	––0.31	–0.3
4	1931	27.89	+11.00	1.04
5	1941	31.86	+14.22	1.33
6	1951	36.10	+13.31	1.25
7	1961	43.92	+21.64	1.96
8	1971	54.81	+24.80	2.20
9	1981	68.33	+24.66	2.22
10	1991	84.64	+23.87	2.16
11	2001	102.87	+21.54	1.97
12	2011	121.01	+17.64	1.64

सारणी व दण्ड चित्र के अवलोकन के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय जनांकिकीय इतिहास को चार कालों में विभाजित किया जा सकता है :–

(1) स्थायी जनसंख्याकाल।

(2) धीमी गति से अनवरत् बढ़ने वाली जनसंख्या का काल।

(3) विस्फोट गति से बढ़ने वाली जनसंख्या का काल।

(4) जनसंख्या वृद्धि दर में गिरावट।

1. वर्ष 1891 से 1921 की प्रथम अवस्था में भारत की जनसंख्या लगभग स्थिर थी।
2. वर्ष 1921 से भारतीय जनसंख्या में वृद्धि एक महत्वपूर्ण विभाजक है, क्योंकि 1921 के बाढ के काल से भारत की जनसंख्या में अनवरत् वृद्धि जारी है।
3. वर्ष 1921 से 1951 के बीच भारत की जनसंख्या में वृद्धि की दर अनवरत् धीमी या मध्यम रही है।
4. वर्ष 1951 के बाद (वर्ष 1961 व 1971) के दशक में भारतीय जनसंख्या में तीव्र वृद्धि दर रही। यह वृद्धि दर 24.8 प्रतिशत् रही है।

वर्ष 2001–2011 के दशक में भारत की जनसंख्या भले ही 18.70 करोड़ की दर से बढ़कर 121 करोड़ तक पहुंच गई हो, लेकिन नौ दशक में पहली बार देश की जनसंख्या वृद्धि दर में गिरावट दर्ज की गई है।

भारत में साक्षरता :–

जनसंख्या के संबंध में जिन आधारों पर सूचना एकत्रित की जाती है उसमें साक्षरता सबसे महत्वपूर्ण है। किसी भी देश में वहां की कुशल एवं साक्षर मानवीय शक्ति अर्थव्यवस्था को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। साक्षरता एवं देश के सामाजिक आर्थिक विकास में धनात्मक सह सम्बंध पाया जाता है। साक्षरता की दृष्टि से

भारत की स्थिति अभी भी अत्याधिक संतोष प्रद नहीं है। यद्यपि स्वतंत्रता के पश्चात् इस दिशा में व्यापक कार्यक्रम चलाये गये है। फिर भी यहां साक्षरता अनुपात विकासशीन देशों की अपेक्षा कम है 1901 से लगातार साक्षरता अनुपात में वृद्धि हो रही है। 1901 में कुल जनसंख्या था केवल 5.35 प्रतिशत भाग ही साक्षरता जो बढ़ते बढ़ते 2011 में 74.4 प्रतिशत हो गया है। विभिन्न जनगणनाओं के आंकड़ो को देखने से स्पष्ट होता है कि भारत में महिला साक्षरता की दर में भी निरंतर वृद्धि हुई है तथा वर्ष 2011 की जनगणना में महिला साक्षरता की दर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। 2011 में पुरूष साक्षरता का प्रतिशत 82.14 तथा महिला साक्षरता का प्रतिशत 65.46 हो गया है। स्वतंत्रता के बाद पहली जनगणना में कुल 18 प्रतिशत की साक्षरता की तुलना में 2011 में भारत की साक्षरता का प्रतिशत 74 तक जा पहुंचा है। पुरूषों की उपलब्धि 27 से 82 प्रतिशत तक रही।

शीर्ष पांच साक्षरता दर वाले राज्य और केंद्र शासित प्रदेश

तालिका –2

क्रम संख्या	राज्य	प्रतिशत	केंद्र शासित प्रदेश	प्रतिशत
1	केरल	93.91	लक्षद्वीप	92.91
2	मिजोरम	91.58	दमन दीव	87.07
3	तिरूपुरा	87.75	पांडुचेरी	86.55
4	गोवा	87.40	चंडीगढ़	86.43
5	हिमाचल प्रदेश	83.78	दिल्ली	86.34

भारत में महिला साक्षरता :–

महिला साक्षरता का प्रतिशत 1951 में मात्र 8.86 प्रतिशत था जो वर्ष 2011 की जनगणना में बढ़कर 65. 46 प्रतिशत पहुंच गया है। आज प्रत्येक 3 में से 2 महिलायें साक्षर है। स्त्री–पुरूष साक्षरता अनुपात की यह खाई 1971 से कम होना शुरू हो गई थी। 2001 की तुलना में 2011 में पुरूष साक्षरता दर में 6 प्रतिशत् की वृद्धि दर्ज की गई, जबकि महिला साक्षरता दर में 12 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई। जो एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। जिसे निम्न मानचित्र द्वारा दर्शाया गया है।

न्यूनतम तीन साक्षरता दर वाले राज्य और केंद्र शासित प्रदेश

तालिका –3

क्रम संख्या	राज्य	प्रतिशत	केंद्र शासित प्रदेश	प्रतिशत
1	बिहार	63.82	दादर एवं नगर हवेली	77.65
2	अरुणाचल प्रदेश	66.95	दवा एवं निकोबार द्वीप	86.27
3	राजस्थान	67.06	दिल्ली	86.34

साक्षरता दर एवं जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर :–

साक्षरता व जनसंख्या वृद्धि का घनिष्ठ संबंध है। शिक्षा से सोचने समझने का दायरा बढ़ता है। शिक्षित स्त्रियाँ अपने परिवार के आकार को सीमित रखना चाहती है वह बच्चों के लालन–पालन में बार–बार नहीं फंसना चाहती। उनकी इस अनिच्छा का जन्म दर पर प्रभाव पड़ता है तथा परिवार नियोजन के साधनों को अपनाने में मदद मिलती है। अतः भारत के उन राज्यों में जिनमें साक्षरता का प्रतिशत अधिक है। जनसंख्या की दशकीय

वृद्धि दर में कमी देखी गई है। विशेष रूप से सर्वाधिक महिला साक्षरता वाले राज्यों में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर कम देखी गई है। केरल राज्य इसका सबसे श्रेष्ठ उदाहरण है। वहां स्त्री साक्षरता का प्रतिशत अधिक होने से जन्म दर में भी कमी देखी गई है। भारत में स्त्री साक्षरता दर केरल में सबसे अधिक 91.98 प्रतिशत है, गोवा में 63.15 प्रतिशत व त्रिपुरा 83.15 प्रतिशत है। इन राज्यों में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर 4.26, 8.17 व 14.75 है। इसके विपरीत सबसे कम महिला साक्षरता वाले राज्यों में राजस्थान में साक्षरता का 52.66 प्रतिशत, बिहार में 55.33 प्रतिशत, झारखंड 56.21 प्रतिशत व जम्मू कश्मीर 58.01 प्रतिशत है। इन राज्य में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर अधिक देखी गई है।

साक्षरता दर में प्रगति

तालिका – 4

क्रम संख्या	वर्ष	व्यक्ति	पुरुष	स्त्री
1	1951	18.33	27.16	8.86
2	1961	28.30	40.40	15.35
3	1971	34.45	45.96	21.97
4	1981	43.57	56.38	29.76
5	1991	52.21	64.13	39.29
6	2001	64.84	75.26	53.67
7	2011	74.04	82.14	65.46

1951 से 2011 तक साक्षरता दर में भारत ने अच्छी प्रगति की है। भारत ने विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षा के क्षेत्र में बड़ी उन्नति की है। 1951 में भारत की साक्षरता दर 18.3 प्रतिशत थी। इसके बाद से स्कूलों और कॉलेजों की संख्या में वृद्धि हुई और साक्षरता दर भी बढ़ी। 1981 तक साक्षरता दर 43.6 प्रतिशत तक पहुंच गई थी। उसके बाद से भारत ने लगातार साक्षरता दर में सुधार किया। 2011 तक साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत हो गई थी। भारत के साक्षरता के स्तर में महिलाओं के लिए विशेष ध्यान दिया जाता रहा है। भारत में महिलाओं की साक्षरता दर 1951 में सिर्फ 8.9 प्रतिशत थी। 2011 तक साक्षरता दर महिलाओं के लिए 65.46 प्रतिशत तक पहुंच गई थी। इस तरह, भारत ने साक्षरता के क्षेत्र में बड़ी उन्नति की है और उसने अपने साक्षरता दर में सुधार करते हुए देश के आर्थिक और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अतः स्पष्ट है कि साक्षरता की कमी के कारण निरक्षर लोग परिवार कल्याण जैसे सामाजिक दायित्व के प्रति सचेत नहीं होते। खासकर स्त्रियों की शिक्षा/साक्षरता उन्हें छोटे परिवार के प्रति जागरूक बनाती है। वे विवाह भी जल्दी में नहीं करना चाहती है तथा परिवार को नियोजित करने हेतु सचेत रहती है। यही कारण है कि केरल जैसे शिक्षित राज्य में महिलायें केवल मात्र 2 बच्चों को ही जन्म देना चाहती है, जबकि पिछड़े राज्यों में, जैसे बिहार जैसे कम साक्षरता वाले राज्य में महिलायें 4 या अधिक बच्चों को जनम देती है। अतः साक्षरता का जन्म दर से सीधा संबंध है। तमाम जनजातियों व अनुसूचित जातियों में साक्षरता का जन्म दर से सीधा संबंध है। तमाम जनजातियों व अनुसूचित जातियों में साक्षरता का प्रतिशत कम होने से उनके परिवार का आकार बड़ा देखने को मिलता है। भारत में जिन राज्यों में शिक्षा का प्रतिशत अधिक है वहाँ पर जनसंख्या की प्रति वर्ष की

प्रजनन दर में कमी देखी गई हैं जैसे केरल, गोवा, त्रिपुरा राज्यों में प्रजनन दर में वर्ष 2010 की तुलना में वर्ष 2013 में और भी कमी आई है। साथ ही राजस्थान, झारखंड व उत्तर प्रदेश राज्यों की जनसंख्या की प्रजनन दर में भी कमी आई है। इसका कारण यह है कि भारत में 12 वीं पंचवर्षीय योजना में प्रजनन एवं प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के एक व्यापक ढांचे के तहत् परिवार कल्याण कार्यक्रम के प्रतिस्थापन, विवाह एवं मातृत्व की उम्र बढ़ाकर बच्चों के जन्म में अन्तर का असर 2011 की जनगणना में परिलक्षित हुआ। वर्ष 1911–1921 के अपवाद को छोड़कर भारत में जनगणना के इतिहास में 2001–2011 का दशक वह पहला दशक है जब 10 साल की अवधि में जनसंख्या में निर्वाध वृद्धि पिछले दशक से कम रही है। बिहार, राजस्थान झारखंड, उत्तर प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि दर में प्रर्याप्त कमी आई है। इसके पूर्व इन राज्यों में प्रजनन दर ऊँची रही है। इन राज्यों में 20 से 24 वर्ष के समूह की महिलाओं की शादी 18 वर्ष की उम्र में हो गई। इन महिलाओं का प्रतिशत 47.4 है। बिहार में यह प्रतिशत 69 है व झारखंड में 63.3 प्रतिशत है। इस प्रकार परिवार कल्याण कार्यक्रम एवं प्रजनन क्षमता का सीधा संबंध है।

जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभाव :-

भारत में तेजी से बढ़ती जनसंख्या के सामाजिक, आर्थिक व पर्यावरणीय प्रभावों को जानना भी बहुत जरूरी है। भारत में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या ने भारत की जनता के लिये संसाधनों की पूर्ति व प्रबंध की भी बहुत बड़ी चुनौती पैदा की है। जनसंख्या वृद्धि ने अनेकानेक आर्थिक व सामाजिक समस्याओं को जन्म दिया है। देश से गरीबी हटाने की तमाम योजनायें जनसंख्या वृद्धि के सामने बौनी साबित हुई है। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार देश की 42 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करती है। बढ़ती जनसंख्या ने बेरोजगारी की गंभीर समस्या उत्पन्न की है जिसके परिणाम 7.8 प्रतिशत बेरोजगारी दर के रूप में सामने है। साथ ही बढ़ती जनसंख्या के कारण उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र दोहन हुआ है। भूमि की उर्वराशक्ति, खनिज सम्पदा, भूमिगतजल ऐसे संसाधन है जिसकी भरपाई मुश्किल है। कृषि जोत का सिमटता आकार हमारे उत्पादन को प्रभावित कर रहा है। जिससे खाद्यान्न संकट की स्थिति पैदा हुई है सन् 1980–81 में जहां प्रतिव्यक्ति कृषि जोत 0.27 हेक्टेयर थी वही सन् 2004–2005 तक घटकर 0.17 हेक्टेयर हो गई तथा प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धता में कमी आई है। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या विभाग व खाद्य एवं कृषि संगठन की रिपोर्ट बताती है कि वर्ष 1950 में विश्व की आबादी 2 अरब 54 करोड़ थी। तब खाद्यान्न उपलब्ध का 63 करोड़ 10 लाख थी प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता 348 कि.ग्रा. प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष थी। लेकिन 1990 के बाद विश्व की कुल खाद्यान्न उपलब्धता 334 कि.ग्रा. प्रतिव्यक्ति रह गई। जिसका परिणाम यह है कि बड़ी संख्या में लोग कुपोषण का शिकार हुये है भारत में भूख व कुपोषण से प्रभावित लोगों की संख्या विश्व में सर्वाधिक 23 करोड़ 30 लाख है।

एक रिपोर्ट के अनुसार 2007 में विश्व का कुल खाद्यान्न उत्पादन बढ़ा है लेकिन विश्व की आबादी 6 अरब 60 करोड़ हो जाने के कारण प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता महज 314 कि.ग्रा. रह गई है। जनघनत्व की दृष्टि से देखा जाये तो वर्ष 2005 में जनसंख्या घनत्व 34 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि.मी. था जो 2025 में 440 हो जाएगा। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के सर्वे के अनुसार देश की दो तिहाई शहरी आबादी को 2030 तक शुद्ध पेयजल प्राप्त न हो सकेगा। वर्तमान में पानी की प्रति व्यक्ति उपलब्धता 1525 घनमीटर है वहीं 2030 में यह उपलब्धता मात्र 1060 घनमीटर रह जाएगी। जंगलों को विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये काटा जा रहा है जिससे

करीब एक प्रतिशत क्षेत्रफल हर वर्ष रेगिस्तान में तब्दील हो रहा है। इस प्रकार जनसंख्या का बढ़ता दबाव आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय दृष्टि से देश को गहरी क्षति पहुंचा रहा है।

सुझाव :–

1. भारत वह पहला देश है जिसने जनसंख्या नियंत्रण की नीति अपनाई है। अतः जनसंख्या नियंत्रण हेतु कठोर व प्रभावी कदम सरकार द्वारा उठाये जाने चाहिये तथा चीन (1979) की तरह भारत में भी एक संतान की नीति को अपनाया जाना चाहिये।
2. शिक्षा जो विकास की कुंजी है, वह महज मात्रात्मक एवं संख्या का सूचक मात्र न रह जाये बल्कि गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा का विकास होना चाहिए तथा महिला साक्षरता की दर में वृद्धि हेतु और प्रभावी कदम उठाये जाने चाहिये।
3. महिलाओं को आर्थिक दृष्टि से अधिकार संपन्न बनाया जाना चाहिये।
4. परिवार कल्याण कार्यक्रमों को अपनाने हेतु प्रभावी कदम उठाये जाने चाहिये तथा ऐसे कार्यक्रमों व नीतियों का निर्माण करना चाहिये जो लोगों को सीमित परिवार रखने के लिये प्रोत्साहित कर सकें।
5. विद्यार्थी जीवन में जनसंख्या शिक्षा अनिवार्य की जानी चाहिये ताकि विद्यार्थी यह समझ सके कि परिवार का आकार छोटा होना चाहिये। परिवार का आकार छोटा होगा, जनसंख्या कम होगी तो प्रत्येक व्यकित को अपने जीवन स्तर को बनाये रखने में सहायता मिलेगी।
6. समय–समय पर जनसंख्या शिक्षा व जागरूकता हेतु संगोष्ठीयों व सभाओं का आयोजन किया जाना चाहिये तथा बढ़ती जनसंख्या के परिवार, समाज व राष्ट्र पर पड़ने वाले प्रभाव की व्याख्या की जानी चाहिये।
7. परिवार कल्याण कार्यक्रमों का समय–समय पर प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिये तथा इनके उपयोग हेतु जन मानस को तैयार किया जाना चाहिए।
8. जनसंख्या के दुश्चक्र को तोड़ने में महिलाओं की अहम् भूमिका को स्वीकार जाना चाहिये। विकासशील देशों में महिलाओं को जितनी मदद मिल रही है उससे कहीं ज्यादा मदद की जाए ताकि जिन प्राकृतिक संसाधनों पर वे निर्भर है उनका वे संरक्षण कर सकें और अपने स्वास्थ्य व शिक्षा में सुधार ला सकें जो उनकों छोटे और अधिक स्वस्थ्य परिवारों के लिये प्रेरित करे।
9. ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार किया जाना चाहिये।
10. 'जितने मुँह उतने हाथ' वाले जन–मानस को बदलना होगा तथा लोगों में नई सोच का विकास करना होगा।
11. 2010 तक देश में लगभग 20 हजार स्वास्थ्य उपकेन्द्रों की कमी ग्रामीण क्षेत्रों मे ंदेखी गई साथ ही प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में 2433 केन्द्रों पर चिकित्सकों का अभाव पाया गया। इन केन्द्रों पर 25 प्रतिशत् नर्स एवं सहायकों की आवश्यकता है। अतः इन कमियों को दूर करके ही जनसंख्या नियंत्रण को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सकता है।

रिपोर्ट से स्पष्ट है कि भारत के केरल और श्रीलंका के कुछ भागों में ऐसे समुदायों ने उिन्हें बेहतर प्रौद्योगिकी स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा सुलभ है, संसाधनो का संरक्षण करने और सक्षम ग्रामीण समाज का निर्माण

करने के लिये इन साधनों का अच्छा प्रयोग किया है। इन समुदायों की विशेषता है स्त्री–पुरूष असमानता में कमी, बिलंवित विवाह, निम्न प्रजनन दर और कम आय के बावजूद जनसंख्या वृद्धि की कम रफ्तार देखी गई है।

निष्कर्ष :–

भारत में विगत दशकों की तुलना में साक्षरता स्तर में वृद्धि हुई है। भारत देश में साक्षरता का प्रतिशत उन राज्यों में अधिक है जहा औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में तीव्र वृद्धि हुई है। मध्यम जनसंख्या साक्षरता का प्रतिशत भारत के उन राज्यों में है जहां औद्योगीकरण की ओर रूझान बढ़ाया है। जिससे शिक्षा के प्रति रूची उत्पन्न हुई तथा साक्षरता को प्रोत्साहन मिला देश में निम्न साक्षरता का क्षेत्र आदिवासी जनजातियों के निवास स्थल है जो आदमी शब्द का से परे वनाचंल क्षेत्र है वहां विद्यालयों की कमी है। देश के कुछ राज्यों में नक्सलवाद भी समस्या है जिससे साक्षरता प्रभावित हुई है फिर भी देश में साक्षरता दर में वृद्धि से ही कुशल जनशक्ति के निर्माण हेतु शिक्षण एवं प्रशिक्षण कार्यशालाओं एवं संस्थाओं का विकास हो रहा है जिससे नागरिकों में साक्षरता जागरूकता की भावना का संचार हो रहा है।

संदर्भ सूची :–

1. देवेन्द्र उपाध्याय, जनसंख्या विस्फोट सं. – कल्याणी शिक्षा परिषद् दरियागंज, नई दिल्ली – 110002
2. डी.एस. बघेल, जनांकिकीय– विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, 110007
3. सम – सामयिकी वार्षिकी – 2012 अहरिअंत मीडिया प्रोमोटर्स, कांलिदी, टी.पी. नगर, मेरठ–250002
4. योजना – 2011 भारत की जनगणना, 538 योजना भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली–110001
5. रोजगार और निर्माण भोपाल दिनांक 08.07.2013 से 14.07.2013

डॉ. वेदप्रकाश, एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष – भूगोल

किसान (पी० जी०) कॉलेज सिम्भावली, जनपद हापुड़ (उत्तर प्रदेश)–245207

मो० न० 9411611360, 9412427184

Email : 2011vaad@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 68-69

शोध प्रविधि

डॉ. इन्दुबाला गढ़वी
असिसटेंट प्रोफेसर (हिन्दी), एस.बी.जी.ए.सी. कॉलेज, सोजित्रा (गुजरात), पिन ३८७२४०

शोध :-

अंग्रेजी शब्द रिसर्च का पर्याय हैं परंतु इसका अर्थ पुनः खोज नहीं है बल्कि गहन खोज है। हम कुछ नया खोजकर इस परंपरा को आगे बढ़ाते हैं। अर्थ में शोध या अनुसन्धान (Research) किसी भी क्षेत्र में 'ज्ञान की खोज करना' या 'विधिवत गवेषणा' करना होता है। वैज्ञानिक अनुसन्धान में वैज्ञानिक विधि का सहारा लेते हुए जिज्ञासा का समाधान करने की कोशिश की जाती है। नवीन वस्तुओं की खोज और पुरानी वस्तुओं एवं सिद्धान्तों का पुनः परीक्षण करना, जिससे कि नए तथ्य प्राप्त हो सकें, उसे शोध कहते हैं। शोध के अंतर्गत बोधपूर्वक प्रयत्न से तथ्यों का संकलन कर सूक्ष्मग्राही एवं विवेचक बुद्धि से उसका अवलोकन–विश्लेषण करके नए तथ्यों या सिद्धांतों का उद्घाटन किया जाता है। शोध का परिचय देते हुए डॉ. नगेन्द्र लिखते हैं कि– 'अनुसंधान का अर्थ है परिपृच्छा, परीक्षण, समीक्षण आदि। संधान का अर्थ है दिशा विशेष में प्रवृत्त करना या होना और अनु का अर्थ है पीछे, इस प्रकार अनुसंधान का अर्थ हुआ – किसी लक्ष्य को सामने रखकर दिशा विशेष में बढ़ना – पश्चाद् गमन अर्थात् किसी तथ्य की प्राप्ति के लिए परिपृच्छा, परीक्षण आदि करना।'[१]

अध्ययन से दीक्षित होकर शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करते हुए शिक्षा में या अपने शैक्षिक विषय में कुछ जोड़ने की क्रिया अनुसंधान कहलाती है। पी–एच.डी./ डी.फिल या डी.लिट्/डी.एस–सी. जैसी शोध उपाधियाँ इसी उपलब्धि के लिए दी जाती हैं। इनमें अध्येता से अपने शोध से ज्ञान के कुछ नए तथ्य या आयाम उद्घाटित करने की अपेक्षा की जाती है। ज्ञान की किसी भी शाखा में नवीन तथ्यों की खोज के लिए सावधानीपूर्वक किए गए अन्वेषण या जांच–पड़ताल को शोध की संज्ञा दी जाती है। (एडवांस्ड लर्नर डिक्शनरी ऑफ करेंट इंग्लिश) अनुसंधान को विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है।

रैडमैन और मोरी ने अपनी पुस्तक "द रोमांस ऑफ रिसर्च" में शोध का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि नवीन ज्ञान की प्राप्ति के व्यवस्थित प्रयत्न को हम शोध कहते हैं।

लुण्डबर्ग ने शोध को परिभाषित करते हुए लिखा है कि अवलोकित सामग्री का संभावित वर्गीकरण, साधारणीकरण एवं सत्यापन करते हुए पर्याप्त कर्म विषयक और व्यवस्थित पद्धति है।

महत्व :-

शोध जिज्ञासा मूल प्रवृत्ति (Curiosity Instinct) की संतुष्टि करता है। शोध से व्यावहारिक समस्याओं का समाधान होता है। शोध पूर्वाग्रहों के निदान और निवारण में सहायक है। शोध अनेक नवीन कार्यविधियों व उत्पादों

को विकसित करता है। शोध ज्ञान के विविध पक्षों में गहनता और सूक्ष्मता लाता है। शोध से व्यक्ति का बौद्धिक विकास होता हैं, अनुसंधान हमारी आर्थिक प्रणाली में लगभग सभी सरकारी नीतियों के लिए आधार प्रदान करता है। अनुसंधान के माध्यम से हम वैकल्पिक नीतियों पर विचार और इन विकल्पों में से प्रत्येक के परिणामों की जांच कर सकते हैं। अनुसंधान, सामाजिक रिश्तों का अध्ययन करने में सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण है। शोध सामाजिक विकास में सहायक है, यह एक तरह का औपचारिक प्रशिक्षण है। अनुसंधान नए सिद्धांत का सामान्यीकरण करने के लिए हो सकता है। अनुसंधान नई शैली और रचनात्मकता के विकास के लिए हो सकता है।

शोध के प्रकार :–

संदर्भ प्रकारों का निर्धारण उनके कार्यों के आधार पर किया गया है। जैसे :–

(१) मात्रात्मक अनुसंधान :– मात्रात्मक अनुसंधान शोध का एक प्रकार है। यह एक रेखीय अनुसंधान है। इसके अंतर्गत संख्यात्मक तथ्यों की संकल्पना की जाती है। इसमें निगमनात्मक तर्क पद्धति का प्रयोग किया जाता है।

(२) गुणात्मक अनुसंधान :– शोध के इस प्रकार में निर्णय के न केवल क्या, कहां, कब की छानबीन की जाती है, बल्कि क्यों और कैसे जैसे प्रश्नों की भी खोज की जाती है।

(३) विवरणात्मक अनुसंधान :– इस प्रकार के शोध के अंतर्गत अध्ययन के समय जो परिस्थितियाँ हैं उनका उसी रूप में शोधार्थी द्वारा प्रस्तुतीकरण किया जाता है। इसमें तथ्यों का संकलन महत्वपूर्ण होता है।

(४) विश्लेषणात्मक अनुसंधान :– विश्लेषणात्मक शोध (Analytical Research) : शोधकर्ता का चरों (variables) पर नियंत्रण होता है। शोधकर्ता पहले से उपलब्ध सूचनाओं व तथ्यों का अध्ययन करता है। इस प्रकार के अनुसंधान का परिचय देते हुए 'शोध प्रविधि' नामक पुस्तक में डॉ. विनय मोहन शर्मा लिखते हैं कि– 'व्याख्यात्मक या वर्णनात्मक शोध में मानव–जीवन की सभी वर्तमान समस्याओं पर, चाहे वे साहित्य, समाज–विज्ञान या शुद्ध विज्ञान से सम्बन्ध रखती हों, अनुसन्धान किया जाता है।'[३]

संदर्भ :–

1. ऐतिहासिक अनुसंधान
   डॉ. नगेन्द्र आस्था के चरण
   दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस. पृ. 49.
2. मात्रात्मक अनुसंधान
   विनय मोहन शर्मा (1973). शोध–प्रविधि (PDF) (प्रथम संस्करण)
   नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस. पृ. 11
3. बोहल शोध मंजूषा, शोध प्रविधि विशेषांक,
   सम्पादक डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 70-74

समकालीन शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त द्रोणाचार्य

(शंकर शेष के नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के विशेष सन्दर्भ में)

वर्षा

शोधार्थी (पीएच.डी. हिंदी), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

नाट्य विधा दृश्यात्मक, पठनीय और श्रव्यात्मक होने के कारण समस्त जनता तक आसानी से पहुँच जाती है। नाटक के किरदार देश के प्रत्येक व्यक्ति के पास उनकी भाषा में सम्वाद करते नजर आते हैं, जिसके कारण नाटक और नाटककार जनता के दिलोदिमाग में छा जाते हैं। इसी नाट्य लेखन परम्परा की प्रमुख कड़ी के रूप में डॉ. शंकर शेष के नाटकों ने भी अपना अलग स्थान बना लिया है। वैसे तो शंकर शेष की समस्त रचनाएँ पाठक वर्ग की जुबां पर चढ़ी रही हैं। 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक ऐसी रचना रही है जो आज भी कहीं न कहीं, किसी न किसी मंच पर खेले जाने के कारण पाठक को पौराणिक कथाओं के चरित्रों से तो अवगत करवाती ही हैं, और साथ ही साथ वर्तमान समय में भी वह चरित्र किस प्रकार आज भी हरेक के अंदर विद्यमान हैं व वह चरित्र अपने आप से किस प्रकार लड़ रहे हैं यह भी दर्शाती हैं। 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के मंचन के विषय में 15 मई 1980 के 'अभिनव रू अंतर्देशीय पत्र' में लिखा गया है :–

"एक और द्रोणाचार्य' की मंचीय सफलताओं से उत्साहित हो कर अनेक रंगकर्मियों–संस्थाओं ने आगे कदम बढ़ाया। अविनंदा के निर्देशन में देहरादून की सक्रिय नाट्य संस्था 'जागृति' ने इस बहुचर्चित नाटक का आठवाँ प्रदर्शन श्रीराम सेंटर, नई दिल्ली के खचाखच भरे प्रेक्षागृह में मई 1980 को दर्शकों की भरपूर तालियों के बीच प्रस्तुत किया।"[1]

शंकर शेष द्वारा 1977 में रचित 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक आज भी प्रासंगिकता है, और आज भी जनता को यह नाटक भाता है। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि आज भी इस नाटक का अनेक रंगशालाओं में मंचन होता है, व उतने ही उत्साह के साथ दर्शकों द्वारा देखा भी जाता है। 2 अंकों और 11 दृश्यों में सिमटे इस नाटक में 26 पात्र हैं, जिसमें से 11 पौराणिक, 11 आधुनिक और चार अप्रत्यक्ष पात्र हैं। शंकर शेष द्वारा रचित 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक आधुनिक शिक्षा व्यवस्था, शिक्षक की मनोदशा व किस प्रकार सत्ता के समक्ष एक शिक्षक नग्न हाथ खड़ा हो जाता है इन मुद्दों पर प्रकाश डालता है। जो शिक्षक विद्यार्थी को नैतिक शिक्षा का पाठ पढ़ाता है उस नैतिक शिक्षा को परिवार की भूख, चरित्र पर लगने वाले आरोपों के डर व सत्ता के लोभ के चलते स्वयं वही शिक्षक उन नैतिक मूल्यों को अपने पैरों से कुचल कर आगे बढ़ जाता है। शंकर शेष इस नाटक में आधुनिक युग की व्यवस्था को प्रोफेसर अरविन्द के द्वारा और पौराणिक शिक्षा व्यवस्था और समाज के दकियानूसी सोच आदि आत्याचारों को ऋषि द्रोणाचार्य के प्रसंग द्वारा दर्शाते हैं। 'एक और द्रोणाचार्य'

नाटक के विषय में डॉ. जयदेव तनेजा का कथन है :–

"महाभारत की एक समानांतर कथा के माध्यम से आज के तथाकथित बुद्धिजीवी के समझौतावादी चरित्र की विडम्बना और शिक्षा–व्यवस्था की विसंगतियों को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करता डॉ. शंकर का यह नाटक, उनका सर्वाधिक अभिमंचित और चर्चित गम्भीर नाटक है। नाटककार ने अरविन्द, लीला, प्रेसिडेंट, अनुराधा और चंदू के समानांतर द्रोणाचार्य, कृपी, दुर्योधन, द्रौपदी और अश्वत्थामा के प्रासंगिक और सटीक दृश्य प्रस्तुत करके समकालीन नाटकों में इतिहास–प्रयोग का एक नया पहलू प्रकट किया है।"[2]

यह नाटक कहीं न कहीं दो युगों की वास्तविकता से अवगत करवाते हुए यह दर्शाता है कि समय बदला है परिस्थितियाँ नहीं। आज भी कहीं न कहीं शिक्षक सत्ता के आगे नतमस्तक हो जाता है, और यह नतमस्तकता उसकी स्वेच्छा से न होकर परिवार, समाज व सत्ता के दबाब के कारण है। नाटक का आरम्भ भले ही प्रोफेसर अरविन्द के जीवन की समस्याओं से होता है, परन्तु शंकर शेष पौराणिक पात्र द्रोणाचार्य की समस्याओं को भी दर्शक वर्ग के समक्ष रख देते हैं। द्रोणाचार्य जैसे महान ऋषि और शिक्षक को भी सत्ता के आगे घुटने टेकने पड़ते हैं। द्रोणाचार्य को धर्म की राह अवश्य पता थी परन्तु धर्म उनके बालक की भूख से अधिक शक्तिशाली नहीं निकल सका। बालक अश्वत्थामा जब माँ कृपी से बार–बार गोरस (अर्थात् दूध) की मांग करता है तो माँ अपने बालक का विलाप करना सहन नहीं कर पाती और आटे में पानी मिलाकर बच्चे को यह झूठ बोल कर कि यही गोरस है आटे का घोल पिला देती है।

"कृपी : शर्म करती तो अब तक सिर पटक–पटककर मर गया होता।

द्रोणाचार्य : लेकिन आटे का घोल पी कैसे लिया?

कृपी : पीता नहीं तो कहाँ जाता? आँचल छूटने के बाद कभी दूध पिया होता तो याद रहता दूध का स्वाद। (विराम) दूध के नाम पर ज़हर देती, तो भी पी लेता।"[3]

आज जिस द्रोणाचार्य का जिक्र इतिहास में है, उस द्रोणाचार्य को पारिवारिक समस्याओं ने बनाया है। जब भी द्रोणाचार्य को याद किया जाता है तो महाभारत में अन्याय का साथ देने वाले मूक गुरु के रूप में याद किया जाता है। जिसने भरी सभा में द्रौपदी के चीर हरण को नहीं रोका, जिसने बिना शिक्षा दिए ही एकलव्य से उसके दाहिने हाथ का अंगूठा गुरु–दक्षिणा में मांग लिया, ताकि अर्जुन से बड़ा कोई धनुर्धर इस पृथ्वी पर न हो। ठीक वैसे ही प्रोफेसर अरविन्द को भी उनके नैतिक मूल्यों से बार–बार उसकी पत्नी लीला और उसका मित्र यदु लोभ के चलते पथ भ्रष्ट करते हैं।

"अरविन्द : दूसरों के लिए यह सवाल छोटा हो सकता है, यदु, पर हमारे लिए तो यह जीवन–मरण का सवाल है। प्रोफेशनल एथिक्स का सवाल है।

...यदू : और नहीं तो क्या! माँ कैंसर से अस्पताल में पड़ी है। विधवा बहन हर पहली तारीख़ को तुम्हारे मनीऑर्डर का इंतज़ार करती है। लड़के को मेडीकल कॉलेज भेजना है। इनकी तरफ़ देखो। छोड़ो यह सिद्धांत–उद्धांत की मूर्खता।"[4]

प्रो. अरविन्द के द्वारा शंकर शेष आधुनिक व्यवस्था में व्याप्त द्रोणाचार्य को दर्शाते हैं जो सत्ता के आगे बिक जाते हैं और स्वयं जिन बातों की शिक्षा विद्यार्थियों को देते थे उन्हें ही ताक पर रख कर सत्ता के अधीन हो नतमस्तक हो जाते हैं। जिस प्रकार द्रोणाचार्य समाज के थोथले नियमों के अधीन हो एकलव्य के दाहिने हाथ

का अंगूठा मांग कर उसकी धनुर्विद्या छीन लेते हैं और एकलव्य का दोष उसकी जाति को देते नजर आते हैं–

"अर्जुन : एकलव्य से अंगूठा क्यों माँगा?

द्रोणाचार्य : धर्म की व्यवस्था के लिए। जानते नहीं शूद्रों और वनवासियों को धनुर्विद्या की शिक्षा नहीं दी जा सकती।

अर्जुन : लेकिन आपने शिक्षा दी कहाँ? आपको गुरु–दक्षिणा देना भी क्या अपराध हो गया?

द्रोणाचार्य : एकलव्य का अंगूठा बने रहने का अर्थ समझते हो? धनुर्विद्या पर उसका अधिकार हो जाएगा। धीरे–धीरे उसकी जाति का अधिकार हो जाएगा। (विराम) शक्तिशाली होने के बाद ये क्षत्रियों से स्पर्धा करेंगे और परिणाम होगा– वर्णाश्रम धर्म पर संकट। (विराम) उसका अंगूठा छीनकर मैं इन सम्भावनाओं को हमेशा के लिए समाप्त कर दूंगा। समझे?..."[5]

ठीक इसी प्रकार से प्रो. अरविन्द भी सत्ता के अधीन हो व लोभ के चलते प्राध्यापक के स्थान पर प्रिंसिपल का पद स्वीकार कर लेता है। जब प्रेसिडेंट का बेटा राजकुमार खुलेआम हथियार के बल पर परीक्षा कक्ष में नकल कर रहा होता है तभी प्रो. अरविन्द उसे नकल करते हुए पकड़ लेता है व उसकी शिकायत आगे करना चाहता है। प्रो. अरविन्द का ही विद्यार्थी चंदू उन्हें बताता है कि राजकुमार हमेशा से ही इसी प्रकार से नकल करता आया है और किसी ने भी उसके खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं की। चंदू पर भी नकल का झूठा आरोप इसलिए लगा कर फन्सा दिया गया था क्योंकि चंदू के पिता प्रेसिडेंट के राजनीतिक विरोधी थे। चंदू बार–बार प्रो. अरविन्द से न्याय की मांग करता है और प्रो. अरविन्द उसे न्याय दिलाने की बात भी करते हैं, परन्तु प्रेसिडेंट अरविन्द को सर्वप्रथम डरा कर और फिर प्रिंसिपल बनने का लोभ दे कर इस मामले को रफादफा करवा देता है।

"अनुराधा : क्योंकि तीन साल पहले आपने चंदू से भी यही कहा था। चंदू ने आपके हर शब्द पर हमेशा वेद की तरह विश्वास किया। पर हुआ क्या?

अरविन्द : मैंने उससे कभी कुछ नहीं कहा था।

अनुराधा : झूठ बोलते हैं आप। आपने उसका साथ देने का आश्वासन दिया था। आपके बूते पर वह लड़ गया। लेकिन लाठियाँ चली। उसे कॉलेज से निकाला गया (विराम) और आपने प्रिंसिपली ले ली मुआवज़े में।"[6]

सम्पूर्ण नाटक इन दोनों कथाओं के मध्य ही घूमता हुआ नजर आता है। नाटक यह दर्शाता है कि चाहे द्वापर युग हो या आधुनिक युग मात्र समय ही बदला है, परन्तु व्यवस्था जस की तस बनी हुई है। इन कुटिल व्यवस्थाओं को आगे बढ़ाने वाले वही शिक्षित व्यक्ति हैं जिन्हें हम समाज सुधारक की संज्ञा देते हैं। इस नाटक के विषय में हरीश नवल अपनी पुस्तक 'हिंदी नाटक : तीन दशक' में लिखते हैं :–

"शंकर शेष का 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक उनकी कुशल रंगचेतना और नई सोच का प्रतीक है। इस नाटक ने उन्हें बहुत प्रतिष्ठा दी है। कथा दो स्तरों पर चलती है। एक पौराणिक आख्यान है जहाँ सुविधाओं के हेतु द्रोणाचार्य ने अपने प्रिय शिष्य अर्जुन तथा अन्य पांडवों को छोड़ मदोन्मत्त कुटिल कौरवों का साथ दिया क्योंकि वे शासक थे– सुविधाएँ दे सकते थे। द्रोणाचार्य जैसा सुयोग्य गुरु व्यवस्था के हाथों इसी हेतु बिक गया।

दूसरे स्तर पर आधुनिक व्यवस्था है जहाँ अरविन्द जैसा चेता प्राध्यापक सुविधाओं के लोभ में, प्रिंसिपल बनने के मोह में गुंडों का साथ देता है। उसकी मनोदशा ने उसे द्रोणाचार्य बना दिया है– एक और द्रोणाचार्य।"[7]

यह नाटक मात्र शिक्षक के उस रूप को ही नहीं उठाता जिसमें शिक्षक व्यवस्था के हाथों मजबूर हो

प्रलोभन ग्रहण कर लेता है और शिक्षक के नैतिक मूल्यों को तार–तार करते हुए एकलव्य का अंगूठा गुरु–दक्षिणा में मांग लेता है। या फिर राजकुमार जैसे अनैतिक छात्र के आरोपों को छुपा कर चंदू जैसे योग्य विद्यार्थी को कॉलेज से निष्कासित कर देता है। इसी के साथ–साथ द्वापर युग की द्रौपदी के चीर हरण के समय सभा में खामोश बैठे गुरु द्रोण की ख़ामोशी उनके द्वारा दी गई स्त्री रक्षा की शिक्षा को भी मात्र ग्रन्थों में लिखी गई शिक्षा साबित करती है। प्रेसिडेंट का बेटा राजकुमार जब अनुराधा का बलात्कार करने की कोशिश करता है उसी समय प्रो. अरविन्द अनुराधा को बचा तो लेते हैं परन्तु राजकुमार को सजा दिलवाने के समय उनके स्वयं के ऊपर लगने वाले पैसों की घपलेबाजी के आरोप के डर से डरते हुए अनुराधा को केस वापिस लेने की हिदायत देते हैं। चाहे द्वापर युग की द्रौपदी हो या फिर आधुनिक युग की अनुराधा दोनों ही 'गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवों महेश्वरा' कहे जाने वाले अपने गुरु के आगे उनकी लाज बचाने की विनती करती नजर आती हैं–

"अश्वत्थामा : हाँ, पिताजी, जब दौपदी की पुकार किसी ने नहीं सुनी, तब वह आपके सामने आकर खड़ी हो गई थी। याद है, उसने क्या कहा था? उसने कहा था– आचार्य, आप तो न पांडव के रक्त–सम्बन्धी हैं, न कौरवों के। आप आचार्य हैं दोनों के। क्या दुर्योधन आपका कहना नहीं मानेगा? आपको तो सत्ता का मोह नहीं है। क्या आप अपने शिष्यों की पत्नी को सार्वजनिक रूप से अपमानित होते देख सकते हैं? उठाइए अपना धनुष (विराम) पर आप चुप रहे, क्यों?"[8]

आधुनिक युग की द्रौपदी अर्थात् अनुराधा भी प्रो. अरविन्द से सच के साथ खड़े होने की बात करती है।

"अरविन्द : तो क्या तुम मुझ पर विश्वास नहीं करतीं?

अनुराधा : करना चाहती हूँ, सर! पर मन बहुत डरता है। अगर आप बदल गए तो मैं कहीं की नहीं रहूंगी। मेरा विरोध एक मज़ाक बनकर रह जाएगा। लोग समझेंगे, मैंने राजकुमार को फाँसने के लिए साजिश की है। ... अनुराधा : वह आपको बड़े–बड़े निरर्थक शब्द थूकने वाला नपुंसक बुद्धिवादी कहता था। आपने सचमुच मुझे कहीं का नहीं रखा। मेरे सब भ्रम टूट गए। अब आपको चिंता करने की ज़रूरत नहीं होगी। कल शायद कोई सवाल ही न उठे।"[9]

नैतिकता के इस मुखौटे को हटाने का कार्य लेखक शंकर शेष प्रो. विमलेन्दु नामक पात्र की प्रेतात्मा को सौपन्ते हैं। दरअसल प्रो. विमलेन्दु की प्रेतात्मा एक किरदार मात्र नहीं है बल्कि यह प्रो. अरविन्द की या यूँ कहें हरेक व्यक्ति की अंतरात्मा है जो उसे समय–समय पर वास्तविकता का दर्पण दिखाती है। प्रो. विमलेन्दु की आत्मा यह दर्शाती है हमें बालपन से जो नैतिक शिक्षा दी जाती है वह किस प्रकार से समाज के व लोभ के हाथों प्रो. विमलेन्दु की मृत्यु की तरह ही मर चुकी है। प्रो. विमलेन्दु के माध्यम से नाटककार व्यक्ति के भीतर विद्यमान उसके दोगुलेपन को भी बाहर निकालता है।

"विमलेन्दु : फिर झूठ! कितना झूठ बोलोगे? वे लोग थे तुम्हारे सहयोगी, जिन्हें तुम प्रेसिडेंट के कहने पर पांच सौ की रसीद लिखाकर केवल तीन सौ रुपए वेतन देते थे।

अरविन्द : लेकिन यह तो पुरानी परम्परा है।

विमलेन्दु : लोगों को तुमसे उम्मीद थी कि तुम इस परम्परा को तोड़ोगे।"[10]

अंत में शंकर शेष विमलेन्दु से कहलवा ही देते हैं कि जब तक आप सत्ता से दूर होते हैं तो आप नैतिक विचारों के विषय में, लोगों की भलाई आदि के विषय में सोचते हो, परन्तु जैसे ही आप सत्ता से जुड़ जाते हो

या फिर सत्ता का अंग बन जाते हो तो आप उन लोगों से बिल्कुल भी भिन्न नहीं होते, जो आपके अधिकारों का हनन करते हुए आपका इस्तेमाल करना जानते हैं। नाटक के अंत में शंकर शेष द्रोणाचार्य की भांति ही प्रो. अरविन्द की सजा का कारण उनके शिष्य चंदू को बनाते हैं जिसकी गवाही से उनको अदालत प्रेसिडेंट की मृत्यु का दोषी करार करती है। विमलेन्दु की आत्मा बार–बार अरविन्द को 'एक और द्रोणाचार्य' घोषित करती है।

"विमलेन्दु : तू द्रोणाचार्य है। व्यवस्था और सत्ता के कोड़ो से पिटा हुआ द्रोणाचार्य–इतिहास की धार में लकड़ी की ठूँठ की तरह बहता हुआ, वर्तमान के कगार से लगा हुआ–सड़ा–गला द्रोणाचार्य। व्यवस्था के लाइटहाउस से अपनी दिशा मांगने वाले टूटे जहाज़–सा द्रोणाचार्य।

अरविन्द : मैं द्रोणाचार्य नहीं, अरविन्द हूँ–प्रोफेसर अरविन्द।

विमलेन्दु : बकवास! तू द्रोणाचार्य है। कौरवों की भाषा बोलने वाला, युद्ध में भी उनका साथ देने वाला। तू किस बात का प्रोफेसर? तू द्रोणाचार्य है।..."[11]

अतः बीसवीं सदी के सातवें दशक में लिखा गया शंकर शेष का यह नाटक हिंदी नाट्य जगत में अमिट छाप छोड़ता है। समकालीन शिक्षा व्यवस्था में आज भी द्रोणाचार्य विद्यमान है जो कभी अपनी परिस्थितियों के चलते, कभी सत्ता के लोभ के चलते, तो कभी समाज की कुरीतियों का शिकार हो कर द्रोणाचार्य का रूप धारण कर लेते हैं। युग अवश्य बदल गए हैं परन्तु आज आज भी परिस्थितियाँ द्रोणाचार्य को जन्म दे रही हैं। यह नाटक अपनी प्रासंगिकता लिए हुए आज भी रंगमंच का हिस्सा बना हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. डॉ. वीणा गौतम, धर्मवीर भारती और शंकर शेष के नाटकों का रंग चिन्तन, शब्द सेतु प्रकाशन, 2001, पृष्ठ संख्या–99
2. डॉ. जयदेव तनेजा, हिंदी नाटक आज–कल, तक्षशिला प्रकाशन, 2000, पृष्ठ संख्या– 92–93
3. एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 29
4. एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 7–8
5. एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 36
6. एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 49
7. हिंदी नाटक : तीन दशक, हरीश नवल, अनंग प्रकशन, 2004, पृष्ठ संख्या– 126–127
8. एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 58
9. एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 49–51
10 एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 63
11 एक और द्रोणाचार्य, शंकर शेष, परमेश्वरी प्रकाशन, 2018, पृष्ठ संख्या– 75

ई मेल :– varshakb1996@gmail.com

दूरध्वनी क्रमांक – 7042581469

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 75-79

मिज़ो की लोक कथाओं का परिचय, स्वरूप व प्रकार

डॉ. ऐलीजावेथ
सहायक आचार्य, मिजोरम हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आईजोल।

प्रस्तावना :–

भारत देश को पूर्वोत्तर में वसा एक छोटा सा राज्य मिजोरम है जो हिमालय के शिर्ष पर वसा है। मिजोरम अपनी प्राकृतिक आवरणों से, प्राकृतिक सौन्दर्य से, यहाँ के रहन–सहन से, यहां लोगों सुन्दर चित अभिव्यक्ति बहुत ही सादगी पूर्ण, एकता भाईचारा देखने को मिलता है। यदि हम मिजोउ कथाओं के संदर्भ चर्चा करूं तो मिजोउ लोक साहित्य का आरंभ उन दिनों को नही माना जाएगा जिस दिन से दुहलियान भाषा (जिसे अब हम मि जोन भाषा कहते हैं) को रोमन में लिखा जाने लगा था। बल्कि मिजोउ लोक साहित्य का आरंभ मिजोउ जनजाति के इतिहास के आरंभ से हुआ। मिजोउ लोक साहित्य में वही प्रवेश हुआ, (जो उनके जीवन से संबंधित था) चाहे वह अनेक डरावने। युद्ध हों, चाहे उनके सुखद दिन हों, उनकी खेती–बाड़ी त्योहार हो, चाहे उनका लोक नृत्य हों, साधारण जनजीवन व उनका विश्वास हो एवं उनके सभी प्रकार से क्रियाकलाप शामिल हैं।

'हम जिसे मिजोउ साहित्य का नाम देते हैं उसमें केवल लेख या बाईबल के अनुवाद तथा पाश्चात्य से संबंधित सक्रिय लेख ही नहीं हैं बल्कि इसमें शामिल सभी लोक गीत तथा लोक कथाओं को साहित्य का नाम देते हैं।' (मिज़ोउ लिटरेचर बी. ललथङा, पृ. सं. ५५)

मिज़ोउ जनजाति के लोग उपन्यास, घटना और विभिन्न प्रकार की कथों को कहानी का नाम देते हैं तथा अपने पूर्वजों से प्राप्त अलिखित कहानी को लोक कथा सा नाम देते हैं। मिज़ोउ कहानियों में लोक कथा का सबसे बड़ा खण्य है, क्योंकि इसमें जानवरों की कहानी, पशु–पक्षियों दी कहानी जिसमें पशु पक्षीयों को मानवों सी भाषा में बात करवाई जाती है, परियों सी कहानी, राजा–रानी की कहानी, नदियों की कहानी, भूत–प्रेत की कहानी, बच्चों की कहानी, अप्सराओं की कहानी आदि ऐसी कहानियों का मिश्रण है जिसे हमने अपने पूर्वजों द्वारा मौखिक में अर्थात अलिखित रूप से जानकारी प्राप्त किए हैं और हमने इसे अपने बच्चों को पोता–पोती को सुनाते हैं और वे भी इसी प्रकार अपने बच्चों को फिर से सुनाते हैं।

बी. ललथङ लियाना को अनुसार, 'लोक कथा वह है जिसकी रचना करने वाले अर्थात कहने वाले का किसी को पता नहीं है, बात बनाने में माहिर तथा बात को बढ़ाने–चढ़ाने में माहिर लोग लोक कथा को थोड़ा और जोड़–घटाकर तोड़–मरोड़ कर, सुनाते हैं। इसका रूप थोड़ा बदल जाता है किन्तु मूल कथा वैसी की वैसी रहती है। कुछ कथाएँ ऐसी भी रही होंगी जिन्हें हमारे पूर्वज बड़े चाव से सुनाते रहे होंगे। लेकिन जिनको शायद लोग आज भुला चुके होंगे। इसलिए जिस कहानी को अब भी हम सुनते तथा सुनाते आ रहे हैं। वे मानव को

यथार्थ जीवन को प्रकट करने वाली उनके दैनिक जीवन तथा विशेष स्थान से गहरा संबंध रखने वाली होंगी और आने वाली पीढ़ी के लिए अच्छी सीख व कल्पना को मूल रूप देने मैं सक्ष्म होंगे। ऐसी कहानियाँ, कथाएँ तो कई साल बीत जाने पर भी लुप्त नहीं होते। यही तो लोक कथा की मूल अवधारणा होती है। ये लोक कथाएँ किसी भी सामाज सी बुनियादी संरचना मानी जाती है। इस प्रकार की लोक कथा को समाज की अचल सम्पत्ति को रूपों में दर्जा दी जाती है। खास कर मिजोउ लोक कथाएँ बहुत रूचि कर व प्रासंगिक होती हैं। जिन्हें बच्चे से लेकर बूढ़े तक पड़े ही चाव से सुनते और सुनाते हैं।'

हम दावे से साथ नही कह सकते हैं कि पूर्वजों ने कहानी सुनाना, गढ़ना कब शुरू दी थी किन्तु कहानी से संबंधित एकदम स्टीक और सुन्दर, कथा को बीच बीच में गाऐ जाने वाले गीतों के कारण अनुमान लगाया जा सकता है कि कहानी से गीत की रचना पहले कि गई थी।

आगे कहा जा चुका है कि बर्मा की टिआऊ नदी पार करने से पहले कई नई मिजोउ कहानियाँ कही गई हैं। टिआऊ नदी के पूर्वी भाग एवं पश्चिमी भाग में किन–किन कथाओं की उत्पत्ति हुई थी। अब उसे पहचानना कठिन–सा हो गया है, किन्तु उन कहानियों में आऐ नदियों को नाम, पहाड़ों के नाम, पुराने स्थानों के नाम, कथा के ढ़ंग आदि से कुछ का तो विश्लेषण किया जा सकता है।

बी. ललथङलियाना से अनुसार 'टिआऊ' नदी के पूर्वी भाग से निकली कथाएँ इस प्रकार हैं :–

(1) थिलबुल छूतदान (2) त्सांग लेह फाईजोल ओमटनदान (3) लीरह्ङीन छन (4) वानह्किपा थू

(5) थ्लानरोकपा खुआङचोई (6) चुङलेङलेह हँनाईलेङ इन्दौर (7) चोङते लेह सतेल

(8) सकूह लेह सरती (9) समोम तुई खुआप (10) सामदाला (11) चेमतातरोता (12) त्लिङी लघ्ह ङामा

(13) फाफा कोई (14) लियानदोवा ते उनाव (15) तुमछीङी लेह रालदोना (16) दुहमाङा लेह दारदिनी। ये प्रसिद्ध मिजोउ लोक कथाएँ हैं।

जिस प्रकार पश्चिम के विद्वानों तथा अन्य लोगों ने इस लोक कथा को दो खण्डों में विभाजित किया है उसी मिजोउ जनजाति ने भी इसके दो खण्ड किए हैं :– 'मिथ' तथा 'लीजेन्ड'।

प्राचीन काल में घटित घटनाओं पर आधारित मिजोउ लोक कथाओं को 'मिथ' अर्थात् पौराणिक कथा नाम से जाना जाता है। इस लोक कथाओं में जन–समुदाय के मनोरंजन एवं तारित्रिक उत्कर्ष के लिए तथा विश्वास के लिए, धार्मिक विश्वास के लिए, सृष्टि संबंधी घटनाएँ, जनता की अलौकिक परम्पराएं आदि का समावेश होता है। विज्ञान–पूर्व युग की घटनाओं का निराकरण वैज्ञानिक लेकिन कल्पित रीति से किया गया है।
जैसे– पृथ्वी की उत्पत्ति कैसे हुई? केकड़ा टेढ़ा क्यों चलता है? रात अंधेरा क्यों होता है? हम बीमार क्यों पड़ते हैं? आदि रोचक समस्याओं का निदान दिया गया है। भले ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हम उसे आज के युग में स्वीकार करे या न करें।

जिन कथाओं की 'रून' नदी 'टिआऊ' नदी के बीच की उत्पत्ति माना जाता है। उन लोक कथाओं में से पांच 'मिथ' के अंदर रखी गई हैं :–

1. थिलबुल छूत दान (पृथ्वी की उत्पत्ति)
2. त्लाङलेह फाईजोल ओमटनदान (पहाड़ और समतल भूमी की उत्पत्ति)
3. लीरङहीन छन (भूकम्प के आने का कारण)

4. वानह्निकपा (बादल के गरजने का कारण)

5. थ्लानरोकपा खुआङचोई (पशु पक्षियों के नामांकरण)

इन 'मिथ' कथाओं से पूर्वजों की कल्पना शक्ति का ज्ञान हमें हो जाता है। जमीन–आसमान की उत्पत्ति, पहाड़ों की उत्पत्ति, परब्रह्म का पृथ्वी को हिलाने से भूकंप आने का कारण मानना, पेड़ तथा बाँस आदि का उगना, जानवर तथा जंगली जानवरों के नामकरण आदि मिजोउ मिथ कथाओं में शामिल हैं। जिसका कल्पना वर्तमान में कर नहीं सकते। उन्हें भी हमारे पूर्वजों ने अपनी कल्पना शक्ति द्वारा लोक कथाओं में शामिल कर अपनी सुबुद्धि का प्रमाण दिया है। कोई–मी (नरभक्षी) होकर आदमी या युवक का रूप धारण करने वाले की कथा सुनकर तो हम आश्चर्यचकित रह जाते हैं। इससे बच्चे तो क्या बड़ों का भी मनोरंजन होता है।

'टिआऊ' पार करने से पहले पूर्वजों की अद्भूत काल्पनिक शक्ति का दूसरा प्रमाण मिलता है। 'त्लिङी और गामा' की कथा से। मृत्यु के बाद आत्मा की स्थिति, रिहदील (रिह्झील जो अभी बर्मा सीमा मैं है) से आत्मा का गुजरना निश्चित माना जाता था। मृत्युलोक में आत्मा की स्थिति क्या होगी? आदि बातें टिआऊ पार करने से पहले ही हमारे पूर्वजों ने व्यवस्थित रूप से कल्पना की होगी। इसका अनुमान लगाया जा सकता है।

ब्रज की लोक कथा के समान मिजोउ लोक कथा को भी दो वर्गों में बाँटा जा सकता है :–

(1) गद्य रूप में प्रचलित लोक कथा।।

(2) पद्य रूप में प्रचलित लोक कथा।

गद्य रूप में प्रचलित लोक कथाएं :– इस वर्ग में इस प्रकार की लोक कथाएँ आ सकती हैं।

(क) धार्मिक व व्रतोत्सव संबंधी :–

जन्म लेते ही इंसान कुछ न कुछ सोचने लगता है। जैसे–जैसे वह बढ़ता जाता है वैसे–वैसे अनुभव करने लगता है जो कुछ उसके साथ घट रहा है, गुजर रहा है उसके पिछे कोई है जो बहुत ही शक्तिशाली है, जिसको वह देख नहीं सकता, छू नहीं सकता किन्तु उसके होने का आभास उसे हो जाता है। उसी को खुश करने की चेष्टा करता है, उसकी पूजा करता है। मिजोउ लोक कथाएँ भी इसके अनुसार चलती हैं। ये धार्मिक कहानियाँ उपदेशात्मक होती हैं। मिजो लोक कथाओं में कई धार्मिक कहानियाँ हैं किन्तु मिजोउ जाति के आदि मानव किसकी पूजा करते थे? उसका धार्मिक विश्वास क्या था? आदि का वर्णन करना ठीक होगा क्योंकि इनकी धार्मिक लोक कथाएँ इन पर आधारित हैं। मिजोउ जनजाति का अपना निश्चित धर्म है इस धर्म की उत्पत्ति रून नदी और टिआऊ नदी में (जो अभी बर्मा में है) १३००–१७०० ई.वी. के लगभग हुई थी।

(ख) सामाजिक कहानियाँ :–

समाज में जिस प्रकार लोगों का व्यवहार होता है अर्थात क्रिया कलाप होता है उसी प्रकार लोक कथाओं में भी पात्रों को, तथा समाज को दर्शाया जाता है। यूँ कहिए कि समाज के नित्य प्रति के क्रिया कलापों को अलग–अलग ढ़ंग से कथाओं में प्रस्तुत किया जाता है।

चूँकि मिजोउ लोगों का मुख्य पेशा खेती करना, शिकार करना है, नायक को खेती करता हुआ, शिकार करता हुआ दर्शाया जाता है।

मिजोउ समाज में बड़ों की बहुत इज्जत की जाती है। इसलिए लोककथाओं में इसकी झलक दिखाई देती है।

मिजोउ समाज में परोपकार सी भावना सिखाई जाती है। इसलिए मुख्य पात्र या पात्रा में अन्य पात्रों में परोपकार की भावना कूट–कूट कर भरी होती है।

विधवा व अनाथ लोगों का तिरस्कार किया जाता है। इसलिए समूह में जब लोग मछली पकड़ने जाते थे तब विधवाओं को शामिल नहीं करते थे। यही स्थिति अनाथों की भी होती थी। बचा–खुचा जो कुछ उन्हें दिया जाता था वे खुशी–खुशी स्वीकार कर लेते थे।

(ग) ऐतिहासिक कहानियाँ :–

हम जानते हैं कि आदि काल में मिजोउ जनजाति के लोगों का सर काटने वाली जाति के नाम से जाना जाता था, इसलिए राजा या कोई भी नागरिक यदि किसी दुश्मन का वध करता था तो उसका सिर काट कर घर ले आता था। उस सर को घर के बाहर खम्भे से या पेड़ पर टाँग देता था। इस प्रकार की कई घटनाओं का वर्णन मिजोउ लोक कथाओं में सुनने को मिलता है।

(घ) सांस्कृतिक पक्ष :–

'संस्कृति से संबंधित कथाओं को सांस्कृतिक कहानी का नाम दिया जाता है। मिजोउ लड़की, युवतियाँ सुबह उठकर धान छूटती हैं और उसे साफ करती हैं। दिन में वे खेत पर जाते हैं और रात में सूत काटती और कपड़े बनती हैं। युवक रात को युवतियों के घर जाते हैं और युवतियाँ कपड़े बनती उनसे बातचीत करती हैं, उनके लिए चाय बनाती हैं जिस घर में युवकों का जमघट बना रहता है। उस युवती को लोग सुन्दर–शुशील और अच्छी समझते हैं। युवती यदि कपड़े बुनने और सूत कातने में बहुत होशियार है तो सामूहिक लोगों के बीच बहुत इज्जत होती है। इन सबकी सी झलक सांस्कृतिक लोककथाओं में पाया जाता है।'

(ङ) मानवेतर प्राणियों की कहानियाँ :–

मिजोउ लोक कथाओं में पशु–पक्षियों की कहानियाँ प्रचुर मात्रा में सुनने को मिलता है। जैसे–बंदर, भालू, बाज, मैना, तोता, बिल्ली, मुर्गी, चीता, शेर, गीदड़, लोमड़ी, कुत्ता आदि।

की कहानियाँ बच्चे बड़े चाव से सुनते हैं। इन मानवेतर प्राणियों को मनुष्य की ही तरह बात करवाते हैं अर्थात वे अपनी भाषा में अपना विचार प्रकट करते हैं, जैसे– 'मुर्गी और चूजे की कहानी में मुर्गी कहती है। टूक–टूक मैं तो काम नही करूँगी'। बिल्ली ने कहा–'म्याऊँ–म्याऊँ' मैं तो जाऊँगा। आदि–आदि वाक्य बोलवाए जाते हैं।

पद्य रूप :–

कुछ ऐसी भी हैं जिसे गाकर सुनाया जाता है। कभी भी पूरी कहानी गाकर सुनाई तो नहीं जाती किन्तु बीच–बीच में गाकर सुनाया जाता है। उदाहरण के लिए मिजोउ की एक कथा (प्रेम कहानी) जोलपला और तुआलवुङी की कहानी में जोलपला को मर जाने तुआलवुङी को बुलाने 'वहूई' जंगली कबूतर, जिसकी आवाज बहुत सुरीली होती है, तोते जैसे रंग का होता है, को भेजा गया उसने गाकर तुआलवुङी को यौं बुलाया :–

'हुई–हुई ए, कतिते हुई–हुई ए
वुआनाह जोलपला थी ए
तुआलवुङी वा राल रोह् से
कतिते हुई–हुई।'

कहकर उसकी पत्नी को बुलाकर लाया था। मिजोउ लोककथाओं में दो प्रकार की कहानियाँ पद्य रूप में होते हैं :–

(क) लोक गाथाएँ।

(ख छंदोबद्क चुटकुले।

'लोक गाथाओं में अधिकतर वीरता, अच्छे शिकारी, प्रेमी–प्रेमिकाओं के बीच प्रेम का समावेश कहानियाँ हैं।'

राजकुमारी ललथेरी जो साईलो ललसवुङा की बेटी थी जो किसी नीच जाति के लड़के 'चलथङा' से राजकुमारी को प्रेम हो गया था किन्तु राजा द्वारा चलथङा का वध करवा दिया गया। उसकी याद में वह बावली हो गई। ललथरी अपनी तन्हाई को जाहिर करने के लिए लगभग संपूर्ण कथा पद्य में ही वाचन की गई। इस प्रकार की कथाएँ लोक गाथाओं के अंतर्गत आती है। इस तरह के कई पद्य कथा मिजोउ कथाओं में देखने को मिलती है। लसीका और लसारा कहानी भी इसका एक उदाहरण है।

इसके अलावा पद्य रूप कथाओं में छंदोबद्ध चुटकुले भी आते हैं। उदाहरण के लिए 'पू वोमा का पानी' यहाँ भी पात्र छंदों में आपस में बात करते हैं। 'पू वोमा का पानी' में भी प्यासे जंगली सूअर ने पूवोमा यानी भालू के पोखरे को देखकर कहा :–

'पाया पाया पानी मैं ने,
पाया फालतू पानी
जी भर पी ली मैं।'

कहकर पानी पीने के लिए झुका उतने में बंदर जो इस पानी की रखवाली कर रहा था, जिसे भालू मौसे ने रखा था कहा :–

'पानी है मौसा भालू का
हिम्मत है तो पी लो
हिम्मत है तो सड़क जा ओं।'

इस प्रकार सी कई कहानियाँ मिजोउ लोक कथाओं में सुनने को मिलती है।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 80-96

Identification of trends and challenges in science communication during pandemic: A critical analysis

Shweta Singh Rathore, PhD Scholar
Dr. Kunwar Surendra Bahadur, Assistant Professor
Babasaheb Bhimrao Ambedkar University, Lucknow.

ABSTRACT :-

The history of humanity messed with instances of epidemics and pandemics at various points in time. In many cases, the advent of such contagious diseases has resulted in whole civilizations having to fight against the possibility of extinction. The coming of the COVID19 pandemic has been facilitated by several factors, including challenges of disregarded sustainability and lax health hygiene standards, among others. This, although recent clinical improvements and technological developments have occurred. In light of this context, the dissemination of scientific information through various media tools has the potential to play a significant part in the fight against epidemics and pandemics by contributing to efforts towards preparedness and control, as well as the initiation of immediate remedial measures. These technologies might contribute to a correct knowledge of the scientific solutions that could be used to reduce the number of infectious disease outbreaks, consequently enhancing the immunity of the general population. The purpose of the study is to bring attention to the occurrence of epidemics and pandemics, as well as, the consequences they have and the prospective repercussions they may have on human communities. In addition, it identifies the primary contributors to the many infectious outbreaks that have occurred in the last three decades. This study will analyze the impact of scientific communication during and after the pandemic, constructive preparation and preventative stages are advised for authorities, scientists, and researchers. These stages should focus on the necessity of scientific communication within the healthcare system. In addition, the most current empirical investigations and WHO recommendations will be concluded. It's possible that communication, facilitated by suitable communicators, may help cut through the noise, spread the facts, and enhance trust in science and government. The influence of scientific communication on the interaction between the government, experts, and the public or society might assist in overcoming

language obstacles and promoting the adoption of more beneficial behaviors.

Keywords : Technological Developments, Covid-19, Pandemic, Science Communication.

I. INTRODUCTION :-

By taking into account present overcrowding, rising pollution, and historical hints, the scientific community has predicted hazards from a worldwide pandemic and repeatedly warned governments about these concerns [1]. The remains of the ancient earth also revealed the presence of several dangerous diseases in the extinct human population, but the general spread of these illnesses was restrained by the dispersed human settlements and the absence of pollution. Human habitation began in the shape of far-off civilizations and communities about 10,000 years ago. These towns were distinct in that they practiced agriculture and domesticated animals[2]. In addition to the many benefits, the development of the social structure increased the danger of infectious illnesses because of the unsanitary and uncomfortable living conditions in the human settlement or society. Living in a social system, which is often overcrowded, probably encouraged a lot of viruses to switch species, which led to a lot of serious illnesses and disorders in humans [3]. The entire population of China's ancient communities was wiped out by Circa, the earliest known epidemic, which struck approximately 3000 B.C. [4]. The historical data shows that no age group was spared since the epidemic spread quickly, without enough time for adequate funerals, which resulted in communal burning.

II. HISTORICAL INSIGHT OF PANDEMICS :-

Another epidemical outbreak of smallpox caused by the Variola virus, which is spread by cutaneous contact and has the potential to travel through the air, was documented around 430 B.C. Up to 20% of Greece's entire population was lost as a result of this pandemic. Thucydides, a Greek historian who lived from 460 to 400 B.C., wrote in his book, "The History of the Peloponnesian War," which Richard Crawley translated, that "individuals suffered extreme heat in the head, irritation in the eyes, inner parts of the face becoming bloody, emitting an unnatural and fetid breath."

Five million people were murdered in the whole Roman Empire between the years 165 and 180 A.D. by the pandemic Antonine Plague, which soldiers mistakenly carried as trophies of victory and was thought to be smallpox [5]. Some historians held the view that following the conflict with Parthia, which lasted from 27 B.C. to 180 A.D., fighters returned as disease carriers. The Justinian Plague spread by rodents and diseased fleas in 541 AD, killing 50 million people over a period of 200 years across Asia, the Middle East, and the Mediterranean.

The Black Death epidemic commonly considered the worst disaster in history, struck Europe between 1346 and 1353 A.D. It was caused by Yersinia pestis bacterial strains and killed around half of the population. The Cocoliztli outbreak, a viral hemorrhagic fever, struck Mexico and Central

America in 1545–1548 AD, killing 15 million people.

A smallpox epidemic in 1519 killed 8 million of the 25 million native inhabitants in what is now Mexico in only two years. Only 2 million people survived the next century uninfected, with the remaining population suffering greatly from the many contagious illnesses brought by different European Explorers. Nearly 20 million people died as a result of the pandemic that affected America's indigenous population, and the effects are still being felt. Smallpox was introduced to Massachusetts in 1633 AD by many immigrants from the Netherlands, France, and Great Britain.

Epidemics have increased during the last two centuries as a result of population growth, pollution, transportation, industrialization, and urbanization. In India, China, and Hong Kong, the Modern Plague—the century's worst epidemic—has killed more than twelve million people since 1860 A.D. It was eventually brought under control thanks to advances in medicine.

Despite the lack of air travel, the flu pandemic of 1889–1890 A.D. started in St. Petersburg before spreading to Europe and the rest of the globe. The second plague incident occurred in Manchuria in 1910–1911 AD and resulted in the death of 60,000 individuals, making it the biggest epidemic of the 20th century. It still happens now and again in some regions of sub-Saharan Africa. Pandemic The Great Spanish Flu, the most devastating pandemic of the 20th century, killed over 500 million people worldwide between 1918 and 1919 A.D., with certain indigenous tribes on the verge of extinction accounting for one-fifth of the population. It had a big effect on World War I combatants. Up to the invention of the vaccine in 1954 A.D., the epidemic polio, a contagious illness that first arose in the summer and peaked throughout the 1950s in the USA, afflicted 60,000 children and claimed the lives of more than 3000 people. One million people died as a result of the pandemic Asian Flu, which had its origins in China, in the years 1957–1958 AD. The virus, which produced an epidemic in Singapore, Hong Kong, and the coastal regions of the USA [6], was a fusion of many birds' flu strains.

Epidemic and endemic breakouts have increased dramatically during the last 20 years, with devastating effects on many different parts of the globe. In 2003 A.D., SARS (severe acute respiratory syndrome) was discovered for the first time in China, when 8000 cases and 774 fatalities were documented. A new strain of the H1N1 virus that caused the 2009 A.D. pandemic of swine flu began in Mexico before spreading around the world. 1.25 billion people were infected by the virus in a single year, and there were around 575,000 confirmed fatalities. Eighty percent of all deaths occurred in those under the age of 65. Swine flu was classified as a communicable illness due to the breathing of pigs carrying a Type A influenza virus. Around 10,000 people died in Haiti from the pandemic cholera in 2010 AD, and the outbreak's intensity was made worse by the country's total paralysis after the earthquake the same year. More than 1,22,000 people died worldwide in 2012 AD from measles,

a highly contagious ailment that is caused by a virus. Typhoid fever claimed the lives of almost 2,16,000 people in 2012 AD alone. Concerns for health authorities were compounded by the death toll from tuberculosis, an infectious bacterial illness that killed over 1.3 million people in one year just [7].

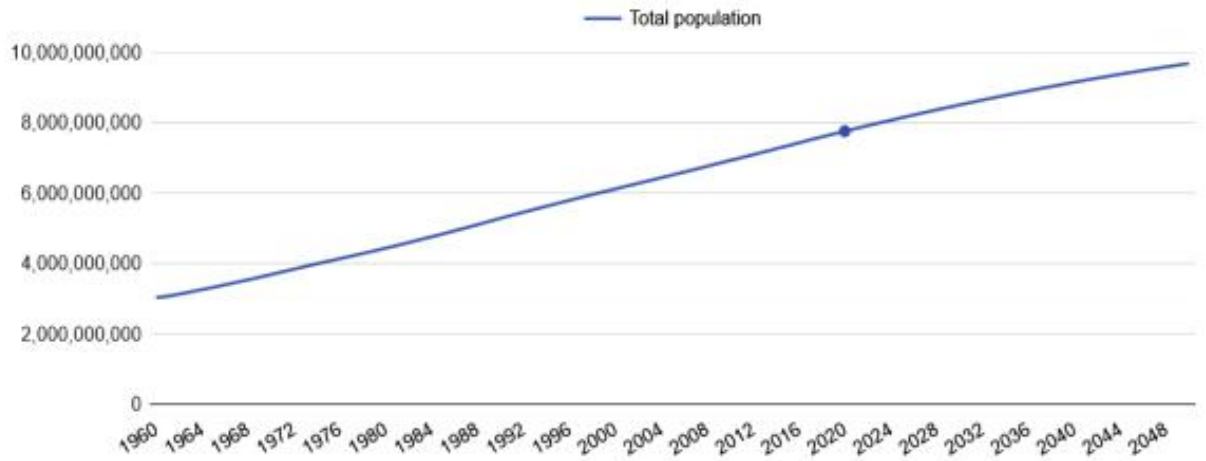

(a)

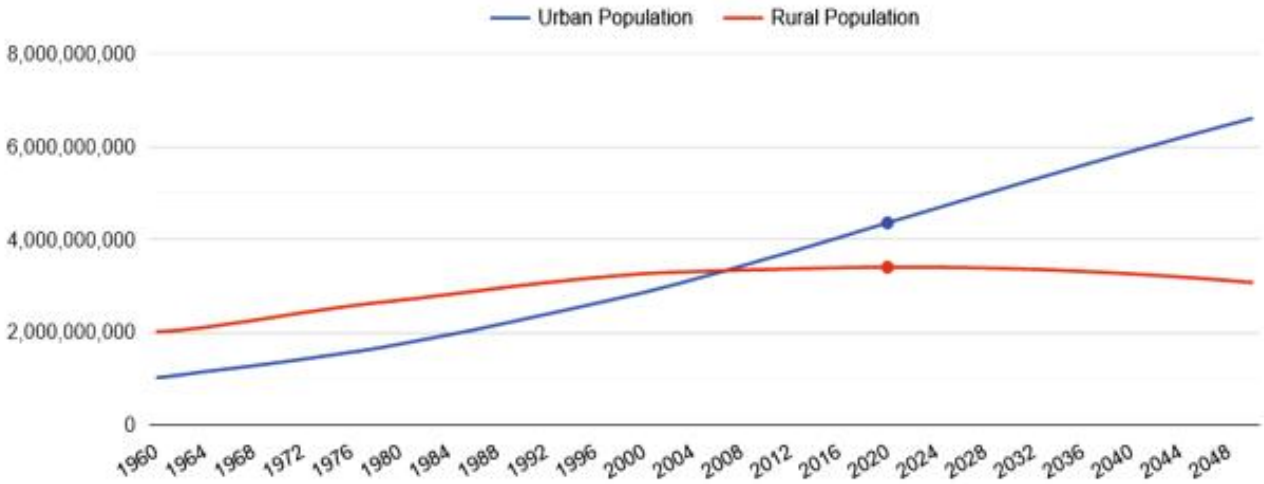

(b)

Figure 1 : *Change in global population statistics from 1960 to expected in 2048. Graph showing (a) tremendous increase in total population (b) increase in urbanisation while decline in rural population*

An Ebola virus (hemorrhagic fever) pandemic that began in West Africa in 2014 and lasted until 2016 A.D. claimed 11,300 deaths. Researchers are currently working to identify the precise drug and vaccine for Ebola, which was first identified in bats in the Democratic Republic of the Congo and Sudan in the year 1976 AD. In the same year, 2016 AD, the WHO labeled the Ebola virus a pandemic, predicting that 3 to 4 million people will get it in a year due to its rapid and severe spread

across the USA. The congenital abnormalities, microcephaly, miscarriages, and neurological deficiencies brought on by the mosquito-borne Zika virus. Different diseases that cause epidemics and pandemics always have tenacious adversaries among humans. Humans have made great strides in everything from space science to development, but they are still working to create vaccines that will stop many infectious illnesses [8]. While many viruses may not affect the current population as severely as other pandemics do, unsustainable growth, climate change, and other environmental conditions may have a huge influence on future generations.

III. FACTORS BEHIND THE EMERGENCE OF INFECTIOUS OUTBREAKS IN THE LAST THREE DECADES :-

Epidemics and pandemics are contagious illnesses that spread from one species to another, hastening the extinction of one species or signaling the beginning of another. About 8 to 10 epidemics have occurred since 3000 B.C., but in the last 200 years, the frequency of catastrophic occurrences has quadrupled. HIV, Ebola, and SARS outbreaks have been recorded most recently. They occurred in several continents and geographic areas and coincided with a sharp rise in population and economic activity. (Fig. 1) The most recent global health emergency, the pandemic COVID19, and a few other outbreaks, including the epidemics of Zika and Ebola, were announced in 2020, according to the World Health Organization. Since infectious illnesses and viruses attack the individual immune system and spread quickly, they have an influence that is not limited to certain geographic areas or even continents. The main cause of the escalation in infectious disease severity is mutation brought on by environmental changes including climate change and high levels of hazardous substances released into the atmosphere [9].

A. The Natural Environment :-

In the last three decades, human greed has had a significant negative influence on the most important component influencing how the earth's ecosystem balances. When discussing the global health index, experts have long advised taking action to conserve and preserve the natural environment and resources, including climate change. The leading environmentalists in the world are exposed by "The Lancet," which argues that population growth and the effects of climate change endanger global health, including pandemics and epidemics. The most significant environmental element affecting the transmission of an illness or virus is temperature, which is increasing as a result of global seasonal patterns changing and climate change.

B. Population :-

The world's population increased from an estimated 2.6 billion people in 1950 to 7 billion people in 2011, according to the United Nations. According to [10], there is a strong parallel association

between the danger of pandemic evolution and the growth in population density. With the massive population growth, advances in medical science and technology, urbanization, migration, and a significant shift in fertility rate, there are more people now surviving to be parents. According to studies, the population is projected to reach 9.7 billion people by 2050 and exceed the 11 billion marks by 2100, with the majority of people living in metropolitan areas. According to World Population Prospects 2019 [11], before 2030, India will surpass China as the world's most populated nation, while China's population would decline by 2.2 percent. Asia is home to 61 percent of the world's population, mostly in China and India. Africa, the second-fastest-growing continent in terms of population, is predicted to have doubled by 2050 due to having the greatest population growth rate among key regions. By 2050, it is predicted that fewer people will live in Europe's 55 nations, with some of those numbers dropping by as much as 10-15%. According to [12], the fertility rate in a European nation is lower than the necessary quantity of people (about 2.1 children per woman) to completely replace the population; in the long term, the fertility level for replacement in lasts for many decades. According to World Population Prospects (2019, Revision), the fertility rate is predicted to drop from 2.5 in 2019 to 2.2 by 2050, while life expectancy is predicted to improve from 72.6 years in 2019 to 77.1 years in 2050 for every person. However, it is dependent on both wealthy and developing nations to provide infrastructure and amenities that support sustainable development. People living in urban areas now make up 54 percent of the world's population, up from 34 percent in 1960, according to the Global Health Observatory (GHO) Database of the World Health Organization. According to estimates, the worldwide urban population will increase by 1.5% by 2030.

C. Urbanization :-

Unplanned civilized society's growth is a significant contributor to the rapid spread of many viruses and diseases. Intensely populated colonies that lack room for fresh air may swiftly have a negative influence, turning an endemic into an epidemic. More than half of the world's population lives in civilized settlements known as cities, and the remainder wants to follow suit. These cities are considered breeding grounds for illnesses and viral outbreaks, and they are preparing for "an oncoming humanitarian calamity." The possibility of a species jump is increased by the migration of rural populations and cattle during the last three decades for animal food product supply. The former director of the Centers for Disease Control and Prevention's division of Public Health Preparedness and Response, Ali Khan, said in the book "The Next Pandemic" that "many illnesses emerging from Asia and Africa are having a key relationship between the environment, people, and animals [13]."

D. Health Hygiene :-

Along with food and shelter, clean water, sanitary conditions, and good hygiene are essential needs for which many parts of the globe continue to struggle, weakening impunity and immunity. During any endemic or pandemic, the severity of even a little illness or virus is particularly high for those with a low immune system, who may soon be negatively damaged. The Ebola pandemic broke out in various regions of America and West Africa in 2014–2015, with every American afflicted surviving while the death toll in West Africa was estimated to be over 11,000 people. The World Health Organization implemented specific steps in several regions of Africa, but preparation and prevention were not justified due to poverty, a lack of WASH facilities, weakened immune systems, and a lack of immunizations.

Table 1: World Population history from 1960–2020

Year	Total	Male	Female	Growth rate	Life expectancy	Median age	Density, people/KM2
1960	3032M	1516M	1514M	0.79%	52.58	21.65	23.37
1970	3684M	1846M	1836M	1.70%	58.58	20.53	28.39
1980	4434M	2226M	2205M	1.67%	62.84	21.60	34.18
1990	5281M	2656M	2623M	1.80%	65.43	23.05	40.71
2000	6115M	3078M	3035M	1.53%	67.55	25.33	47.14
2010	6923M	3489M	3431M	1.52%	70.56	27.46	53.36
2020	7754M	3908M	3844M	1.37%	72.92	29.87	59.77

Source: https://populationstat.com/.

Table 2: World population projection from 2021–2050

Year	Total	Male	Female	Growth rate	Life expectancy	Median age	Density, people/KM2
2021	7833M	3948M	3883M	1.33%	73.06	30.10	60.38
2030	8501M	4280M	4218M	1.02%	74.37	31.97	65.53
2040	9141M	4594M	4543M	0.74%	75.65	33.58	70.46
2050	9673M	4856M	4814M	0.52%	76.80	35.14	74.56

Source: https://populationstat.com/.

E. Preparation and Prevention for Epidemics and Pandemic :-

To be prepared, all national and international authorities have compelled humanity to continuously strive to understand behavior and patterns for the prevention and control of epidemics and pandemics [14]. To reduce the likelihood that an endemic or epidemic will develop into a pandemic, it is necessary to investigate it with the following considerations while modifying the sequences based on variables such as the type of infection or virus, population size, geological conditions, and environmental conditions.

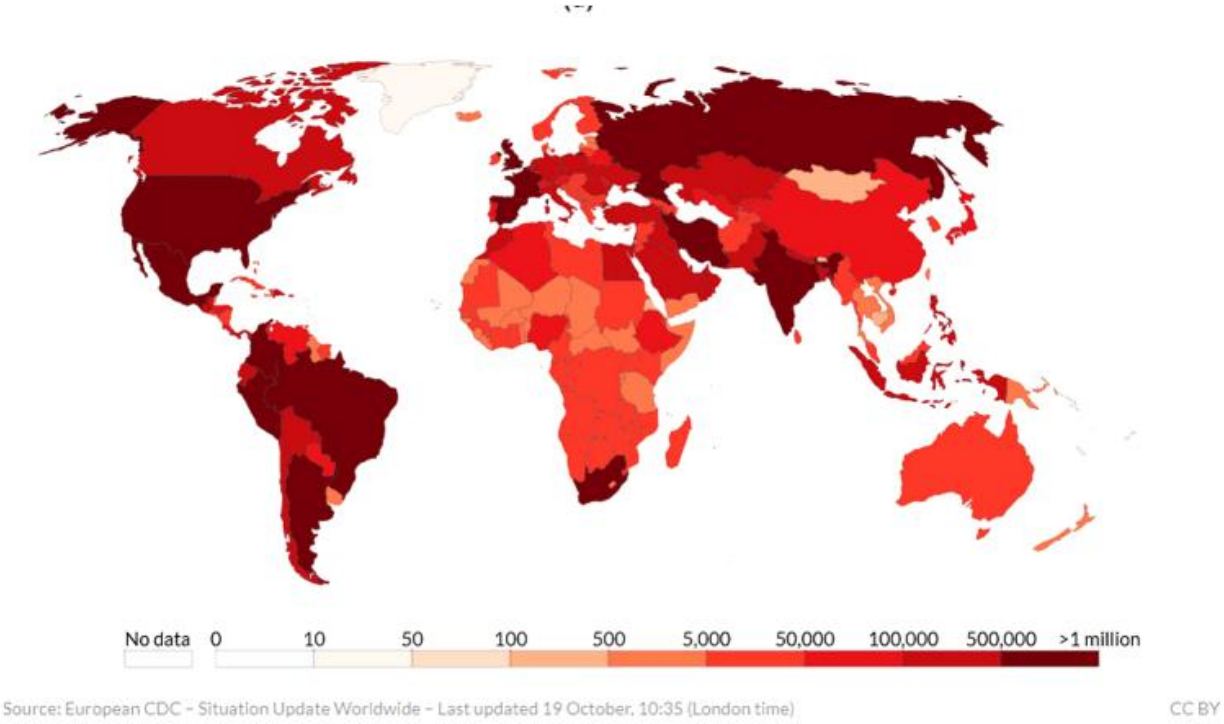

Figure 2: Graph and Map showing the confirmed COVID-19 cases and deaths across the world

IV. HEALTH CARE SYSTEM AND SCIENTIFIC COMMUNICATION :-

Clear and effective communication is required for science communication to raise the general populace's scientific knowledge and disposition by providing them with accurate and genuine information, regardless of language limitations. Technical writing for scientific purposes ranges from research communication to communication for the general public, and it plays a significant role in government agencies, the business world, and education [15]. However, there is a substantial knowledge gap between the public's grasp of the most recent scientific advances and the complexity of research findings and their lack of interpretation in everyday language.

The healthcare system is becoming increasingly complex as a result of testing and trials as a result of the rapid breakthroughs in science and technology. The primary players (medical organizations, healthcare facilities, and pharmaceutical firms) are having difficulties communicating the advantages of these breakthroughs and improvements to the patients. Example: When patients visit a medical facility, clinicians attempt to explain problems and medications—most especially, the precautions—in a straightforward manner. However, patients' limited technical knowledge and often present language hurdles exacerbate the situation.

Significantly, the world's varying degrees of healthcare system complexity is both a problem and an opportunity. Because of worldwide accessibility, people look up all information online before

seeing a doctor or medical facility, and they often do so to verify whether the material they found was accurate or not. Since all digital platforms are linked together, information posted on one platform may instantly be seen on all other platforms across the globe [16]. The internet is flooded with blogs on home cures, health advice, and even drugs for serious conditions, but the veracity of these blogs is sometimes questioned, especially when unreliable material is shared, which might mislead information consumers. Medical science is always doing research and development with an eye on everyone in society's well health, but they are not even aware of this. Health outcomes are mostly caused by regional or global health crises, not healthcare facilities with strong communication strategies and patients with correct scientific knowledge [17].

V. STEPS FOR EFFECTIVE SCIENCE COMMUNICATION :-

Beyond the limitations of conceptual framework and linguistic hurdles, scientific results must be communicated to be understood by society and other areas of science. Even an economist or policy planner has to comprehend how important it is for society to put research results into practice, particularly in times of health emergencies or natural or man-made catastrophes. Suzanne Spitzer asserts that we must combine methodical, academically rigorous scientific procedures with imaginative, participatory stages of science communication tools to affect positive behavior change and boost scientific temperament [18].

A. Team Building from Interdisciplinary Sciences :-

The variety on Earth is immense, ranging from environmental to zoogeographical, regional to linguistic, and educational level to poverty. For the creation of policies or the implementation of management plans, a team of professionals from diverse fields and organizations, such as businesses, universities, or research institutions, can better handle the complexity of the issues at hand. Team members may function as communicators and planners, with a focus on health care systems, to create and explain precautions and preventions in plain language utilizing innovative scientific communication techniques to prepare the communities for the future. Communication strategies are crucial for raising knowledge of safety precautions before the adoption of treatments or vaccinations to lessen the severity and for encouraging health hygiene habits or readiness for any endemics or epidemics.

B. Communication through Science Stories :-

According to Frank Sesno, "precise science must have a narrative" [19], thus it's important to reduce the complexity of science in writing or narration to internalize a message in a variety of formats and reach a variety of audiences. It might be a statement that explains the significance of the pertinent information to be given, a book, a broad article, a brief letter, etc. Governments and scientific advisers are often praised by social scientists for encouraging the participation of science

communicators in the execution of policies and management plans. The goal is to make a succinct, informative statement that highlights key ideas without leaving out any essential ones. Language obstacles must be avoided when communicating via scientific tales, and local communicators should be area language specialists. It is not necessary to publish in high-impact journals or major periodicals to translate research from the lab to society; nonetheless, a tale with a few case studies and graphs, graphics, or flowcharts may make a significant difference.

C. Making the Science Personal :-

Why should society be concerned about science? The end-user of science is the taxpayer, who indirectly finances all research and development efforts. Making science personal is a must, but communicating with other scientists and members of society may be difficult. The focus should be placed on changing the general public's attitude toward science by enlisting the help of different communicators at the local or national level and making the focused results available for maximum use [20]. When discussing the influence of science on daily life in society, communications on complicated scientific solutions must be clear and well-described. To increase scientific temperament as future readiness, it will be helpful to create mental models for each age group and engage with audiences that include local NGOs, teachers, and other local organizations by tying science to daily life and culture. To achieve the target while depoliticizing the issue and making it clear that it's non-threatening and is good for the sustainable development of society, Suzanne Spitzer claims that maintaining dialogues and personal relationships can help communicators avoid any differences with the audience[21]. For instance, the epidemic Polio as a disease was difficult for communities in developing countries to accept, but using communication practices awareness of its effects on children's health and the need for vaccination was conducted with volunteers from local communities to minimize the linguistic problems, making a significant decrease in the number of children affected by Polio globally.

D. Science Communication and People's Participation :-

Many times, research is undertaken without any preceding survey or social conversations and is originally theoretically tied to societal concerns. Inputs from the general public are necessary for science and society's engagement in addressing issues, which inspires researchers to look for both direct and indirect answers that will benefit society. Both parties must communicate effectively, particularly when dealing with advanced scientific issues like endemics and epidemics and technologies like genetic engineering and artificial intelligence. Specific techniques must be used for two-way scientific communication based on the language and age groups for interaction to promote interests and excite to continue the learning process with constant questions from people.

The first step is to educate the public by explaining how science-based solutions can be used practically and how they affect daily life. This will build public support and help identify people who can assist spread the message further across society. Example: For a long time, environmental literature has been accessible, but few communities have adopted it. Guidelines for what to do and what not to do in the area of health hygiene are provided based on scientific findings, including the availability of immunization for many acute illnesses. Millions of contaminated people are discovered each year owing to ignorance and ignorance, nevertheless. Local communities must have communicators or people who can transmit knowledge without language or other barriers, to put scientific ideas into practice.

Using scientific communication to inspire faith in science People must first have faith in scientists before they can believe in science. When explaining science to people, it is important to gain their trust by speaking in their native tongue and providing specifics on research teams, operational methods, the importance of understanding science, and the advantages of science and technology. In actuality, the demand for research in society varies from area to community to address complicated social challenges. Researchers are often concerned with goals and objectives, removing prejudice. It's important to be truthful, open, and solution-focused while communicating with others and disseminating information. The role of a science communicator is to engage in daily life in our nation and communities to bridge social gaps with scientific answers. To ensure that research satisfies humanity's needs without becoming region-centric, a two-way inter-disciplinary approach including members of society is essential due to the communication between science and society.

VI. CATEGORIES OF SCIENCE COMMUNICATION :-

A. Digital Communication :-

Digital platforms are the most widely used technology for information sharing in the twenty-first century. A serious problem brought on by contact across many generations, languages, cultures, and communicators is the daily emergence of new sources of information that lack legitimacy. The intended audience for delivering factual information via news columns, social media sharing, and communicators like journalists and scholars who are connected to the general public and engaged in charitable work. False information is knowingly given to promote website and blog traffic or for any illicit activity, leading the public to doubt scientists and communicators. National and international authorities are necessary to impose responsibility to address the false information and the supplier to counter similar operations, critically analyzing the information that is now accessible and the manner of communication using digital monitoring systems. It is necessary to have science communicators who can provide particular textual or visual papers and proof. Asphyxiating

apprehensions of communicators are prevented through checks, and if any information enters the system, it is authenticated by relevant organizations like the WHO, ICMR, and health ministries in all relevant governments. If the information is found to be false, advisories are immediately issued. The reader may sometimes need some prior knowledge of science, but linguistic hurdles must be overcome by providing documentation in regional tongues. For instance, during a pandemic or epidemic like the swine flu and COVID-19, internet social media like www, Facebook, Twitter, and Telegram play a significant role in raising public awareness by authenticating dos and don'ts [22].

B. Verbal Communication :-

The most efficient two-way mechanism for incorporating individuals in the growth of the scientific temperament in society is verbal communication practice. Verbal interaction with the general public creates a forum for the exchange of information and the necessary supporting documentation to create a firm foundation of trust and advance research. Verbal communication combined with the availability of several digital channels for the sharing of recorded lectures and seminars aimed at a worldwide audience without any regional or linguistic boundaries using digital translation technologies Particularly after global health catastrophes like COVID-19, contributed increased significantly, especially in areas with poor literacy rates.

C. Visual Communication :-

According to estimates, the human brain processes 80 percent of the information it receives in visual mode, making it a highly suitable medium for visual communication. With pictorial communication in the form of images, banners, and presentations, visual communication is a game-changer when it comes to communicating science to those who lack scientific knowledge, are uneducated, or have visual impairments. Visual communication places a strong emphasis on involvement and delivery of relatively straightforward information. The creation of concise and enticing messaging to connect people about answers to complicated global issues like environmental preservation, health hygiene, and during pandemics like COVID-19 to lessen the severity of its effect. An example of a continuing epidemic would be water contamination and infectious illnesses. In the last 20 years, pandemics have become more severe and have affected all seven continents. Visual scientific communication, identified as the sixth SDG to be accomplished by 2030, has the potential to be a game-changing move in achieving the aim of sustainability.

VII. COVID19 AND SCIENCE COMMUNICATION :-

As dangerous as the Middle East Respiratory Syndrome (MERS) coronavirus and chronic, the acute respiratory syndrome coronavirus, COVID-19 affects people with normal cold and fever

symptoms. The theory contends that SARS-CoV-2 is the cause of COVID-19, originating from the cross-species transmission, from an animal reservoir (presumably bats) through an intermediate animal host before infecting humans, even though the origin remains unclear. On January 30, 2020, the first case, which was discovered in Wuhan, China between December 2019 and January 2020, was designated a pandemic with an emergency of international significance. COVID-19 can arise unexpectedly and spread quickly. It may spread by bacteria in the immediate environment of a person who has COVID-19 after touching or using them. The coronavirus's origin is unknown, and despite having a case fatality rate that is 5 to 35 times greater than that of the influenza virus, all nations are working to develop a vaccine. Pandemic COVID-19 procedures such as endotracheal intubation, bronchoscopy, open suctioning, administration of nebulized treatment, manual ventilation before intubation, turning the patient to the prone position, disconnecting the patient from the ventilator, non-invasive positive-pressure ventilation, tracheostomy, and cardiopulmonary resuscitation carry a higher risk of airborne transmission.

VIII. SCIENCE COMMUNICATION DURING AND POST-COVID19 :-

The spread of the coronavirus, also known as COVID-19, has exposed the level of readiness, placed the whole human species in danger, and put tremendous strain on the world's major economies [23]. Globally, the pandemic COVID-19 epidemic affected all health systems and infrastructures. Because of the disastrous effects of COVID-19, society is fearful about its future and its future in the areas of health, finance, education, transportation, and employment. Similar to past occurrences, the COVID-19 epidemic has spread false information and misconceptions about the dangers and potential consequences of the health crisis, making everyone anxious and insecure. Due to the increased emotional apprehension and uncertainty around current and potential dangers, individuals are responding to situations more anxiously and spreading information on various social media platforms without first verifying the accuracy of the information. They have a very disturbing and negative influence on how individuals perceive the material they read or see, without further challenging or confirming its veracity, and when combined with act and fluctuation, they are terrifying. Accurate communication with scientific communicators may help us get through these difficult times. Carl Sagan said, "Science is an endeavor, mostly successful, to comprehend the world, to get a handle on things, to get a grasp on ourselves, to chart a safe path," in his book "The Demon-Haunted World: Science as a Candle in the Dark" [24]. It has been established that factual information conveyed through scientific communication plays a crucial role in influencing positive behavior change and eradicating fear and uncertainty. Reliable scientific information is a proven antidote for pessimism [25].

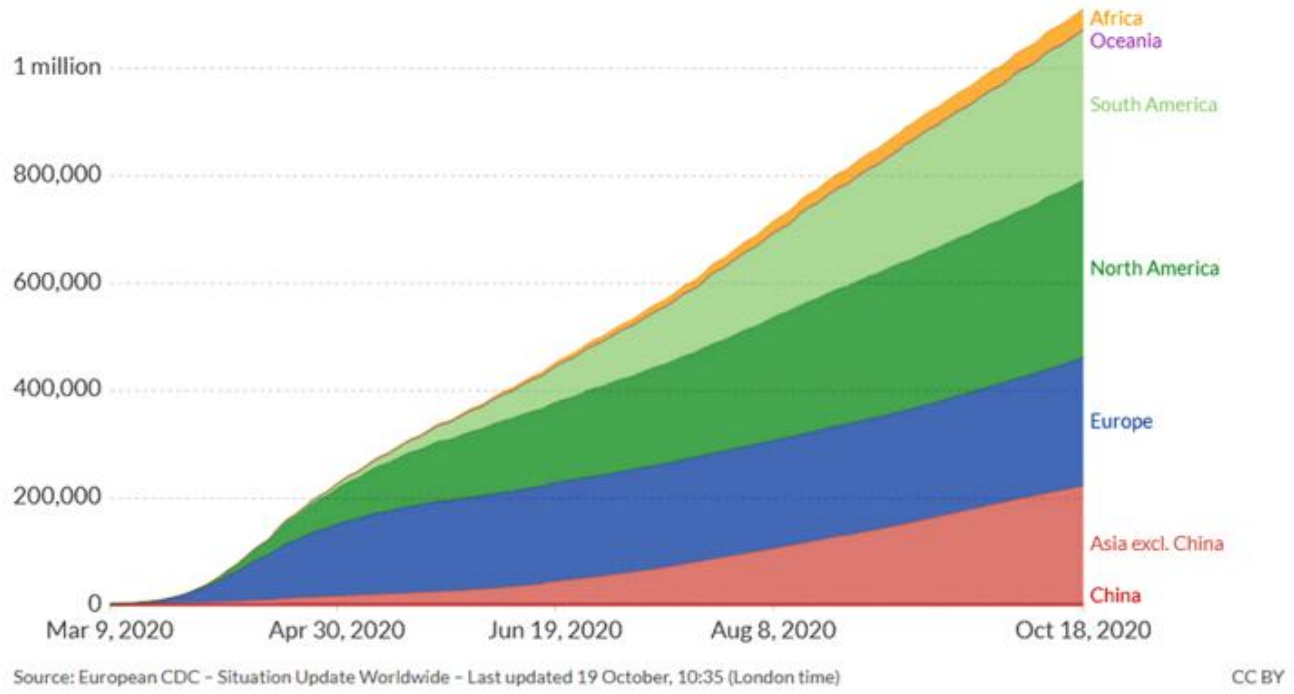

Figure 3: Severity of pandemic COVID19 on different continents

Organizing live press conferences and conversations, disseminating correct information via digital channels in the form of bulletins or updates, and combating false information. Despite the lack of access to labs, many researchers are using scientific data and publishing in open-access journals, review papers, and other brief communications. The data and information gathered from several reliable sources, statistics websites, and direct communication from scientists are valued and supported by many organizations as an essential component for a better-informed public. Any study or research is useless unless it has a direct or indirect impact on the long-term survival of all life on Earth. The material disseminated through scientific communication methods sheds some light on the dangerous shadows cast by anxieties, sickness, and negativity while taking into account the scientific results and COVID-19 projections [26]. Coordination of the policies and measures to solve the problems is crucial and required during pandemics. The most effective tool for raising scientific temperament and promoting knowledge of coronavirus precautions and prevention is social media, which plays a significant role in inspiring people to practice good hygiene, go into lockdowns, share governance limitations, develop in scientific communities, and understand the severity of coronavirus concerning the actual number of cases. Contrarily, during and after the COVID-19 pandemic, understanding scientific communication, data sources, and a message-centered strategy will be emphasized [27].

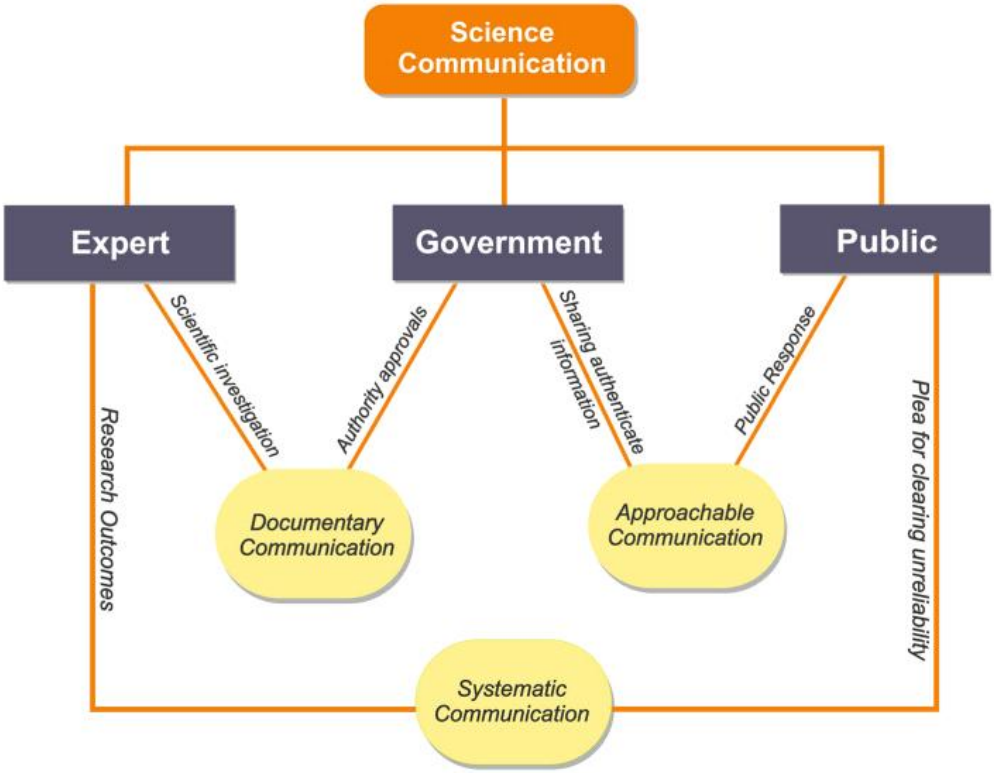

Figure 4: A model defining science communication

IX. CONCLUSION :-

The role of scientific communication requires communicators from a wide range of fields to step up and provide verified facts to the general public. Using scientific communication techniques, it is necessary to spread knowledge, deepen scientific understanding of COVID-19 preventions and precautions, and combat misinformed voices to improve society's view. To minimize direct contact with the general public during epidemics and pandemics, young communicators might play a crucial role in using technological improvements in communication methods to overcome obstacles like area, language, and educational level. With a focus on issues of global concern like health hygiene, WASH, and the environment, the National Council for Science and Technology Communication, an arm of the Department of Science and Technology, the Government of India, is continuously working on science communication in India. This work involves scientists, academicians, and individuals to communicate science to society. According to scientists and governments' predictions, scientific communicators—preferably teams of communicators made up of people from several fields—will become more important in the future for communicating science to society.

More scientific organizations that are prepared to share their knowledge and remove barriers from international worries and concerns like the COVID-19 pandemic are needed. Communities

may help to perpetuate stigma while removing obstacles and finding solutions for the complex problem of community awareness and improving scientific knowledge for health hygiene and positive behavior change by learning from past epidemics and the behavior of the pandemic COVID-19. The epidemic has passed, leaving behind the harm brought about by categorizing individuals from other countries as hazardous, prioritizing ourselves over others, and having a very limited understanding of our societal responsibilities. Instead of adopting an "us versus them" attitude, now is the moment to improve cross-level cooperation and communication to react to regional and global crises. There is a pressing need to construct a shared learning environment across ideologies, with individuals participating in reliable data collection, scientific information being disseminated via communicators among the populace, and resources being made available to generate vaccinations and treatments. The COVID-19 epidemic is a worldwide health emergency that affects every person and requires cooperation from all parties to take precautions and preventative measures for ourselves, our neighbors, and the whole planet. It affected millions of people, claimed the lives of over a million people, and continued to spread nine months after it first appeared. Only communication for improvisation in scientific temperament with social behavior modification and awareness of practical information worldwide may be used to assess the effect during and after the COVID-19 pandemic.

REFERENCES :-

1. Allen T, Murray KA, Zambrana-Torrelio C, Morse SS, Rondinini C, Tucker WT, Ferson S (2008) Strategies for risk communication evolution, evidence, experience. Ann N Y Acad Sci 1128:9–12
2. French S (2012) Expert judgment, meta-analysis, and participatory risk analysis. Decis Anal 9:119–127.
3. Gorvett Z (2018) The mystery viruses far worse than flu. BBC Future. https://www. bbc.com/future/ article/20181101-the-mystery-viruses-far-worse-than-flu. (14 November 2018). Accessed 13 Oct 2020
4. Gupta AK (2004) Origin of agriculture and domestication of plants and animals linked to early holocene climate amelioration. Current Science 87(1):54–59
5. Hanage WP (2017) The next pandemic: on the front lines against humankind's gravest dangers. Emerging Infect Dis 23(12):2123. https://doi.org/10.3201/ eid2312.171137
6. Jarus O (2020) 20 of the worst epidemics and pandemics in history. https://www. livescience.com/worst-epidemics-and-pandemics-in-history.html. Accesses 19 Oct 2020
7. Lindahl JF, Grace D (2015) The consequences of human actions on risks for infectious diseases: a review. Infect Ecol Epidemiol 5:30048. https://doi.org/ 10.3402/iee.v5.30048
8. Matta G, Kumar A (2017) Role of science and communication in health and hygiene: a case study. ESSENCE Int J Env Conser Rehab 8(2):95–101
9. Matta G, Kumar A (2017a) Health risk, water hygiene, science and communication. ESSENCE Int J Env Conser Rehab 8(1):179–186
10. Renn O (2008) Risk governance: coping with uncertainty in a complex world. Earthscan, London, UK

11. Sagan C (1997) The demon-haunted world: science as a candle in the dark. Ballantine Books, U.S.
12. Sanger DE, Lipton E, Sullivan E, Crowley M (2020) The Coronavirus Outbreak: Before Virus Outbreak, a Cascade of Warnings Went Unheeded. The New York Times. https://www.nytimes.com/2020/03/19/us/politics/trump-coronavirus-outbreak. html. Accessed 21 July 2020
13. Savage LJ (1951) The theory of statistical decision. J Am Stat Assoc 46:55–67
14. Sellnow TL, Ulmer RR, Seeger MW, Littlefield RS (2009) Effective Risk Communication: A Message-Centered Approach; Springer: New York, NY, USA
15. Spitzer S (2017) Five Principles of Science Communication. Social Science Space. https://www.socialsciencespace.com/2018/04/five-principles-of-sciencecommunication/. Accessed 13 Oct 2020
16. Steinhardt R (2017) Good Storytelling Moves the Planet Forward. GWTODAY. https://gwtoday.gwu.edu/good-storytelling-moves-planet-forward (10 April 2017). Accessed 13 Oct 2020
17. The Guardian (2020) Humans: the real threat to life on Earth. https://www. theguardian.com/environment/2013/jun/30/stephen-emmott-ten-billion. Accesses 13 Oct 2020
18. Tomar A, Gupta N (2020) Prediction for the spread of COVID19 in India and effectiveness of preventive measures. Science of the Total Environment. https://doi.org/10.1016/j.scitotenv.2020.138762
19. Tucker WT, Ferson S (2008) Strategies for risk communication evolution, evidence, experience. Ann N Y Acad Sci 1128:9–12
20. United Nations Department of Economic and Social Affairs (UNDESA) (2003) PArtnership and Reproductive Behaviour in Low-fertility Countries. ESA/P/ WP. 177. https://www.un.org/en/development/desa/population/publications/ pdf/fertility/reproduction.pdf. Accessed 13 Oct 2020
21. United Nations Department of Economic and Social Affairs (UNDESA) (2019) News: growing at a slower pace, world population is expected to reach 9.7 billion in 2050 and could peak at nearly 11 billion around 2100 (17 June 2019). https:// www.un.org/development/desa/en/news/population/world-populationprospects-2019.html Accessed 13 Oct 2020
22. Wang Z, Bauch Chris T, Bhattacharyya S, d'Onofrio A, Manfredi P, Perc M, Perra N, Salathé M, Zhao D (2016) Statistical physics of vaccination. Phys Rep 664:1–113. https://doi.org/10.1016/j.physrep.2016.10.006
23. WHO 2020. Modes of transmission of virus causing COVID-19: implications for IPC precaution recommendations. (29 March 2020). https://www.who.int/ news-room/commentaries/detail/modes-of-transmission-of-virus-causingcovid-19-implications-for-ipc-precaution-recommendations. Accessed 21 July 2020
24. Xia C, Wang L, Sun S, Wang J (2012) An SIR model with infection delay and propagation vector in complex networks. Nonlinear Dyn 69:927–934. https:// doi.org/10.1007/s11071-011-0313-y
25. Zhang Y, Chen C, Zhu S (2020) Isolation of 2019-nCoV from a stool specimen of a laboratory-confirmed case of the coronavirus disease 2019 (COVID-19)]. China CDC Weekly 2(8):123–124
26. Zhang Liwei, Li Huijie, Chen Kelin (2020) Effective Risk Communication for Public Health Emergency: Reflection on the COVID-19 (2019-nCoV) Outbreak in Wuhan, China. Healthcare 8(1):64
27. Zhu P, Wang X, Li S, Guo Y, Wang Z (2019) Investigation of epidemic spreading process on multiplex networks by incorporating fatal properties. Appl Math Comput 359:512–524

scientific.shweta@gmail.com, 8604879578

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 97-101

Puranic Myths and Fables in R. K. Narayan's novel A Tiger for Malgudi

Dr. Tanu Rajpal
Assistant Professor, Aklank College, Kota, Rajasthan

A Tiger for Malgudi resembles to Puranic beast fable. Beast fables are quite common in Indian Puranas, Mahabharata and even in such later works as Kadambari by Ban Bhatt. The Indian writers found nothing strange or unnatural in these stories. Even the Buddhists and Jain writers often used the animal motif in their teachings. Besides Panchatantra and Jataka Mala, Kathasaritsagara, Hitopadesa, Suka Saptati are some invaluable treasures of Indian literature in which animals have been attributed with the humanly qualities. By making the tiger Raja, the central figure in the story Narayan has followed the Indian tradition of beast story telling.

Indian literature effectively mirrors the ethos of its deep and sympathetic understanding of animals through innumerable stories. Even amongst these, one could pertinently mention are the Hitopadesa, the Pancatantra and Suka Saptati which abound in allegorical references to the animal world. Many stories can be figured out from Indian mythology and oral tradition. The tiger is also associated with Indian mythology and its gods and goddesses. Siva, the god of the ancient non-aryan race of India is clad in a tiger skin and it is a tiger skin which is his seat. Probably, the tiger was the most primitive vehicle of Goddess Parvati. Thus tiger is a mythological creature of Indian oral tradition of folklore. Here in Narayan's novel A Tiger for Malgudi, it is imbued with humanly qualities and acting as a person who is narrating his own life-story of zero to zenith, of exploring his own unexplored self, of realizing his very own unrealized existence with the help of his Guru.

Here we have the myth of cycle of births and release from the bond of Karma. As we see in these lives when Raja newly arrived in circus and looked all the creatures curiously, he said – "I had a glimpse of bear, but no deer, which did not seem to have come to the notice of the captain. So far so good for them, only cursed creatures weighed down with the Karma of their previous lives, seemed to have come to his notice, who wielded his chair and whip like a maniac." (TFM 49)

It was also explained to him by his Master the Guru, that one cannot escape from his previous Karma. He explained the reason of his behind bars in circus in these words – "You probably in a

previous life enjoyed putting your fellow beings behind bars. One has to face the reaction of every act, if not in the same life, at least in another life or a series of lives. There can be no escape from it. Now you have a chance to realize how your prisoners must have felt in those days, when you locked them in and watched them day by day to measure how far you had succeeded in breaking their spirits." (TFM 48)

The writer also attacks on insatiability and greed of human being. According to the scriptures one should be content with what they have. Raja contrasts the lives of brutes with the lives of human being. "Tigers attack only when they feel hungry, unlike human beings who slaughter one another without purpose or hunger." (TFM 117)

Sanskrit, the language of Vedas and Upanishads, is also eulogised by Raja's Master. He says, It's in Sanskrit, in which our scriptures are written, language of the gods. I write only Sanskrit although I know, ten other language including Japanese." (TFM 143). The same ideas about Sanskrit we noticed in The Serpent and the Rope, where Ramaswamy said, "One who possess Sanskrit, possess himself." Sanskrit is a great language. Sir William Jones said about Sanskrit, "The Sanskrit language whatever be its antiquity, is a wonderful structure, more perfect than the Greek, more copious than the Latin and more exquisitely refined than either. . . (149, Hinduism and its Rationalism) When everyone checks the Master to not to open the door of Principal's Chamber where Raja was sitting inside, the Master answer them in a philosophical way with the sloka from Gita. "life or death is in no ones hands . . . That's why God says in the Gita, ' I'm life and death, I'm the killer and the killed . . . Those enemies you see before you, O Arjuna, are already dead, whether you aim your arrows at them or not!" (TFM 142)

As it is propounded in these lines from Bhagavad Gita :-

Tasmat tvam uttistha yaso labhasva
Jitva salrun bhunkshiva rajyam samraddham.
Mayaivaite nihatah purvam eva
Nimitta matram bhava savyasachin. (Bhagvad Gita, chapter 11,33)

Therefore arise for battle, O Arjuna, you will gain fame by conquering the enemy and enjoy a flourishing kingdom. All these warriors have been slain already by me due to previous design you are merely the instrument. (Bhagvad Gita – As it is Chapter 11, 33)

At one more place the Master is preaching the tiger on a very famous doctrine of Indian philosophy Non-Attachment and Sanyama (Control of Senses). The tiger said "My Master Told me, "The eye is the starting point of all evil and mischief. The eye can travel far and pick out objects indiscriminately, mind follows the eye, and rest of the body is conditioned by the mind. Thus starts a chain of activity which may lead to trouble and complication or waste of time, if nothing else; and so don't look at anything except the path." Sometimes I could not resist looking at cattle or other creatures,

which I would normally view as my rightful prize. But I'd immediately avert my eyes when I realized what I was doing." (TFM 155)

Indriyasyaendriyasyarthe raga dvesan vyavasthitau

Tayor na vasam agacchet tau hy asya paripanthinau. (Bhagavad Gita, Chapter 3.34)

Attraction and aversion of the senses to their corresponding sense objects is unavoidable; one should not be controlled by them; since they are obstacles in one's path. Here the master exhorts the tiger, Raja, to live life in a self-righteous way. He is sermonizing on the theory of Self-less Actions Niskama Karma as propounded in the Bhagavad Gita. At many places we can see such mythological harangue by the Master. "Understanding the turmoil in me, my Master said, "Do not crave for the unattainable. It's enough you realization. All in good time. We can not understand God's intentions. All growth takes place in its own time. If you blood on your improvements rather than your shortcomings you will be happier." (TFM 160)

Thus, Raja learnt a lot from his Master besides the art of reckoning or counting the numbers, the time, the present and the past. According to the Master it was the habit of the human being miserable in many ways. We have lost the faculty of appreciating the present living moment. We are always looking forward or backward and waiting for one or sighing for the other, and lose the pleasure of awareness of the moment in which we actually exist." (TFM 161)

Raja wanted to know about the past of his Master, how he happened to become an ascetic, a yogi. At first, the Master was reluctant to tell about his past but afterwards he related his chronicle of life. He was also an ordinary many busy and active in his life but got exhausted with the repetition of the activities so he abandoned everything. The life story of Master is also akin to the mythological story of Siddhartha who renunciated the world to seek the truth. He propounded the cult of Buddhism and became popular as Gautam Buddha. The Master also got exaspented with this world "Where ones lead always throbbed with the next plan, counting tie or money or prospectus – and I abruptly shed everything including (but for a bare minimum) clothes, and fled away from wife, children, home, possession, all of which seemed intolerable. At midnight, I softly drew the bolt of our back door, opening on the sands of Sarayu behind our house at ellemman street, while others slept, and left very" much in the manner of Siddhartha . . . (TFM 161)

When the people heard about Master and Raja-the tiger living together, they started coming to Master for his darsana though he not entertain them to assume himself as a great saint. The people took him as a demi-god who can control even a beast like tiger. The Master also preached them on living with love and fraternity and forbade them to waste their time in fighting. "If you are ready to hate and want to destroy each other, you may find a hundred reason – a diversion of canal water in your field, two urchins of opposite camps slapping each other, rumours of molestation of some woman, even the right to worship in a temple, anything may spark off a fight if you are inclined to

nurture hatred only the foolish waste their lives in fighting . . ." (TFM 165)

Rebirth is also a major tenet of Indian philosophy which is stated again and again is the novel. According to Hindu mythology the body perishes and the soul remains imperishable. The soul travels from one body to another till it seeks the liberation the Nirvana. The Master said to the tiger, "Looking back, I would say that in one of your previous births you might have been a poet and your deeper personality retains that vasana still. Whatever one had thought or felt is never lost, but is buried in one's personality and carried from birth to birth. You must have been a poet, perhaps many centuries ago in the court of a king," (TFM 166)

In the last lines of novel too, the Master promises the tiger to meet in his next birth, "Both of us will shed our forms soon and perhaps we could meet again, who knows? So good bye for the present." (TFM 176)

Thus Narayan has made use of myths and symbols to enrich the story in meaning. His religious fervor becomes clearer with his novel 'A Tiger for Malgudi where he allows salvation even to the tiger. The tiger may be a metaphor of human being or the author may be showing the presence of the same universal self in all creatures. As it is propounded by Krishna in Gita that in every creature of this world there is small ansha (a part) of Brahman.

Adhibhutam ksharo bhavah purushas cadhidaivation

Adhiyajno ham evatra dehe dehabhritam vara (Bhagavad Gita, Chapter 8.4)

O best of the embodied souls, the physical manifestation that is constantly changing is called adhibhuta; the universal form of God, which presides over the celestral gods in this creation is called adhidaiva; I who dwell in the heart of every living being, am called Adhiyajna or the lord of all sacrifices. (Bhagvad Gita As it is, Chapter, 8.4)

Thus, the universe is the cosmic form of the supreme lord and He dwells in the heart of every embodied being. Narayan enunciates three Yogas or ways to God in some his novels: The Guide, The Maneater of Malgudi and A Tiger for Malgudi. The three pathways to God are Karma Yoga, Bhakti Yoga and Jnana Yoga. These are margas or pathway for the conquest of self. They are called Yogas because yoga means yoking one's mind to God or union with God. Jnana-Marga is the pathway of knowledge, wisdom or illumination. It is an intellectual approach as we saw in the life journey of Raja – the tiger and the Master are based on Jnana-Marga. They realized their inner self and got united with supreme soul.

Bhakti-Marga is the way of love, faith or devotion. It is an emotional approach. When we say we must serve God by Bhakti, it really means that we must serve our fellow human beings and creatures. As we saw in The Maneater of Malgudi, where Nataraj saves an elephant from the beast like person Vasu. Natraj is following the Bhakti-Marga. Karma-Marga is the way of action or service. It is a physical approach. This is the way of attaining God by a man doing his daily secular work considering

it as worship. The story of The Guide is based on Karma Yoga where Raju, the Guide remained active in the service of people first as a guide and last as a saint. He sermonized the people of Mangla village to become a Karma-yogi and believe in your Karmas.

Thus his novels depict different means of achieving enlightenment –

Karma Yoga – Self less Actions

Jnana Yoga – Self Knowledge

Bhakti Yoga – Self Surrender

Thus myth and mythology has an undeniable presence in the novels of R.K. Narayan. The core wisdom of Vedic India and the great scriptures have worked as a life force to his fiction. The teachings of Bhagwad Gita, the verses of Ramayana and Mahabharata and other religious legends formed an edifice of strong moral authority on which he erected the wall of great Indian Fiction. He touched the nerve of Indian folk and explored the human psyche with the help of mythological fore groundings. He associated the common place incidents with the uncommon mythical parallels and made the incidents unforgettable.

This was, perhaps, one of the major reasons for his international encomium and acceptance. We may sum up with these lines of Northrop Frye in Words with Powers: Being a second study of the Bible and Literature.

Every human society possesses a mythology which is inherited, transmitted and diversified by literature. (Introduction p xiii)

References :-

1. Ahmed, Ali. "Illusion and Reality: The Art and Philosophy of Raja Rao." Journal of Commonwealth Literature, No.5, pp.16-20.
2. Abrams, M. H. A Glossary of Literary Terms, Madras: Macmillan, 1978.
3. Frye, Northrop. Introduction.Words with Powers: Being a Second Study of the Bible and Literature. San Diego: Harcourt Brace Jovanovich, 1990.
4. Hariharan, M. Hinduism and its Rationalism.Bombay: Bhartiya Vidya Bhawan, 1987.
5. Iyengar, K.R.S. Indian Writing in English. New Delhi: Sterling Publishers, 1990.
6. Narayan, R.K. The Man-eater of Malgudi. New Delhi: Penguin Books, 1962.
7. ---. A Tiger for Malgudi. New Delhi: Penguin Books, 1983.
8. ---. The Guide. Chennai: Indian Thought Publications, 2007.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 102-104

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में बदलते मूल्य

सुनीता रानी
शोधार्थी– पी–एच.डी. हिन्दी, हिन्दी विभाग, गुरु काशी विश्वविद्यालय, तलवंडी साबो, बठिण्डा, पंजाब–151302

सारांश :–

साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से, लेखक नए समाज के मूल्यों को स्थापित, प्रशंसित या विरोधित करते हैं, जिनका सामाजिक और नैतिक प्रभाव होता है। साहित्य मानवीय समाज के मूल्यों के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण प्रभावी माध्यम है। जबकि समाज बदल रहा है और नए स्वरूप में विकसित हो रहा है, साहित्य इस प्रक्रिया को दर्शाता है। मनीषा कुलश्रेष्ठ की कथाएं वास्तविकता के विभिन्न पहलुओं को छूने का प्रयास करती हैं। उनके लेखों में समाजिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक और नैतिक मुद्दों पर जोर दिया जाता है। वे उन मुद्दों को स्पष्टीकरण करती हैं जिन्हें सामाजिक अपेक्षाओं, स्त्री सशक्तिकरण के नए आयामों, लिंगानुभूति और समानता के माध्यम से समझने की आवश्यकता है।

बीज शब्द :– विविधता, मनोवैज्ञानिक, सशक्तिकरण, लिंगानुभूति, प्रगति सांप्रदायिक, परिवेश की विविधता, स्त्री अस्मिता, त्रासदी।

शोध पत्र :–

मनीषा कुलश्रेष्ठ एक चुनिंदा कथाकार हैं जो पूर्वाग्रहों के ढांचे से मुक्त हैं। वे विशेष वाद–विवाद नहीं करतीं और अपनी रचनाओं में एक विषय को नहीं उठातीं। उनकी कहानियों में विविधता प्रकट होती है। वे वर्ण, धर्म, लिंग, वर्ग आदि के बाहर खड़ी होती हैं और मानवता और प्रगति के पक्ष में खड़ी होती हैं। उनकी रचनाओं में सामाजिक सच्चाई दिखती है। मनीषा कुलश्रेष्ठ की कृतियों में आधुनिक मूल्यों का सम्मान होता है और वे पारिवारिक जीवन और नारी–चेतना के साथ–साथ सामाजिक, राजनीतिक और सांप्रदायिक विषयों को भी अच्छी तरह से चित्रित करती हैं। मनीषा कुलश्रेष्ठ ने अब तक पांच उपन्यास (शिगाफ़, शालभंजिका, पंचकन्या, स्वप्नपाश और मल्लिका) और सात कहानी–संग्रह (कठपुतलियां, बौनी होती परछाई, कुछ भी तो रूमानी नहीं, केयर आफ स्वात घाटी, अनामा, गंधर्व–गाथा और किरदार) को संकलन के रूप में दो भागों में प्रकाशित किया है – (रंग–रूप रस–गंध भाग I और भाग II)। हैं। खुद लेखिका अपनी रचना प्रक्रिया के बारे में कहती हैं–" लेखक आम आदमी ही होता है, बस ख़ास उसमें यह है कि जब वह खुद को अभिव्यक्त करता है तो बाकि लोग कहते हैं, 'बस एकदम यही हम भी सोच रहे थे, कहने का ढंग समझ न पा रहे थे।' 'लेखक खास के खोल में बैठ लिख नहीं सकता। ख़ास बन कर, ड्राईंग रूम लेखन करेगा तो वह 'कॉफी टेबल बुक' तो लिख लेगा, लेकिन साहित्य नहीं, जो जन–मानस तक पहुंचे।"

कहानियों के कथ्य में नये प्रयोग होना, अछूते किरदार और परिवेश की विविधता मनीषा कुलश्रेष्ठ के

उत्कृष्ठ लेखन की पहचान है। वे अपनी कहानियों में विषयों की विविधता तो रखती ही है पर उसमें भी मुख्य रूप से उन्होंने स्त्री अस्मिता को एक नयी पहचान देने का प्रयास किया है। लेखिका स्त्री मन की आकांक्षाओं और त्रासदियों के बेहद निकट जाकर उनके जीवन के उन आवाज़ों को अपनी कहानियों में उकेरती हैं, जो सामान्य तौर पर समाज में अनसुनी रह जाती है। 21वीं सदी में हम आधुनिक समाज, आधुनिक भाव–बोध, आधुनिक विचारधारा की बात तो करते हैं पर बात जब स्त्री की आती है, स्त्री देह, स्त्री मनोवेग, स्त्री की अस्मिता की आती है तब हम पाते हैं कि स्त्री की स्थिति कमोबेश आज भी प्राचीन रूढ़िवादी मानसिकताओं से ग्रसित ही है। कहीं न कहीं आज भी उसे देह की आज़ादी नहीं मिली और वह उस कठपुतली की भांति है जिसकी डोरी समाज के हाथों में है। समाज के कुछ उसी रूढ़ हो चुके मानसिकताओं का जिक्र करती नज़र आती हैं मनीषा कुलश्रेष्ठ अपनी कहानियों में।

युवा पीढ़ी :–

मुख्य रूप से यह कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' एक अनूठी कहानी है। जीवन की मार्मिक संवेदनाओं को खुद में समेटे इस कहानी के कई प्रसंग मन को छूते हैं। कहानी नयी और पुरानी पीढ़ी के उत्तरदायित्वहीनता का प्रतीकार करते हुए उसे मार्मिक संवेदनशीलता के धरातल पर उठाती है। इस कहानी में लेखिका रेलयात्रा के दौरान घटी घटना को कहती हैं। कहानी मुख्य रूप से उन तीन युवाओं की है जो युवा पीढ़ी को लेकर बनी जमाने की नजरिये को बदलकर रख देते हैं। आज की पीढ़ी के पहनावे को लेकर जो विचारधारा पुरानी पीढ़ी के मन में बनी हुई है उसका जिक्र कहानी में कुछ इस प्रकार किया गया है– यह हाल है हमारे देश की युवा पीढ़ी का!... "हमारी यंग जेनरेशन पूरी की पूरी ही ऐसी है। कुछ वेस्टर्न कल्चर का असर था, बचा–खुचा टी.वी. चौनलों ने पूरा कर दिया। इन लोगों को इतनी छूट है, हमें कभी थी क्या?"[2] कहानी में युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते तीनों पात्र भले आधुनिक वेषभूषा में हों, उनका व्यवहार भी आधुनिक हो, पर उनके अंदर की मानवता, सहृदयता उनमें मौजूद है जो डॉक्टर दंपति में नहीं।

कहानी में चित्रित है कि एक ओर जहां लेखिका के ट्रेन से टकरा कर प्लेटफॉर्म पर गिर जाने के बाद वही युवा पीढ़ी उनकी देखभाल करते हैं और अपनी ट्रेन भी छोड़ देते हैं जिनसे लेखिका चिढ़ी हुई थी। वहीं दूसरी ओर सिद्धांतों, आदर्शों और मर्यादाओं की दुहाई देने वाले डॉक्टर दंपति अपनी मजबूरी बताकर घटना को अनदेखा कर देते हैं– "हिज वाइफ स्कोल्ड हिम नॉट टू कम विद अस ऐंड ही स्टेड बैक। वी लिटरली प्रेड टू हिम! बट ही टोल्ड आय कांट...गेट डाउन...आय हैव टू रीच टुडे।"[3] अतः कहानी के अंत में कहानीकार दिखाती हैं कि जो लेखिका शुरू में उनसे चिढ़ी हुई थी, वही अब उन्हें उनके गाने सुनने से, साथ बैठने से कोई चिढ़ नहीं हुई। मुख्य रूप से यह कहानी चित्रित करती है कि हाल ही में कई तरह की नवीनताओं और परिवर्तनों के बावजूद, मानवता और सम्मान का मूल्यांकन करना कठिन है।

आज का दौर कुछ ऐसा है जहाँ कई संस्थानों में काबिल व्यक्ति की तुलना में वैसे व्यक्तियों को प्रश्रय दिया जाता है जो चापलूसी करने में माहिर होते हैं। व्यक्ति को उसकी काबिलियत के बजाय वह कितनी चापलूसी कर पाता है इस आधार पर उसे सफलता मिलती है। इस स्थिति को अपनी लेखनी का आधार बनाकर मनीषा कुलश्रेष्ठ 'भगोड़ा' नामक कहानी में दर्शाती हैं। कहानी में दिव्या प्रशांत से पूछती है– "प्रशांत क्या कह रहे हो तुम, मुझे समझ नहीं आ रहा, फिर एयरफोर्स छोड़ी क्यों? यहां इस प्राइवेट फ्लाइंग क्लब में छोटे जहाज उड़ाना सिखा रहे हो, एयरफोर्स छोड़कर?'[4] वर्तमान समय में अधिकतर लोग आगे बढ़ने के लिए अपने से उच्च

अधिकारियों के घर आते–जाते हैं, उनके आगे–पीछे मंडराते हैं, उनकी चापलूसी करते हैं इसे बखूबी दर्शाया गया है। कहानी का केंद्रीय पात्र 'प्रशांत' के साथ किये जा रहे भेदभाव व बुरा व्यवहार केवल इसलिए की वह किसी ऑफिसर की 'जी हजूरी' नहीं करता है तथा जब उसे लगने लगा की वह केवल चापलूसी के बल पर ही आगे बढ़ पायेगा तो उसे उस माहौल से घुटन होने लगती है और तब उसने और उसके दो साथी ने एयरफोर्स की नौकरी बिन बताये छोड़ दी। जिसका परिणाम यह हुआ कि उन्हें 'भगोड़ा' घोषित कर दिया गया। क्योंकि सेना में कोई सैनिक बिना वजह बताये अगर नौकरी छोड़ कर चला जाता है, तो उसे भगोड़ा घोषित कर दिया जाता है।

वरिष्ठ पीढ़ी के बदलते विचार :–

जीवन के समस्त अनुभवों से युक्त बुजुर्ग प्रत्येक समाज के लिए मार्गदर्शक का काम करते हैं। किंतु तत्कालीन समाज का ढांचा कभी–कभी बुजुर्गों के लिए अस्वाभाविक जीवन प्रदान कर देता है। अपने जीवन के अधिकांश वक्त परिवार एवं बच्चों की देखरेख में देने के बावजूद बच्चों के पास मां–बाप को देखने का भी समय नहीं होता प्रेत कामना कहानी के महेश्वर पंत पत्नी की मृत्यु के उपरांत अकेले जीते हैं। पुत्र को अपनी पत्नी की नौकरी की सुविधा के लिए पिता से दूर रहना पड़ा तो बेटी दिव्या को अपने उज्जवल भविष्य की चाह में विदेश में है। पंत की राय में बच्चों को अपने अपने नीड बनाने हैं। अपने एकांत जीवन में बेटे बेटी एवं पौतो की चिंता में तरसते वार्धक्य जीवन का चित्रण प्रेत कामना कहानी में मिलता हैं। ऐसी समय में उनके जीवन में अणिमा का आना जीवन में नई प्रेरणा का उदय था।

'अनामा' कहानी के शंभूदयाल एकांत जीवन बिताने वाले बुजुर्ग आदमी है, किंतु वह अपने जीवन को दुःख में बदलने को तैयार नहीं है। वह अपने परिवेश को सकारात्मक रूप में देखते हैं। घर की सफाई, रसोई का काम आदि करके बाकी समय उद्यान या पढ़ाई में बिताते हैं। अनामा शंभू दयाल के बनाए हुए खाने को देखती हुई सोचती है– "खाना कम चिकनाई से बना अनूठे प्रयोगों वाला खाना था, बैंगन का भरता, जिसमें कच्ची प्याज़, टमाटर थे, बिना तेल के सात्विक नीबू डली दाल और हींग का छौंक लगाकर बनाया कद्दू का रायता था, पतली मुलायम रोटियां।"[5] इसके साथ साथ धार्मिक आस्था साहित्यिक मामलों पर शौक रखने वाला शंभू दयाल आधुनिक बुजुर्गों के एकांत जीवन की समस्या को हल करने वाला पात्र बन गया है।

निष्कर्ष :–

कभी–कभी कथाकार कुछ ऐसी कहानियां पाठकों के समक्ष रख देते हैं जो पाठकों की अंतरात्मा को झकझोर देती हैं। उक्त कहानियों को देखकर कहा जा सकता है कि मनीषा कुलश्रेष्ठ ने अपनी कहानियों में युवा पीढ़ी और बुजुर्गों की सोच को नए रूप में प्रस्तुत किया है।

संदर्भ :–

1. https://ndtv.in/literature/hindi&writer&manisha&kulshreshtha&interview&1468364
2. कुलश्रेष्ठ मनीषा, 'बिगड़ैल बच्चे' (रंग रूप रस गंध), सामयिक प्रकाशन, संस्करण 2022, पृष्ठ संख्या 119
3. कुलश्रेष्ठ मनीषा, 'बिगड़ैल बच्चे' (रंग रूप रस गंध), सामयिक प्रकाशन, संस्करण, 2022, पृष्ठ संख्या 124
4. कुलश्रेष्ठ मनीषा, भगोड़ा (रंग रूप रस गंध) सामयिक प्रकाशन संस्करण 2022, पृष्ठ संख्या 177
5. कुलश्रेष्ठ मनीषा, अनामा (रंग रूप रस गंध) सामयिक प्रकाशन संस्करण 2022, पृष्ठ संख्या 485

ईमेल–sunitabhakar07@gmail.com, मो. नं.–8901212007

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 105-107

प्रवासी महिला लेखन में नारी संवेदना

डॉ. सुनीता देवी
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय, नलवा, हिसार।

हमारी भाषिक परंपरा में नारी, स्त्री, महिला और औरत एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द है। महर्षि यास्क ने अपने 'निरुक्त' में 'स्त्यै' धातु से इसकी व्युत्पति की है जिसका अर्थ माना गया है लज्जा से सिकुड़ना। यास्कीय व्युत्पत्ति पर दुर्गा चार्य ने लिखा है– 'लज्जार्थस्य लज्जेन्तेपी हि ता' अर्थात् लज्जा से अभिभूत होने से औरत का एक पर्याय स्त्री है। सच तो यह है कि ऐसी परिभाषाएं सभ्यता जनित स्थितियों को स्वभाविकता प्रदान करती हैं जहां तक बात है नारी शब्द की तो नारी वैदिक शब्द नहीं है हां नर शब्द का प्रयोग वेद में अवश्य मिलता है। नर शब्द तब स्त्री–पुरुष शब्दों को समाहित कर मानव मात्र का वाचक था। उसी से नर बना जिससे ई प्रत्यय जोड़कर नारी शब्द की व्युत्पत्ति हुई। "नारी शब्द सुनते ही स्त्री हो या पुरुष सबके जेहन में एक हलचल सी होने लगती है। भावनाओं का ज्वार उमड़ने लगता है संवेदनाएं हिलोरे लेने लगती है"।[1] जहां तक प्रश्न है प्रवासी महिला लेखन में नारी संवेदना का तो तसलीमा नसरीन, उषा प्रियवदा सुषम वेदी और उषा राजे सक्सेना आदि का साहित्य नारी के सुख–दुख का अथाह सागर है जिसमें नारी की भावनाएं हिलोरे लेती है। और हमारी ये प्रवासी साहित्यकार अपनी लेखनी से नारी जीवन को सुंदर बनाने, ऊँचा उठाने के लिए सतत् प्रयासरत हैं।

सभ्यता के कितने ही पड़ावों से गुजरता है जीवन और कितने ही पड़ावों से गुजरता है साहित्य और उसकी भाषा।[2] आज जहां भारत में रह रही नई युवा पीढ़ी पाश्चात्य प्रभाव के कारण अंग्रेजी से मोह में अपनी हिंदी भाषा को सम्मान नहीं दे पा रही। वहीं विदेशों में बसे हमारे प्रवासी साहित्यकार हिंदी भाषा की जड़ों को बड़ी आत्मीयता से खींच रहे हैं। प्रवासी हिंदी साहित्यकारों को धन उपार्जन या अन्य किसी उद्देश्य से विदेश में जाना पड़ा था। जाते समय ये धर्म ग्रंथों को साथ ही लेकर नहीं गये अपितु उनके मौलिक अधिकारों व कर्तव्यों का ज्ञान और नैतिक संस्कार लेकर गए थे। इन्हीं इन्हीं की बदौलत ही इनके हृदय में दूसरों का दर्द कुलबुलाहट पैदा कर देता है, ये चौन की नींद नहीं सो पाते और अपनी लेखनी से उस दर्द को उकेरने लगते हैं।

भारतीय मनीषियों के अनुसार नारी अत्यंत पूजनीय है, उसमें एक ऐसी शक्ति है, एक ऐसी समर्थता है जिसका सर्वस्व दूसरों को निवेदित है। एक ओर वह अपनी संतान के लिए अपना सब कुछ न्योछावर करती है तो दूसरी ओर राष्ट्रहित हेतू 'पन्ना' की तरह अपनी संतान का बलिदान भी कर सकती है सावित्री के समान यमदूत से अपने पति को वापस लाने का मादा भी रखती है, लक्ष्मीबाई बनकर तलवार उठाती है तो महाकवि तुलसीदास को भोग से भक्ति की ओर उन्मुख करती है। यही पूजनीय नारी को धीरे–धीरे भोग–विलास का साधन बनती गई। कभी वह वज्रयानियों के हाथों स्वर्ग की सीढी बनी तो कभी संतो के द्वारा कुलटा, कामिनी, सर्पिणी

आदि सम्बोधनो से सम्बोधित हुई। उसका अपना व्यक्तित्व, अपनी इयता अपनी जिंदगी और अपनी विचारधारा पर कोई अधिकार नहीं रहा। "आर्किड एक ऐसा लता–पुष्प है, जो अन्य किसी पौधो का सहारा लेकर जिंदा रहता है। मैं उन लड़कियों को आर्किड कहना पसंद करती हूं जो शादी से पहले पिता की और शादी के बाद पति की पूंछ पकड़कर जिंदा रहना पसंद करती हैं"।

'नदी' उपन्यास में भारतीय पुरुषों द्वारा ब्याहता पत्नी के साथ अमेरिकी परिवेश में किए जाने वाले छल और अन्याय का चित्रण उषा प्रियंवदा ने बड़ा सहजता से साथ किया है। वहीं 'शेष यात्रा' उपन्यास में अमेरिका में रहने वाले पति द्वारा अकस्मात परित्यक्त संघर्ष से भरे जीवन की कथा वर्णित की गई है।[4] उषा प्रियंवदा के स्त्री पात्र अपने अस्तित्व की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का मार्ग अपनाते हैं। स्त्री वह नदी है जो कभी ठहरती नहीं है। वह निरंतर प्रवाहमान है। उनके मार्ग में पत्थर, चट्टान, पहाड़, जंगल, बीहड, दलदल सब आते हैं। 'शादी नामक घटना पुरुष और नारी दोनों के जीवन में घटित होती है',[5] पुरुष एक नारी की तरह ही घर में खाता–पिता, सोता और रहता है तथापि गृहस्थी संभालने की बात नारी के साथ ही बांध रखी है। गृहस्थी संभालना शब्द से खाना पकाना, घर–बार संवारना, धूल साफ करना, बच्चे पालना वगैरह का बोध होता है। किसी भी तरह का कोई तर्क किये बिना ये काम स्त्रियों के जिम्मे सौंप दिए गए हैं। चाहे कोई स्त्री आर्थिक रूप से स्वावलंबी हो या उसका व्यक्तित्व पुरुष से श्रेष्ठ ही क्यों न हो। लेकिन फिर इस समाज में लड़कियों को जिंदा रहने के लिए पुरुष के सहारे की जरूरत होती है जैसे कुछ लताएं पेड़ का सहारा लेकर जिंदा रहती हैं।

पतिव्रता शब्द हमें अक्सर सुनने को मिल जाता है जिसका अर्थ है– पति सेवा को पुण्यव्रत्त के रूप ग्रहण करना पति के अपने आप को पवित्र रखना। लेकिन बड़ी विडंबना है कि 'पत्नीव्रता' जैसा शब्द दुनिया के किसी शब्दकोश में नहीं मिलेगा। पुराने जमाने की स्त्रियां जो पति भक्त और पतिव्रता होने का पालन करती थी, इस युग की स्त्रियां भी कम नहीं है। "कितने संस्कारों को तोड़कर बदल दिया जाता है लेकिन नारी से संबंधित जड़ संस्कारों का विस्तार और विकास हुआ है।" ('पृष्ठ 66 औरत' के हक में)

अमेरिकी प्रवासी साहित्यकार सुषमा वेदी की कहानियों में पारिवारिक और सामाजिक अनुष्ठानों में भारतीय रूढ़िवादी परंपराओं के कारण दांपत्य सम्बन्धों में तनाव दृष्टिगोचर होता है और विवाह टूट जाते हैं।

'धूप' कहानी की लेखिका 'सुदर्शन प्रियदर्शिनी' ने विदेश के वातावरण में असंतुष्ट और विफल दाम्पत्य का वर्णन किया है। भारतीय स्त्री विवाह के पश्चात् अपने पति को स्वार्थ और आत्मकेंद्रित माहौल में ढलते देखती है तो निराश हो जाती है उसके आनन्दमय वैवाहिक जीवन के सपने बिखर जाते हैं। वह अपने पति और स्वय को आकांक्षाओं के मध्य पीसने लगती है। लेखिका ने बड़े ही प्रभावशाली ढंग से कथानायिका की पीड़ा और अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित किया है।

कितना बड़ा विरोधाभास है कि एक ओर तो हमारे देश में महिलाओं को पूजनीय की श्रेणी में रखा गया है वहीं दूसरी ओर हमारे देश को पुरुष प्रधान देश की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। सामाजिक ढांचे के अन्तर्गत सदैव ही महिलाओं को पुरुष से कम आकां जाता है। किसी कालखण्ड में नारियों के गौरव की गाथाएं महिमा मंडित है तो अन्य में अबला दासी रूप को दर्शाया गया है।

एक बार स्त्री स्वतंत्रता के समर्थक एक पुरुष ने अपनी भावी पत्नि से कहा– "शादी के बाद मैं तुम्हें पूरी स्वतंत्रता दूंगा इस वाक्य को सुनकर मेरे सीने में दूंगा शब्द का कांटा चुभा रहा। क्योंकि उस पुरुष ने अपनी

उदारता की आड़ में यह बात बहुत अच्छी तरह समझा दी कि स्वतंत्रता देने का हकदार सिर्फ पुरुष है"। (पृष्ठ 122.) जैसे एक गुलाम की गुलामी सहते–सहते आदतकश गुलामी में आनन्द आने लगता है वैसे ही पुरुष के बंधनों में रहते–रहते जरा सी आजादी मिल जाने पर ही हम औरतें अपने आपको धन्य मानने लगती हैं। हमारे देश में तो नारी की दशा जानवरों से भी बदतर है। कहा भी जाता है कि 'गाय मरे अभागो की और बेटी मरे सभागों की' यानि गाय का मरना दुर्भाग्यपूर्ण है और बेटी अच्छी किस्मत वाले कि मरती है।

कभी–कभी मुझे भी लगता है कि ये ममता, त्याग, समर्पण जैसे शब्द नारी से ही क्यू जुड़े हैं। पुरुषों से इनकी उम्मीद क्यू नहीं की जाती। उनकी परवरिश में ये संस्कार क्यों नहीं डाले जाते क्या ये शब्द जिम्मेवारी के रूप में सौंपकर एक महिला को बंदी बनाने का कदम नहीं है। एक पुरुष सुबह से रात तक घर से बाहर रहता है तो उसे कोई कुछ नहीं कहता। जबकि एक महिला को एक दिन लेट हो जाने पर परिवार में हजार सवाल पूछे जाते हैं कहां थी, क्या कर रही थी, लेट कैसे हुई, समय का ध्यान क्यों नहीं रखा गया आदि–आदि। यहां तक कि पड़ोसी भी उसे खा जाने वाली नजरों से देखते हैं। हिंदू घरानों की बात करें तो फिर भी कुछ हद तक ठीक हैं। मुस्लिम घरानों में तो नारी की दशा अत्यंत सोचनीय है। वह दासता भरा जीवन व्यतीत करती हैं।

'सूरा निसार' के पांचवे पारे (अध्याय) मैं लिखा है कि, "पुरुष नारी का अभिभावक'' (शासक) है क्योंकि अल्लाह ने उसे श्रेष्ठता प्रदान की है। इसीलिए साध्वी स्त्रियां आज्ञाकारिणी होती हैं। और लोकचक्षु के अंतराल में अल्लाह की हिफाजत में अपने सतीत्व और पति के अन्य अधिकारों की सिफारिश करती है। स्त्रियों में जिनकी अवहेलना कि आशंका हो उनको चाहिए कि सदुपदेश दे, समझाएं और इस पर भी बात ना बने तो पीटे 'अब प्रश्न यह है कि नारी एक मनुष्य है या जानवर जिसे पीटने की बात की जाती है अरे सत्य तो यह है कि हमारे समाज में नारी को मनुष्य समझा ही नहीं जाता मनुष्य के पर्यायवाची के रूप में तो शब्दकोश में भी नर पुरुष आदि मिलते हैं। नारी शब्द तो कहीं उल्लिखित ही नहीं है। फिर उसके साथ मानव जैसा व्यवहार हो इस बात की तो उम्मीद करना भी शायद गलत ही है।

संदर्भ :–

1. अप्पादूरै, हरिगंधा, पृष्ठ–8
2. प्रहवासी साहित्यकारों का हिंदी भाषा के विकास में योगदान।
3. औरत के हक में, तसलीमा, तसरीन, पृष्ठ – 21
4. उषा प्रियंवदा – नदी (उपन्यास)
5. औरत के हक में – तसलीमा नसरीन, पृष्ठ– 47
6. औरत के हक में – तसलीमा नसरीन, पृष्ठ– 66
7. औरत के हक में – तसलीमा नसरीन, पृष्ठ–122
8. सुदर्शनी प्रियदर्शिनी – धूप।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 108-113

समकालीन हिंदी नाटकों में पर्यावरण चेतना

निर्देश कुमार
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

"नाटक साहित्यिक अभिव्यक्ति की ऐसी विधा है जो केवल साहित्य ही नहीं उससे अधिक कुछ और भी है, क्योंकि रचना की प्रकिया लेखक द्वारा लिखे जाने पर ही समाप्त नहीं होती, उसका पूर्ण प्रस्फुटन और संप्रेषण रंगमंच पर जाकर ही होता है।"[1] श्रव्य काव्य की शक्तियों को समाहित करने के साथ नाटक दृश्य काव्य की शक्तियों को कलात्मक तरीके से उभारता है। इसीलिए कहा जाता है 'काव्येषु नाटकं रम्यम्'। नाटक को विद्वानों ने दृश्यकाव्य के अंतर्गत माना है।

भारत में नाटकों की एक समृद्ध परंपरा रही है। आचार्य भरत द्वारा रचित 'नाट्यशास्त्र' दुनिया में नाटकों से संबंधित सबसे प्राचीन ग्रंथ है जिसे पंचम वेद की संज्ञा दी जाती है। आचार्य भरत से शुरु हुई नाट्य की परंपरा संस्कृत में भास, शूद्रक, कालिदास, भावभूति से होती हुई हिंदी में प्रवेश करती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र को हिंदी नाटक का जनक कहा जाता है। भारतेंदु के बाद जयशंकर प्रसाद ने हिंदी नाटक को एक नई दिशा दी। 1950 तक आते–आते भारतीय और पाश्चात्य रंग परंपरा पूरी तरह से घुल मिल चुके थे। दो–दो विश्वयुद्ध, बढ़ता हुआ औद्योगिकीकरण, ख़त्म होते मानवीय मूल्य और विकास की आंधी ने मानवजीवन को बुरी तरह से प्रभावित किया। विकास के नाम पर फैल रहा प्रदूषण, ख़त्म होते जंगल और नष्ट होते मानवीय मूल्यों ने हिंदी नाटककारो को एक बार फ़िर से सोचने के लिए विवश कर दिया।

प्रकृति विश्व की अंतिम और सर्वोपरि सत्ता है। 20वी सदी में विकास की इस दौड़ से शुरू हुई पर्यावरण की समस्या आज भारत की नहीं अपितु संपूर्ण विश्व की ज्वलंत समस्या बन चुकी है। मानव के साथ–साथ इस पृथ्वी के सभी जीव–जंतु, पशु–पक्षी, पेड़–पौधे मिलकर एक परिवेश बनाते है जिसे पर्यावरण कहा जाता है। इस परिवेश में सभी आपस में एक दूसरे से जुड़े हुए है तथा इनका जीवन प्राकृतिक नियमों पर आधारित है। परंतु समय के साथ मानव प्रकृति का यह संबंध टूटता जा रहा है। मनुष्य लगातार पेड़–पौधों, जंगलों को काट रहा है, प्राकृतिक सौंदर्य के स्थान पर भौतिक कंकरीट की दुनिया खड़ी कर रहा है।

विज्ञान और तकनीकी ने सम्पूर्ण विश्व को 'ग्लोबल विलेज' में बदल दिया है। जैसे–जैसे मानव प्रकृति के प्रति उपेक्षणीय भाव प्रकट करता जा रहा है वैसे–वैसे मानव के विनाश का रास्ता तेजी से खुलता जा रहा है। जीवन की बहुत सारी भौतिक समस्याओं और अभावों से जूझते हुए मनुष्य को आज प्रकृति और पर्यावरण की समस्याओं से भी जूझना पड़ रहा है, क्योंकि प्रकृति ही अन्ततः मानव जीवन का आधार है। मानव जीवन जितना प्रकृति विमुख होता जाएगा उतना अवसाद एवं कुंठाग्रस्त भी होगा।

भारतीय संस्कृति और समाज में पर्यावरण का मानव जीवन से गहरा संबंध है। भारतीय चिंतन में पर्यावरणीय चिंतन उतना प्राचीन है जितना मानव जाति का इतिहास। इसीलिए कहा जाता है "माता भूमि पुरोऽहं पृथीव्या" भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के संरक्षण को अधिक महत्व दिया गया। यहां मानव जीवन हमेशा मूर्त या अमूर्त रूप से पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, चंद्रमा, नदी, वृक्ष, एवं पशु–पक्षी आदि के साहचर्य के रूप में देखा गया है। सदियों से हम भारतीय जीवन शैली में प्रकृति को देवस्वरूपा मानकर उसका संरक्षण, पूजन करते आये हैं, जैसे :– पीपल, तुलसी जैसे पेड़–पौधों का पूजन, नदियों का पूजन, सूर्य को दिया जाने वाला अर्ध्य आदि। प्रकृति और पर्यावरण अवयवों मे देवत्व की स्थापना एक शाश्वत निधि रही है।

पर्यावरण की समस्या के जड़ों पर जाते है तो पाते है कि इस समस्या का सर्वप्रथम कारण भौतिक एवं आध्यात्मिक मानव मूल्यों के बीच पड़ी दरार है। बाजारवाद के वर्चस्व ने मनुष्य की मनुष्यता को ही लील लिया है। 'धर्म का मूल मानवता का कल्याण है, परंतु पापुलर कल्चर के नाम पर आज खानपान, वस्त्राभूषण के साथ मानव जीवन के अन्य सभी पहलूओं को फैशन ने बदल दिया है। बाजारवाद ने विज्ञापनवाद का सहारा लेकर उसमें हिंसा और उच्छृंखल यौन वृतियों का 'उघड़ा रूप' सांस्कृतिक अवमूल्यन के रूप में हमारे सामने रखा है।

नाटक अपनी जीवंतता कलात्मकता अपनी विशिष्ट शैली के द्वारा जनसमूह और समाज को बहुत ज्यादा और गहराई से प्रभावित करता है। इसीलिए जीवन की अन्य समस्याओं के साथ–साथ प्रकृति और पर्यावरण की समस्या को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करता है। इसीलिए जाने माने निर्देशक, लेखक रंगकर्मी 'रतन थियाम' का मत है– 'मैं कला को जीवन और समाज से अलग नहीं मानता, मुझे पर्यावरण की भी उतनी ही चिंता है जितनी संपूर्ण मानव जाति के भविष्य की। मैं प्रकृति के साथ एक हो जाना चाहता हूँ। नई तकनीकी, मूल्यहीन विज्ञान और मीडिया के सर्वग्रासी राक्षस से फटाफट व्यस्क होती जा रही नई पीढ़ी के बचपन को कैसे बचाया जाए? उनकी सहजता, सरलता और मासूमियत की रक्षा कैसे की जाए? एक रंगकर्मी के रूप में ये तमाम खतरे और मानव–भविष्य के बुनियादी सवाल भी मेरे लिए उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं।'

हिंदी नाटककार अपनी शुरुआत से ही पर्यावरण की चिंता से जुड़े रहे हैं। 1950 के बाद से बढ़ते औद्योगिकीकरण के प्रचलन को लेकर वो सभी से तीखे सवाल जवाब करता रहा है।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने सर्वप्रथम धर्म के नाम पर फैले मांस–भक्षण धर्माडंबर का तीखा विरोध अपने 'वैदिक हिंसा, हिंसा न भवति' नाटक में किया। 'भारत दुर्दशा' में फ़ैशन और बाजारवाद, झूठी दिखावट और फिजूल के खर्च को दिखाया गया है तथा 'अंधेर नगरी' में बढ़ते बाजारवाद गिरते मानवीय मूल्य और पतित होती मानवता को दिखाया है। प्रसाद ने भी प्रकृति के मनोरम दृश्य और खत्म होती ग्रामीण व्यवस्था और प्राकृतिक दोहन को दिखाया है। पंत ने 'शकुन्तला' नाटक में विकास के नाम पर नष्ट किये जा रहे पर्यावरण पर मनुष्य को जागृत करने का प्रयास किया है, तो वहीं 'ज्योत्सना' नाटक में अध्यात्म और वैज्ञानिक विकास के बीच संतुलन बनाकर नवनिर्माण की बात की है।

धर्मवीर भारती अपने बहुचर्चित नाटक' 'अंधायुग' में द्वितीय विश्वयुद्ध में हुए परमाणु हमलों के परिणामस्वरूप हुए पर्यावरणीय नुकसान पर चिंता व्यक्त करते हुए और भविष्य में परमाणु बम के दुष्प्रभावों पर सचेत करते हुए वेदव्यास से कहलवाते है।

'आश्वत्थामा। अपनी कायरता से तू

मत ध्वस्त कर मनुजता को
सूरज मुझ जायेगा
धरा बंजर हो जायेगी'।

मोहन राकेश 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में सृजनात्मक क्षमता का मूल प्रकृति, परिवेश और पर्यावरण को मानते है। कालिदास के माध्यम से वह बताना चाहते है कि मनुष्य अपनी प्रकृति, पर्यावरण से कटकर किस प्रकार निष्प्राण हो जाता है। राजसत्ता और भौतिकता का प्रभाव इंसान को जड़ कर देता है और यह अपनी सृजनात्मकता को खो देता है।

मोहन राकेश कहते हैं –'इंसान ने विस्तार की इन सीमाओं पर पाकर भी मिलना काबू पाया है? प्रकृति के आवेश के सामने वह आज भी निरीह लगने लगा है।' मोहन राकेश ने राजपुरुष दंतुल को कालिदास के माध्यम से पशु हत्या और आखेट को गलत बता वन्य जीव संरक्षण का संदेश दिया है।

कालिदास 'इस प्रदेश में हरिण शावकों का आखेट नहीं होता राजपुरुष तुम बाहर से आए हो..... यह हरिणशावक, इस पार्वत्य भूमि की संपत्ति है, राजपुरुष और इसी पार्वत्य भूमि के निवासी हम इसके सहजातीय है।'

भारत आजादी के बाद से ही चौतरफा विकास की राह पर चल पड़ा और उसके लिए विज्ञान तकनीकी का प्रयोग बहुतायत हुआ। विकास की इस दौड़ में हमने, अंधाधुंध पेड़ काटे, पर्वत तोड़े, नादियों का खनन किया, नए विशाल उद्योग लगाये, नदी बाँध परियोजनाएँ भी शुरु की। विकास की इसी राह के साथ शुरू होता है भौतिक पर्यावरण प्रदुषण जिसमें जल, वायु, मृदा, ध्वनि आदि प्रदूषण तेजी से बढ़ा, जिसे हिंदी नाटककारों ने अपने नाटकों में न केवल दिखाया अपितु समाधान की चर्चा भी की है।

राकेश जैन अपने नाटक 'चिमनी चोगा' में एक टेक्नीशियन के माध्यम से शोर, प्रदूषण के दुष्प्रभाव से जिस तरह मानवीय श्रवण– शक्ति का ह्रास तथा मानव स्वभाव में आए अमूल चूल परिवर्तन का वर्णन किया है।

टैक्नीशियन 'सब धवनि प्रदूषण का कमाल है। इतना हल्ला–गुल्ला होता कि हम अपनी सामान्य श्रवण शक्ति खो बैठते है, सेफ्टीवाल का शोर, हॉर्न का शोर–हवाई जहाज का शोर, गाड़ियों के इंजन का हल्ला।'

इसके साथ ही उन्होंने कई जगह प्रदूषित और विषाक्त होते पानी का उल्लेख करते हुए प्रदूषण का स्वर प्रदान किया है। राजेश जोशी ने अपने नाटक 'सपना मेरा यही सखी' में प्रदूषित और विषाक्त होते पानी का उल्लेख कर जल संरक्षण की मुहिम को उठाया है।

''पहले चार उदम पर थी नदी
अब चार कोस तक नहीं उसका पता
जलती धरती को घंगते सिर पर खाली घड़ा लिए
दूर दूर भटकते हैं पांव
पानी को ढूंढते दूर तक भटकते पांव।''

'हमीदुल्ला' ने अपने नाटको 'संगम संदर्भ' और 'नया मन्वंतर' में वायु प्रदूषण के कारणों पर प्रकाश डालते हुए, इसका प्रमुख कारण फैक्ट्रियों से निकलने वाला धुएँ के साथ वाहनों के धुएँ को भी माना है।

नाटक का पात्र बृहस्पति कहता है– 'जिसने प्रकृति के संसाधनों को लूटकर मानव को प्राण वायु देने

वाले जंगलो को काटकर... विषैला धुंआ छोड़ने वाली फैक्ट्रियां चलाकर, सड़को पर पैट्रोल, डीजल के वाहनों को जुटाकर आकाश में पंछियों की तरह वायुयान उड़ाकर और अणुबम जैसे विनाशकारी अस्त्र–शस्त्र बनाकर घातक प्रदूषण फैलाया।'

राजेश जैन ने अपने नाटक 'कोयला चला हंस की चाल' में धूम्रपान से होने वाले वायु प्रदूषण के दुष्परिणाम का वर्णन मिलता है।

हरित क्रांति के नाम पर देश में कृषि उत्पादन बढाने के लिए नये–नये रासायनिक खाद और कीटनाशकों का प्रयोग तेजी से हुआ। दुष्परिणाम स्वरूप कृषि भूमि बंजर होती जा रही है। उत्पादन तो बढ़ रहा पर जमीन की उर्वराशक्ति नष्ट होती जा है। इस पर भी नाटककारों मे गहन चिंता व्यक्त की है। 'चिमनी चोगा' और 'बांझघाटी में' भवन, बिल्डिंग के बनने से प्रभावित होती फसलयोग्य भूमि तथा विकास की अंधी मारकाट, प्रतियोगिता से कम होती जा रही कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल, इस पर सबका ध्यान आकृष्ट किया है। जगदीश चंद्र माथुर का 'पहला राजा' नाटक समय पर वर्षा न आने पर नष्ट होती उपजाऊ शक्ति पर ध्यान केंद्रित कराता है।

'पृथु :– हरियाली। बहुत खूब उर्वी। हरियाली। हरियाली? ब्रह्मावर्त में अब एक ही रंग है भूरे रंग की मिट्टी, बिना पत्तियों के भूरे वृक्ष धूप और सूखे से मुरझाये भूरे मुख।

उर्वी :– पानी ..?

पृथु :– बरसता है लेकिन टिकता नहीं।

भारतीय संस्कृति एवं समाज नदियों को माँ के समान पूज्य मानता है और उनके बहते जल हो अमृत समान पवित्र और प्राणदायक पर इस विज्ञानवादी सोच ने नदी–नाले, तालाब, पोखर सभी को प्रदूषित कर दिया है। कारखाने से निकलने वाले अपशिष्ट को बिना संशोधित किये नदियो नाले में डाला जा रहा है जिससे तालाब खत्म हो रहे, जल प्रदुषित हो रहा है और पीने योग्य जल का भयानक संकट पैदा हो गया है। लोग घर के प्लास्टिक, अपशिष्ट पदार्थ, कचड़ा, मनुष्यों की लाशों को पानी में बहाकर उसे दूषित कर रहे हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा 'जयवर्धमान' में उस पर चिंता प्रकट करते है।

'वर्धमान' – धर्म के नाम पर हिंसा और यज्ञों में पशुबलि की इतनी अधिकता हो गयी कि रम्त धाराओं से नादियों का पानी भी लाल हो गया। निरीह पशुओं को काटकर उनके चर्म एक नदी में इतने डाले गये कि उसका नाम ही चर्मवती हो गया।

'विज्ञान नाटक' और श्री भगवान सिंह के 'बिन पानी सब सून' नाटक में भी नाटककारों ने जल प्रदूषण के कारण और उसके संरक्षण पर जोर डाला है। नाटककार 'त्रिपुरारी शर्मा' भोपाल गैस त्रासदी पर एक नाटक 'बांझ घाटी' लिखा जिसमें लेखक चिमनियों, फैक्ट्रियों से निकलने वाले धुएं तथा हानिकारक गैसों का स्राव पर्यावरण को प्रदूषित करता है साथ ही अम्लीय वर्षा भी करता है जिससे हरी–भरी भूमि बंजर हो जाती है और चारो तरफ केवल और केवल सुखी बंजर भूमि ही दिखती है। नाटक का एक दृश्य जिसमें लेखक प्रकृति के अपने मूल स्वभाव को त्याग देने का वर्णन है।

'बूंदा :– फूल बचे हैं

फुलिया :– ऐसे ही .....बिना खुशबू के बिछे पड़े हैं जानता है पत्ते भी झड़ गए हैं। जहां पहले घना जंगल

था अब साफ उजाला है खाली डालो आसमान दिखता है। डर सा लगा.....हम भी पार हो जाएंगे, बिना हाथ पांव मारे'।

'चिमनी चोगा' का एक संवाद जो अम्ल वर्षा का प्रभाव बता रहा है।

'टेक्नीशियन : हां, यहां 'एसिड रेंस' होती हैं।

जमादार : ये क्या है?

टेक्नीशियन : एसिड रेंस यानी अम्ल वर्षा, तेजाब बरसता है पानी की तरह, गोरी बर्फ भी काली हो जाती है।

भारत दुनिया का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है। बढ़ती हुई जनसंख्या किसी भी देश, समाज के पारिस्थितिक तंत्र को ख़राब कर देती है और उसका प्रतिकूल प्रभाव मानव समाज पर पड़ता है।

हमीदुल्ला का 'दरिंदे' डॉ. अज्ञात का 'इक्कीसवी सदी' और 'कोई न पराया' जैसे नाटक देश में बढ़ती जनसंख्या के बढ़ते प्रभाव को दर्शाते हैं।..... 'कोई न पराया' नाटक का उत्तमराव कहता है।

'हिंदुस्तान में समस्या औद्योगिकीकरण की नहीं है, समस्या है रोजगार की आबादी की। औद्योगिकीकरण तो इस समस्या का आंशिक हल है।'

रोज–रोज विकसित होती नई तकनीकी, नए

उद्योग, बढ़ती जनसंख्या, इन सबका सबसे ज्यादा अगर प्रभाव किसी पर पड़ता है तो वो है जंगल। भारत में ही नहीं दुनिया के हर देश में पेड़–पौधे जंगलों की अंधाधुंध कटाई हो रही हैं जिससे पृथ्वी का तापमान तेजी से बढ़ रहा है, ग्लेशियर पिघल रहें है। इन समस्यायों को ध्यान में रखकर अनेक नाटककारों ने अपने–अपने नाटकों में इस समस्या को उठाया है। रेखा जैन का 'वन महोत्सव' चंद्र मोहन पापनै का 'चिपको नारी' श्री भगवान सिंह का 'शकुंतला का द्रोह' इन्ही कटते जंगलों की समस्या को आधार बनाकर लिखे गए नाटक हैं जगदीश चंद्र माथुर ने अपने नाटक 'पहला राजा' में यज्ञ के नाम पर काटे वृक्षों का विरोध किया।

'कवष : उन्हें डर है कि ब्रह्मावर्त के मुनि अपने यज्ञों के नाम पर जंगलों को काट रहे हैं। मिट्टी बहकर सरस्वती की धारा को बंद कर रही है। इस तरह बची–खुची खेती भी मटियामेट हो जाएगी।'

उपर्युक्त वर्णन के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी नाटकार शुरुआत से ही प्रकृति के प्रति पूरी तरह सचेत और जागरूक थे। उन्होंने नाटक को केवल मनोरंजन का विषय न बनाकर अपने समकालीन पर्यावरण की समस्या से भी उनको जोड़ा और प्राचीन ऐतिहासिक पात्र और आधुनिक कल्पित पात्रों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया। समकालीन नाटककारों ने ज्ञान, विज्ञान मानवीय मूल्य तथा नष्ट होते पर्यावरण पर गहरी चिंता प्रकट के है। बढ़ता हुआ जल प्रदूषण हो या ध्वनि प्रदूषण, बढ़ती जनसंख्या या बढ़ता औधौंगीकीकरण, नष्ट होते जंगल इन सभी पर्यावरण प्रदूषण के कारणों को अपने नाटकों में मजबूती से उठाया। मानव का शरीर आकाश, जल अग्नि, वायु और मिट्टी से मिलकर बना है इनमें से किसी एक की अधिकता या कमी मानव जीवन को नष्ट कर सकती है। अतः इन सब में संतुलन बनाकर कर हम प्राचीन भारतीय प्रकृति पूजक संस्कृति को अपनाकर मानव जीवन को बचा सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिंदी नाटक नई परख स. रमेश गौतम, स्वराज प्रकाशन (दरिया गंज) नई दिल्ली।

2. रंगमंच नया परिदृश्य : डॉ रीता रानी पालीवाल। लिपि प्रकाशन (दरिया गंज) नई दिल्ली।
3. पर्यावरण और संस्कृति का संकट : डॉ. गोविंद चातक, तक्षशिला प्रकाशन।
4. हिंदी नाटक और पर्यावरण : डॉ. अमित सिंह, हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली।
5. संस्कृति का अर्थ और परिभाषा. दीपक कुमार शोध आलेख, बोहल शोध मंजूषा, नवंबर अंक।
6. आषाढ़ का एक दिन (नाटक)
7. चिमनी चोगा, पृ. 23
8. सपना मेरा, यही सखी (नट रंग से) पृ. 8
9. समय, संदर्भ पृ. 4
10. नया मन्वंतर, पृ. 83
11. पहला राजा, पृ.79
12. जय वर्धमान, पृ.69
13. बांझ घाटी, (दीर्घा से)
14. चिमनी चोगा, पृ. 25
15. पहला राजा, पृ. 50
17. आषाढ़ का एक दिन।

Mob: 8737975961
Gmail- nirdeshtiwarimha@gmail.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 114-115

वर्तमान समय में पर्यावरण विमर्श

डॉ. एस. बी. पाटिल
प्राचार्य अकक्लकूवा, महाराष्ट्र।

प्राचीन काल से भारतवर्ष का चिंतन प्रकृति, पर्यावरण और जलवायु संरक्षण का रहा है। हम प्रकृति को देवी, सूर्य को पिता और वृक्ष को देवता मानते आए हैं। दुनिया की भोगवती प्रवत्ति ने इस संकट को बढ़ाया है वर्षों से भारत में प्रिवेटिव यानी बीमारी का जड़ से इलाज करने पर काम किया जाता रहा है!

हिंदी की अलग–अलग भाषाओं में पर्यावरण पर बहुत सारी किताबें लिखी गई है जो पुस्तक मेले में प्रमुखता से लाई जाती हैं। लोगों को जागरूक करने के लिए संगोष्ठी, सेमिनार, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि भी आयोजित किए जा रहे हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के सबद में भी पर्यावरण संरक्षण की बातें कही गई है, इसलिए गुरुवाणी का भी गायन किया जा रहा है। भारत भी इस समस्या से जूझ रहा है, लगातार जलवायु और मृदा की स्वच्छता में गिरावट दर्ज की जा रही है, बढ़ते ग्लोबल वार्मिंग से भारत भी अछूता नहीं है।

जिसकी वजह से मनुष्य का अस्तित्व ही खतरे में दिखाई दे रहा है। भूमंडलीकरण और उदारीकरण के नाम पर जो विकास का तांडव फैलाया जा रहा हैं। वह विनाश का कारण बन रहा हैं, लगातार आधुनिकीकरण नगरीकरण और औद्योगिकीकरण ने पर्यावरण असंतुलन को सबसे ज्यादा बढ़ाया है।

वर्तमान समय में संपूर्ण विश्व अगर किसी समस्या से सबसे ज्यादा ग्रष्त है तो वह है पर पर्यावरणीय असंतुलन। विश्व के सभी देशों में पर्यावरण विमर्श को खास तवज्जो दी जा रही है। पर्यावरण असंतुलन को कम करने की बात जोर शोर से चल रही है यूं तो इस समस्या को कम करने के लिए विश्व के देशों ने कई कदम उठाए हैं। कई तरह की अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियां हुई है। जिसका पालन करने के लिए राष्ट्र वचनबद्ध है।

अब यह बात दीगर है कि अमेरिका जैसा विकसित देश कितनी इमानदारी से इसका पालन करता है अभी कुछ दिनों पहले अमेरिका ने पेरिस जलवायु समझौते से खुद को यह कहते हुए अलग कर लिया कि इससे अमेरिका को अहित होगा। इस तरह की घटनाओं से पता चलता है कि विकसित देश उपस्थित संकट के प्रति कितनी संवेदनशील है जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति व्यक्ति गैस उत्सर्जन भारत का 20 गुना है।

भारत में प्रति व्यक्ति उत्सर्जन लगभग एक मीट्रिक टन है जबकि सयुंक्त राज्य अमेरिका में यह बीस मीट्रिक टन हैं। दूसरी ओर चीन भी भारत का पांच गुना गैस उत्सर्जन करता है। इसीलिए वह भारत की अपेक्षा उत्सर्जन के लिए ज्यादा जिम्मेदार है। बावजूद इसके इन देशों ने पर्यावरण असंतुलन के लिए अविकसित देशों को जिम्मेदार ठहराते हैं।

जहां खुद को शिक्षित और शहरी मानने वाले तबके में इस समस्या के प्रति बेरुखी दिखाई देती है वही

ऐसी स्थिति ग्रामीण तबके के लोगों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति ज्यादा जागरूकता दिखाई देती है।

वस्तुतः ग्रामीण लोगों का जुड़ाव पेड़ पौधों से ज्यादा होता है इसलिए यह पर्यावरण के प्रति बेहद संवेदनशील होते हैं। कुसुम कुमार का उपन्यास मीठी नीम पूरी तरह वन और पेड़ पौधों की रक्षा तथा वृक्षारोपण के आंदोलन पर ही केंद्रित है। उपन्यास की पात्र ओमना अशिक्षित होने के बावजूद जिस तरह पर्यावरण के प्रति प्रेम प्रदर्शित करती है। समाज के लिए मिसाल बन जाती हैं घर पर लगे वृक्षों की देखभाल करने की वजह से वह प्रसूत पौत्र को भी देखने नहीं जाती।

उपन्यास के आखिर में उसकी बेटी भी यही प्रतिज्ञा लेती है कि आखिर कसम खाती हो कि जहां रहूंगी वृक्षों की रक्षा करूंगी इस तरह का संकल्प अगर समाज के सभी लोग ले ले तो पर्यावरण की समस्या का निदान खुद ब खुद हो जाएगा और पर्यावरणीय संकट से बचा जा सकता है। सम्पूर्ण उपन्यास की कथा पर्यावरण का केंद्र में रहकर बुनी गई है। उपन्यास के पात्रों मना पेड़ पौधों से पुत्र व्रत इसलिए करती है और इसलिए उन पौधों को कभी छोड़कर नहीं जाती है।

ग्लोबल वार्मिंग के बीच एक खूबसूरत प्रेम कहानी पर आधारित रखना मेरी जान रितेश्वर का यह उपन्यास कई महीने पहले बाजार में आ गया था। अमेजॉन पर अब तक इसकी लाखों प्रतियां बिक चुकी है। चिंता जाती है बल्कि पर्यावरण के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा करती है। सरकार ने आदिवासियों की न केवल जल जंगल जमीन छीनी बल्कि उनकी उनकी पूजा करते हैं उनके प्रति तीज और त्योहारों में प्रकृति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष से रूप से शामिल रहती है। इसकी वजह से पर्यावरण सुरक्षित है उन्हें यूं ही पूजीवादी सरकार खत्म करने में तुली हुई है।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 5-6
पृष्ठ : 116-121

आदिवासी पारिस्थितिकी दर्शन :
अनुज लुगुन की कविता के संदर्भ में

अकील शेख़
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़।

शोध-सार :-

समकालीन समय में पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणीय संकट समूचे मानव–सभ्यता के सामने एक विद्रूप एवं विकराल रूप में खड़ा है। अपना देश भारत भी इस समस्या से मुक्त नहीं है, वह भी इस संकट की परिधि में शामिल है। भारत का आदिवासी समुदाय प्रारंभ से ही इस पारिस्थितिकी का हिस्सा रहा है। यह वर्ग प्रकृति के सबसे निकट रहा है। जल, जंगल, जमीन, नदियाँ, पहाड़, झरने, जंगलों में बसे जीव–जंतु एवं अन्य पशु–पक्षी को वह अपने जीवन का अभिन्न अंग तथा अपने और अपने पुरखों की विरासत समझता है। किंतु आधुनिक सभ्यता विकास के नाम पर उन्हें अपनी प्राकृतिक विरासत से पलायन करने के लिए विवश कर रही है। सत्ता एवं सामंत वर्ग के इस षड्यंत्रकारी नीति के विरुद्ध जब आदिवासी समुदाय अपनी आवाज उठाता है तब पारिस्थितिक षड्यंत्रकारी उनकी आवाज को दबाने में कोई कसर नहीं छोड़ता। पर्यावरण की रक्षा के लिए आदिवासी समुदाय को कई तरह के शोषण दमन और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। अनुज लुगुन अपनी कविताओं (उलगुलान की औरतें, ससान दिरी, मैं गीत गाना चाहता हूँ, अघोषित उलगुलान, गुरिल्ले का आत्मकथन, शहर के दोस्त के नाम पत्र, मछुआरा) के माध्यम से प्रकृति के पहरेदार आदिवासी समुदाय की इसी पारिस्थितिकी दर्शन को दिखाने का प्रयास किया है।

बीज शब्द :- 1. आदिवासी समुदाय 2. पारिस्थितिकी दर्शन 3. पर्यावरण शोषण एवं दोहन 4. पर्यावरण असंतुलन 5. पर्यावरण संरक्षण 6. प्रकृति–प्रेम 7. आदिवासी विस्थापन।

प्रस्तावना :-

अनुज लुगुन आदिवासी संवेदना–सरोकारों के एक सशक्त एवं उल्लेखनीय कवि हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि मुंडारी भाषी होने के बावजूद इन्होंने हिंदी में कविताएं लिखना प्रारंभ किया और आदिवासी समस्याओं को एक सीमित दायरे से बाहर लाने का सफल प्रयास किया। 'अनुज लुगुन हिंदी के माध्यम से ही अपनी सृजन की ओर देश का ध्यान खींचा। उनकी कविताओं में केवल झारखंड ही नहीं, पूरे देश का आदिवासी इतिहास झांकता है–सौर्य बोलता है–और संग–संग चलता है चिंतन... दर्शन।'[1] अनुज लुगुन आदिवासी वर्ग के जन–जीवन, उनकी भाषा, संस्कृति, परंपरा, सभ्यता तथा आदिवासी समाज की विभिन्न समस्याओं एवं उनके सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक चेतना को अपनी कविता का विषय बनाते हैं।

आदिवासी समुदाय प्रारंभ से ही प्रकृति के साहचर्य में रहा है। जंगल उनका दार्शनिक और आध्यात्मिक आधार है। इसके बिना आदिवासियों की हर रस्म अधूरी है। जल, जंगल और जमीन आदिवासियों की दर्शनिक माँग है। यह केवल आर्थिक ही नहीं उनका सांस्कृतिक अधिकार भी है। जंगल ही उनकी पहचान है लेकिन इसके बाद भी जंगलों का कटना बंद नहीं हो रहा है। जब जंगल मरता है तो उसके साथ इंसान भी मरता है। दरअसल जंगल आदिवासी के अस्तित्व, विकास, प्रगति तथा उत्तम व्यवस्था के लिए अपरिहार्य है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य यह दिखाना है कि अनुज लुगुन की कविता में किस प्रकार आदिवासी समुदाय प्राकृतिक धरोहर को बचाने के लिए संघर्षरत हैं। आदिवासी प्रकृति की नैसर्गिकता को बनाए रखने के हेतु हर संभव प्रयास करता है। वह जानता है कि प्रकृति ही जीवन है, वही उसका बसेरा है। वह हर विपरीत स्थिति में जीता है, प्रकृति की आपदा को सहता है लेकिन प्रकृति को नष्ट नहीं करता, उसको पालता–पोसता है जबकि मैदानी मनुष्य प्रकृति को नष्ट करता आया है। अनुज लुगुन 'अघोषित उलगुलान' शीर्षक कविता में कहते हैं–

'कोई नहीं बोलता इनके हालात पर
कोई नहीं बोलता जंगलों के कटने पर
पहाड़ों के टूटने पर
नदियों के सूखने पर।'[2]

उपर्युक्त कविता के माध्यम से कवि उन लोगों पर आक्रोश व्यक्त करता है जो पर्यावरण के विनाश पर मौन धारण किए हुए हैं। मनुष्य के इस कुकर्म के प्रति प्रकृति की विवशता और बेबशी पर कवि की दुःखमय उदासी यहाँ साफ दृष्टिगोचर होती है। अनुज लुगुन पारिस्थितिकी संकट के खिलाफ मौन धारण किए उन आदिवासी समुदाय पर भी प्रश्न चिन्ह् लगाते हैं जो पर्यावरण संरक्षण के लिए आवाज़ नहीं उठाते। उन पर आक्रोश व्यक्त करते हुए, वह कहते हैं कि :–

'बोलते हैं लोग केवल
उनके धर्मांतरण पर
चिंता है उन्हें
उसके हिंदू या ईसाई हो जाने की
यह चिंता नहीं की–
रोज कंक्रीट के ओखल में पिसते हैं उनके तलवे
और लोहे की ढेकी में
उठती है उनकी आत्मा?'[3]

भूमंडलीकरण और पूँजीवाद के इस दौर में पर्यावरण का निरंतर दोहन हो रहा है। जंगलों को लगातार काटा जा रहा है। यही कारण है कि एक तरफ जहाँ जैव–विविधता खतरे में है तो वहीं दूसरी ओर इस जैव–विविधता के रक्षक आदिवासी समुदाय भी संकट के दौर से गुजर रहा है। अनुज लुगुन कहते हैं कि पूँजीवाद का ही यह प्रभाव है कि 'आदिवासी क्षेत्र में पूँजी निवेश के साथ ही जल, जंगल और जमीन पर खतरा बढ़ गया है, साथ ही इन्हें सुरक्षित रखने की चिंता भी। देखते ही देखते आदिवासी क्षेत्र 'रेड कॉरिडोर' में तब्दील हो गया। आज हम जिस जल, जंगल और जमीन की बात कर रहे हैं उस स्वर में छत्तीसगढ़, झारखंड, उड़ीसा,

पश्चिम बंगाल और बिहार के आदिवासी क्षेत्रों का स्वर शामिल है।'[4] इसीलिए आदिवासी समुदाय बढ़ते कंक्रीट के जंगल के विरुद्ध अपनी आवाज को बुलंद करते हैं। पारिस्थितिकी सुरक्षा एवं पर्यावरण की हरियाली को बनाए रखने के लिए अघोषित क्रांति में निरंतर संलिप्त रहते हैं :–

'लड़ रहे हैं आदिवासी
अघोषित उलगुलान में
कट रहे हैं वृक्ष
माफियाओं के कुल्हाड़ी से
और बढ़ रहे हैं कंक्रीट के जंगल
दान्डू जाये, तो कहाँ जाये?
करते जंगल में
या–
बढ़ते जंगल में...?'[5]

आदिवासी दर्शन प्रकृतिवादी है। आदिवासी समाज धरती, प्रकृति और सृष्टि के ज्ञात–अज्ञात निर्देश, अनुशासन और विधान को सर्वोच्च स्थान देता है। प्रकृति का अस्तित्व बनाए रखना कितना जरूरी है यह आदिवासी समुदाय से अधिक और कौन जान सकता है। आदिवासी प्रकृति की पूजा करता है, वह प्रकृति में ही जीता है और उसी के लिए बलिदान भी देता है। उन्हें जंगल, नदियों, पहाड़ों और झरनों से जिस तरह प्रेम है उस तरह का प्रेम भला कहाँ देखने को मिलता है, लेकिन गैर–आदिवासी इनकी इस प्रकृति के प्रति कर्तव्य को गंभीरता से न लेते हुए उनकी खिल्ली ही उड़ाते हैं। अनुज लुगुन 'गुरिल्ले का आत्मकथन' शीर्षक कविता में कहते हैं :–

'यह उसके लिए भी एक चुटकुला ही होगा
कि मुझे अपनी मुर्गियों से प्रेम है
जंगली लताओं, फलों और पहाड़ों से प्रेम हैं
मैं सूअरों, बैलों, भैंसों और गिलहरियों के
अचानक खो जाने से सदमे में हूँ।'[6]

देश में नब्बे के दशक में उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण की नीति अपनाई गई, फलस्वरूप आदिवासी क्षेत्र की भौगोलिक पारिस्थितिकी में एक व्यापक बदलाव दिखाई देने लगा है। आज इस क्षेत्र में बाजारवादी ताकतों का प्रभाव बढ़ गया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों और देशी–विदेशी निवेश की मिलीभगत ने आदिवासी क्षेत्र की प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा जमा लिया है। अनुज लुगुन 'शहर के दोस्त के नाम पत्र' शीर्षक कविता में इस षड्यंत्रकारी प्रवृत्ति तथा उनकी लूट–खसोट को बखूबी दिखाया है :–

'हमारे जंगल में लोहे के फूल खिले हैं
बॉक्साइट के गुलदस्ते सजे हैं
अभ्रक और कोयले तो
थोक और खुदरा दोनों भाव से

मंडियों में रोज सजाए जाते हैं
यहाँ बड़े–बड़े बाँध भी
फूल की तरह खिलते हैं
इन्हें बेचने के लिए सैनिकों के स्कूल खुले हैं।'[7]

यह सैनिकों की स्कूल कुछ और नहीं बल्कि वही राष्ट्रीय–बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ हैं जो अपने मुनाफे के लालच में प्रकृति के अस्तित्व को खत्म कर देना चाहती हैं। आदिवासियों की पहचान और संस्कृति को खा जाने के लिए उनके दरवाजे तक जा पहुँची हैं। शहरीकरण, औद्योगीकरण, निजीकरण तथा बहुउद्देश्यीय परियोजना के तहत बाँधों के निर्माण के कारण आज आदिवासी अपने जल, जंगल और जमीनों से विस्थापित होने के लिए विवश है। अनुज लुगुन कहते हैं :–

'कल एक पहाड़ को ट्रक पर जाते हुए देखा
उससे पहले नदी गयी
अब ख़बर फैल रही है कि
मेरा गाँव भी यहाँ से जाने वाला है।'[8]

आदिवासी अपने पुरखों की प्राकृतिक विरासत को बचाना चाहता है। वह इन पहाड़ों की निगरानी करता है, जंगलों और उसमें रह रहे पशु–पक्षियों की रक्षा करता है। वह नदियों, पहाड़ों, पेड़–पौधों और आकाशगंगाओं की छोटी–छोटी टहनियों में जिन्हें उनके पुरखें बना गए हैं उन प्रतीक चिन्हों में अपने जीवन की संभावनाओं की तलाश करता है और उन्हें बचा कर रखना चाहता है। वह इन्हीं से अपने परंपरागत संगीत की राग उत्पन्न करता है तथा अपनी मादर और नगाड़े बजाते हुए गीत जाना चाहता है। वह अपनी नदियों और पहाड़ों के लिए कोई मुआवजा नहीं चाहता बल्कि उसके लिए शहादत पसंद करता है। अनुज लुगुन 'मछुआरा' शीर्षक कविता में कहते हैं :–

'और हमारे लिए सम्मान
किसी नदी या पहाड़ के एवज में
दिया गया मुआवजा नहीं
उसके लिए दी गई हमारी शहादत है।'[9]

जब आदिवासी समुदाय की ज़मीन को जबरदस्ती हड़पकर पूँजीपतियों और उद्योगपतियों को स्थानांतरित किया जाने लगा, ताकि वह उस जमीन से लोहा, कोयला, बॉक्साइट, अभ्रक आदि प्राकृतिक संसाधनों को निकाल सके तब आदिवासी अपनी जान की परवाह किए बगैर प्रतिरोध का रास्ता अपनाकर सत्ता वर्ग की नीति से मुठभेड़ करना शुरू करता है। अनुज लुगुन 'मैं गीत गाना चाहता हूँ' शीर्षक कविता में कहते हैं :–

'उस धरती के लिए बलिदान चाहता हूँ
जिसने अपनी देह पर पेड़ों के उगने पर कभी आपत्ति नहीं की
नदियों को कभी दुखी नहीं किया
और जिसने हमें सिखाया कि
गीत चाहे पंछियों के हों या जंगल के

किसी के दुश्मन नहीं होते।'[10]

आदिवासी समुदाय अपने संस्कृति और परंपरा से बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। प्रकृति के बीच रहना और उसकी रक्षा करना उसके जीवन का एक अहम हिस्सा है। यही कारण है कि वह प्रकृति पर हो रहे अनावश्यक अत्याचार को बर्दाश्त नहीं करता। आदिवासी समुदाय पर्यावरण शोषण को देखकर चुप बैठने वाला नहीं है। चाहे शोषणकारी सत्ता वर्ग का हो या निजी वर्ग का, वह उससे मुकाबला करने के लिए हमेशा तत्पर रहता है। पारिस्थितिकी शोषणकारियों के विरुद्ध वह मर–मिटने के लिए तैयार रहता है। अनुज लुगुन 'मैं गीत गाना चाहता हूँ' शीर्षक कविता में करते हैं :–

'मैं अपने शहीद साथियों को देखता हूँ
अपने भूखे बच्चे और औरतों को देखता हूँ
पर मुझे अफसोस नहीं होता
मुझे विश्वास है कि
वे भी मेरी खोज में इस टीले तक एक दिन जरूर पहुँचेंगे।'[11]

आदिवासी समुदाय के पुरुष ही नहीं बल्कि औरतें भी पारिस्थितिकी शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने में पीछे नहीं हटतीं बल्कि वह पर्यावरण संरक्षण के लिए इस उलगुलान (विद्रोह) में बढ़–चढ़कर हिस्सा लेती हैं। अनुज लुगुन 'उलगुलान की औरतें' शीर्षक कविता में रहते हैं :–

'धरती को सर पर घड़े की तरह ढोए
लचकती हुई चली जा रही हैं
उलगुलान की औरतें
धरती से प्यार करने वालों के लिए
उतनी ही खूबसूरत
और उतनी ही खतरनाक
धरती के दुश्मनों के लिए।'[12]

जल, जंगल और ज़मीन बचाने के फेहरिस्त में आदिवासी समुदाय द्वारा न्यायपूर्ण हस्तक्षेप किया गया और यह हस्तक्षेप आज भी जारी है। आदिवासी समुदाय के लिए 'जल, जंगल, ज़मीन, पहाड़, नदी आदि उनकी जीवन धारा है, जीवनधार है। आदिवासी जंगलों से लेता तो जरूर है बदले में जंगल की रक्षा भी करता है और रचाव–बचाव का दर्शन अर्थात अपनी जरूरतें पूरी होने के बाद दूसरों के लिए चीजों को बचाने का सिद्धांत लिए चलते हैं जिसे उत्तर आधुनिक भाषा में 'सस्टेनेबल डेवलपमेंट' कहा जाता है।'[13] आज जो हमारे सामने पारिस्थितिकी संकट मुँह बाये खड़ा है उसकी रक्षा आदिवासियों के पुरखें सदियों से करते आये हैं और जब जरूरत पड़ी तो उसके लिए संघर्ष भी किया तथा खुशी–खुशी अपना बलिदान भी दिया। अनुज लुगुन 'ससान दिरी' शीर्षक कविता में पारिस्थितिकी संरक्षकों को याद करते हुए कहते हैं कि –

'ये सरकारी चेहरे की तरह पत्थर नहीं है
इनमें जंगल के लिए लड़ते हुए
एक पेड़ की कहानी है

जो धाराशायी हो गया
नफ़रत की कुल्हाड़ी से
एक डाल की कहानी है
जो पंछियों को पनाह देते–देते टूट गयी
एक फूल की कहानी है
जो वसंत के आने से पहले झुलस गया
धरती को बचाने की फेहरिस्त में किया गया न्यायपूर्ण हस्तक्षेप है उनकी
उन्हीं हस्तक्षेपों के साथ जीवित हैं
साखू के पेड़ के नीचे सैकड़ों पत्थर
जो हमें मरने नहीं देते !'[14]

निष्कर्ष :–

अतः पारिस्थितिकी संकट की इस कठिन समय में कवि ने जहाँ एक ओर बड़े समुदाय द्वारा पर्यावरण के प्रति उदासीनता तथा पर्यावरण के शोषण एवं दोहन को उजागर किया है वहीं दूसरी ओर अपनी कविता के माध्यम से आदिवासी समुदाय में व्याप्त प्रकृति प्रेम और पर्यावरण दोहन के विरुद्ध प्रतिरोधात्मक स्वर्ग को बरकरार रखते हुए प्रकृति की सुरक्षा, पर्यावरण संतुलन, संतुलित विकास के माध्यम से आदिवासी वर्ग के साथ–साथ अन्य मानव एवं मानवेतर प्राणी के अस्तित्व को पृथ्वी पर बनाए रखने की अपील की है। उनकी कविता इस हक़ीक़त को बखूबी बयान करती है कि इस धरती की सुरक्षा ही हम सब की सुरक्षा है।

सन्दर्भ :–

1. रमणिका गुप्ता (सं.), कलम को तीर होने दो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. 9
2. वही पृ., 65
3. वही, पृ. 65–66
4. डॉ. उषा नायर, (सं.), पारिस्थितिक संकट और समकालीन रचनाकार, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. 41
5. रमणिका गुप्ता (सं.), कलम को तीर होने दो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. 66
6. वही, पृ. 70
7. वही, पृ. 77
8. वही, पृ. 78
9. वंदना टेटे (सं.), लोकप्रिय आदिवासी कविताएँ, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण–2020, पृ. 66
10. रमणिका गुप्ता (सं.), कलम को तीर होने दो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. 62
11. वही, पृ. 62
12. वही, पृ. 57
13. डॉ. ए. एस. सुमेष (सं.), समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, अमन प्रकाशन, कानपुर, संस्करण–2020, पृ. 108
14. रमणिका गुप्ता (सं.), कलम को तीर होने दो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ. 58–59

मेल आईडी – akilshekh0786@gmail.com, मोबाइल नंबर – 9310946535

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 122-126

'ए.बी.सी.डी.' उपन्यास में भारतीय व पाश्चात्य संस्कृति की टकराहट के कारण टूटते बिखरते रिश्ते

कान्ता देवी
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, राजकीय कन्या महाविद्यालय, सेक्टर–14 गुरूग्राम।

किसी समाज में व्याप्त गुणों के समग्र रूप को संस्कृति कहा जाता है। संस्कृति व्यक्ति के आचार–विचार, खान–पान, साहित्य, कला, वस्तु, नृत्य, गायन आदि से झलकती है। ''संस्कृति शब्द 'कृ' धातु में 'सम' उपसर्ग और 'क्तिन' प्रत्यय जोड़ने से बना है जिसका अर्थ है–परिष्करण, परिमार्जन, सजावट, सुधारना आदि।'' सरल शब्दों में संस्कृति शब्द संस्कार का समानार्थी है। संस्कृति का अर्थ, ''शुद्धि, सफाई, संस्कार–सुधार, मानसिक विकास, सजावट, सभ्यता और शाइस्तगी होते हैं।'' '' संस्कृति शब्द अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं व्यापक है, इसे किसी सीमा में बांधा नहीं जा सकता। इसके अन्दर हमारी परम्पराएँ, नियम, रीति–रिवाज, धार्मिक मान्यताएं निहित हैं। शिक्षा, कला, शिल्प, साहित्य, दर्शन, नैतिकता आदि विधाएँ जिनका संबंध मनुष्य के परिष्कार तथा उदातीकरण से है, संस्कृति के ही अंग हैं। 'संस्कार' शब्द अंग्रेजी भाषा 'रिच्युअल' का पर्याय है।

अतः 'संस्कृति से तात्पर्य है– संस्कार सम्पन्न जीवन। संस्कार व्यक्ति के मन, वचन व कर्म से उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति मन, कर्म, वचन से जो कुछ भी करता है वे सब उसकी संस्कृति हैं। धर्म, आध्यात्मवाद, ललित कलाएं, ज्ञान–विज्ञान, नीति, जीवनशैली, विविध विधाएं व समस्त क्रियाओं में संस्कृति समाहित है। संस्कृति वह पद्धति है जो मनुष्य के मन को परिष्कृत व शुद्ध करते हुए उसे सद्गति की ओर ले जाती है। संस्कृति का केन्द्र बिन्दु मानव है। संस्कृति मनुष्य द्वारा अर्जित की गई विकासोन्मुख प्रक्रिया है जो धर्म, नैतिक मूल्य, दर्शन के माध्यम से व्यक्ति को अवनति से उन्नति की ओर ले जाती है। यह सर्वविदित सत्य है कि भारतीय संस्कृति विश्व की सर्वोत्कृष्ट संस्कृतियों में से एक है। भारतीय संस्कृति को देव संस्कृति भी कहा जाता है। 'विश्व बंधुत्व, वसुधैव कुटुम्बकम' भारतीय संस्कृति का सर्वव्यापी रूप है। संस्कृति व्यक्ति के दोष दूर करके उसे शुद्ध बनाती है। विचार, ज्ञान, भावनाओं, परम्पराओं व संस्कारों के समन्वित रूप को संस्कृति कहते हैं। संस्कृति समाज की आत्मा है, इसका कोई साकार स्वरूप नहीं है; ये एक अमूर्त भावना होती है जो अपने संस्कारों से समाज को जोड़े रखती है। जिस प्रकार आत्मा के बिना शरीर महत्त्वहीन है उसी प्रकार संस्कृति के बिना समाज का कोई वजूद नहीं है। किसी भी समाज के मूल्य, मान्यताएँ, नियम व आदर्श उस समाज की संस्कृति का निर्माण करते हैं।

मनुष्य को इसलिए श्रेष्ठ समझा जाता है क्योंकि उसके पास संस्कृति है जो उसने स्वयं निर्मित की है। पशु को इसलिए हीन समझा जाता है क्योंकि वह संस्कृति विहीन है। यदि मनुष्य से उसकी संस्कृति छीन ली जाए तो वह भी पशु के समान बन जाएगा। संस्कृति मनुष्य में नैतिकता और शिष्टाचार का विकास करके उसे विशिष्ट बनाती है तथा मनुष्य को विकास की ओर उन्मुख करते हुए उसे सद्गति की ओर ले जाती है। इसमें उस समाज के चिन्तन–मनन, आचार–विचार, रहन–सहन, वेशभूषा, बोली, भाषा, कला कौशल आदि का समावेश होता है।

प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति का स्वरूप बहुत उदात्त, आदर्श, सुन्दर, सभ्य व सामन्यवादी रहा है किन्तु बदलते परिवेश के साथ संस्कृति के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। इक्कीसवीं सदी में भारतीय संस्कृति का स्वरूप आधुनिक होने लगा है। आधुनिकता के कारण संस्कृति और धर्म में परिवर्तन आया। संस्कृति के स्वरूप में परिवर्तन के कारण भौतिकतावाद उभरकर सामने आया। विज्ञान और आविष्कार से संस्कृति का नया संस्करण दिखाई दिया। बुद्धिवाद, विवेकीकरण, उपभोक्तावाद, भौतिकतावाद आदि संस्कृति का नया स्वरूप बन गया। भौतिकतावाद की इस अंधी दौड़ में संस्कार विलुप्त व महत्त्वहीन होते जा रहे हैं।

भारत में अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित होने के साथ पाश्चात्य संस्कृति का आगमन हुआ। भारतीय संस्कृति व पाश्चात्य संस्कृति दोनों का सम्पर्क हुआ। दोनों संस्कृतियॉ एक दूसरे से प्रभावित हुईं किन्तु पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव भारतीय संस्कृति पर अत्याधिक पड़ा। भारतीय लोग पाश्चात्य संस्कृति, पाश्चात्य साहित्य, पाश्चात्य विचारकों से परिचित हुए जिसके फलस्वरूप हमारे देश में सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं में परिवर्तन आया। पाश्चात्य संस्कृति के द्वारा भारत में अनेक परिवर्तन हुए। पाश्चात्य संस्कृति का प्रकरण हमारे धर्म, परम्पराओं, संस्कार, रीति–रिवाज, वेश–भूषा, रहन–सहन व सबसे अधिक व्यक्ति के चरित्र पर पड़ा। वर्तमान में व्यक्ति अपनी संस्कृति को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति को अपनाकर गर्वित महसूस कर रहा है। वर्तमान परिदृश्य में पश्चिमीकरण से प्रभावित युवा पीढ़ी भारतीय संस्कृति को अपने विकास में बाधक मानकर उसकी परम्पराओं, मूल्यों व आदर्शों को अपनाना नहीं चाहती। जबकि प्रौढ़ पीढ़ी भारतीय संस्कृति की गुणता, श्रेष्ठता व उच्च विचारों के कारण उससे जुड़े हुए हैं इसलिए हर भारतीय माता पिता चाहते हैं कि उनके बच्चे रहें कहीं भी लेकिन संस्कार उनके भारतीय होने चाहिए।

प्रारम्भ से ही भारतीय संस्कृति बहुत श्रेष्ठ उदात्त व सामन्वयवादी रही है। भारतीय संस्कृति ने विश्व को सभ्यता का पाठ पढ़ाया इसलिए भारत को विश्वगुरु जैसी उपमाओं से अलंकृत किया जा चुका है। 'ए.बी.सी.डी. उपन्यास के पात्र शील और हरदयाल यू.एस.ए. में रहते हैं किन्तु अपनी भारतीय संस्कृति पर उन्हें बहुत गर्व है। शील हमेशा अपनी बेटी शीनी ओर नेहा जो पूरी तरह से पाश्चात्य संस्कृति में ढल चुकी है, उनके सामने भारतीय संस्कृति का गुणगान करने लगती जो शीनी और नेहा को बिल्कुल पसन्द नहीं था इसलिए अक्सर माँ–बेटियों के बीच में झगड़ा होता रहता था। ''माँ बहुत गर्व से बताया करती थी कि हिन्दुस्तानी लड़कियाँ डेट फेट पर नहीं जाती। मौका मिलते ही वह एक आदर्श हिन्दुस्तानी लड़की का खाका पेश करती रहती थी। उसकी हमेशा

यही कोशिश रहती थी कि उसकी लड़कियाँ विलायत में रहते हुए भी शुद्ध हिन्दुस्तानी लड़कियों की तरह पेश आयें। सलवार–कमीज पहनें और हमेशा सिर ढाँप कर रखे। नजर झुकी रहे।'' शील और हरदयाल भारतीय है इसलिए यू.एस.ए. में रहते हुए भी आध्यात्मिक, परम्परावादी है, अपनी संस्कृति से बंधे हुए हैं किन्तु बेटियों का रहन–सहन, खान–पान, व्यवहार, जीवनशैली, आचार–विचार सब पाश्चात्य है। शील और हरदयाल हर संभव कोशिश करते हैं कि बेटियाँ भारतीय संस्कृति को अपनाए। परन्तु बेटियाँ उल्टा सही गलत का नसीहत देकर अपनी माँ को ही गलत ठहरा देती है। शीनी अपनी माँ से कहती है, ''राष्ट्र विरोधी तो तुम हो। यहाँकी नागरिक हो और तुम्हारी लॉयलटी दूसरे देश के साथ है। मैं तो यहाँ पैदा हुई थी यहीं की जीवनशैली अपनाऊँगी।''

प्राचीन काल से हमारे समाज में कुंवारी लड़की का किसी लड़के के साथ दोस्ती करना, संबंध बनाना घर की मान मर्यादा को दाँव पर लगाना था। अगर किसी लड़की का किसी लड़के से संबंध है भी तो उसे बहुत गोपनीय रखा जाता था किन्तु इक्कीसवीं सदी में पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित युवा खुलेआम इस रिश्ते को स्वीकारते हैं। शीनी ने अभी किशोरावस्था में पैर रखा ही था और उसने अपना बॉयफ्रेण्ड भी बना लिया। वह बेझिझक अपने घर में घोषणा करती है कि मैं निक के साथ डेट पर जा रही हूँ जो भारतीय संस्कृति व मर्यादा के प्रतिकूल है, ''पहला झटका उसने तब दिया था जब वह विधिवत् घोषित रूपसे 'डेट' पर गयी थी।'' बेटी शीनी का निक के साथ अकेले 'डेट' पर जाने की खबर से शील बिल्कुल निश्चल हो जाती है। उसे लगा जैसे अब सब खत्म हो गया। शील की नजरों में लड़का–लड़की का अकेले मिलने का मतलब है, उनके बीच में यौन–संबंध बनना जो भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल है जबकि पाश्चात्य देशों में यह आम बात है। ''वह कुछ ऐसे अवसाद में डूबी हुई थी जैसे शीनी ने कुल की तमाम मर्यादाओं का गला घोंट दिया हो और अब डेट से लहूलुहान लौटेगी।''

शीनी के डेट पर जाने से पूरे घर में बवाल मच जाता है। शील और हरदयाल को बेटी के इस निर्णय से गहरा आघात लगता है। शीनी की छोटी बहन नेहा भी शीनी का ही पक्ष लेती है, ''नेहा की हमदर्दी शीनी के साथ थी, उसे लग रहा था कि उसके माता–पिता को पिछड़ी मानसिकता से मुक्ति पानी चाहिए और वे एक मामूली सी बात को लेकर तूमार बाँध रहे हैं। यहाँ के आचार व्यवहार में डेट पर जाना एक सामान्य बात है।'' शील की बस इतनी सी चाह थी कि बेटियों की जीवनशैली चाहे जैसी भी हो बस उनके अन्दर संस्कार भारतीय होने चाहिए। शील अपनी बेटियों को समझाती है, ''जीवनशैली अपनाने से तुम्हें किसने रोका है। मैं तो सिर्फ इतनी सी बात तुम्हारे भेजे में डालना चाहती हूँ कि बेटा यहाँ की चकाचौंध से इतना प्रभावित न हो जाओ कि नारी सुलभ गुणों को भूला बैठो। नारी का सबसे बड़ा आभूषण लज्जा है। शील है। कोमलता है। कन्याओं का तो कौमार्य भी है।'' किन्तु आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य की चकाचौंध में अपनी सभ्यता व संस्कृति को न तो देख पा रही है और न समझना चाह रही हैं। शील के समझाने पर शीनी उल्टा उन पर भड़क जाती है, ''तुम लोगों की सारी नैतिकता चड्डी तक सीमित है। 'चड्डी के भीतर क्या हीरे– जवाहरात रखे हैं?''

भारतीय समाज में बहु बेटियों की इज्जत अमूल्य है, इनकी इज्जत पर कोई दाग लगे ये उनके परिवार

के लिए असहनीय है। पाश्चात्य देशों में शादी से पहले लड़का–लड़की का शादी से पहले यौन संबंध बनाना एक आम बात है परन्तु भारतीय समाज में यह बहुत बड़ा अपराध माना जाता है किन्तु आज भारतीय युवा पाश्चात्य संस्कृति की नकल कर अपनी संस्कृति को ताड़–ताड़ कर रहे हैं। शील अपनी बेटी से कहती है, ''हमारी संस्कृति में तो यह हीरे–जवाहरात से भी ज्यादा मूल्यवान है। हीरा खो जाए तो दुबारा खरीदा जा सकता है, मगर इसे नहीं। यह स्त्री का ऐसा आभूषण है जो खो जाने पर दुबारा हासिल नहीं किया जा सकता।'' इक्कीसवीं सदी में व्यक्ति अपने आपको इतना आधुनिक व स्वतंत्र विचारों का मानने लगा है कि उन्हें भारतीय संस्कृति अर्थहीन लगती है। ''माँ मेरी समझ में नहीं आता कि हिन्दुस्तानी लोग अपनी बेटियों के यौन जीवन के प्रति इतने क्रूर क्यों हो जाते हैं। अपनी बेटी की उम्र तक छह बच्चे पैदा करने वाले माँ–बाप भी बेटी को दिमागी तौर पर चैस्टिटी बेल्ट पहनाते रहते हैं। तुम भी ऐसा ही कर रही हो। जब से मैंने होश संभाला है तुम मुझे शीलरक्षक पेटी ही तो पहनाती रहती हो। यह मानसिक पेटी तो असली पेटी से भी ज्यादा यंत्रणा देती है।''

उपभोक्तावाद के इस दौर में आज युवा वर्गभारतीय सभ्यता व परम्परा को अपनी स्वतंत्रता में बाधक मानकर उसे अपनाने से इनकार कर रही है। शीनी अपनी माँ से कहना चाहती है, ''माँ इसका यही अर्थ निकलता है कि जहाँ खुलापन है, सेक्स है, मौजमस्ती है, वही दौलत है। जहाँ संयम है, वहाँ गरीबी है, जनसंख्या का विस्फोटन है।''

शीनी अंग्रेज निक के साथ शादी करने का फैसला करती है किन्तु शील नहीं चाहती, उसकी शादी अंग्रेज से हो। वह अपनी बेटी की शादी किसी हिन्दुस्तानी लड़के से करना चाहती है। शील कड़े शब्दों में अपनी बेटी को चेतावनी देती है, ''मैं जान दे दूँगी, मगर किसी गोरे से शादी करने की इजाजत न दूँगी।'' किन्तु शीनी अपनी माँ से भिड़ जाती है, मुझे करनी ही नहीं किसी हिन्दुस्तानी से शादी।''

भारतीय संस्कृति में प्रौढ़ पीढ़ी किसी भी शुभ कार्य को करने से पहले पण्डित की सलाह लेती है, यदि घर में कोई परेशानी या समस्या है तो उससे निजात पाने के लिए पण्डित कुछ समाधान बताते हैं। उस समस्या से निपटने के लिए किन्तु आज की युवा पीढ़ी आड़म्बर मानकर उनका मजाक उड़ा रहे हैं। शील और हरदयाल अपनी बेटी की शादी बचाने के लिए पण्ड़ित द्वारा बनाए गए उपाय करने के लिए झील के पास कौआ ढूँढने जाते हैं ताकि उन्हें गुड़ रोटी खिला सकें। पनकौए को कौआ समझ कर गुड़ रोटी खिलाने लगते हैं। छोटी बेटी उनका मजाक उड़ाती है। यह कह कर कि अगर पनकौए को कौआ समझकर खिलाओगे तो आपके शनिदेव भड़क जाएँगे। यह सुनकर शील, हरदयाल को बुरा लगता है, ''तुम हमारी आस्थाओं, मान्यताओं और प्रतीकों का मजाक उड़ा रही हो। तुम्हारा यह व्यवहार शोभनीय नहीं है।''

भारतीय संस्कृति में किसी मेहमान का आदर सम्मान हाथ जोड़कर किया जाता है जबकि पाश्चात्य संस्कृति में गले लगाकर या गाल पर चुम्बन करके किया जाता है, हमारी संस्कृति में गाल पर चुम्बन करना असभ्य माना जाता है। निक का बार–बार गले लगना और चुम्बन लेना शील को पसन्द नहीं। इसलिए शील नहीं चाहती कि उसकी बेटी ऐसे असभ्य व्यवहार कार्य करने वाले लड़के से शादी करें। ''खसमखाना, गल गल

ते चुम्बी लै लेंदा।'' शीनी अपनी माँ की बातें व भारतीय संस्कृति पिछड़ी लगती है इसलिए माँ के ऊपर झुंझला जाती है, ''माँ हर किसी के पीछे सेक्स नहीं होता। कई बार मुझे लगता है हिन्दुस्तानी तो फ्रायड के भी बाप होते हैं।'' हमारी संस्कृति में बच्चों का अपने से बड़ों के साथ इस तरह की असभ्य बातें करना शोभनीय नहीं माना जाता। इस कारण माँ–बेटी के बीच झड़प हो जाती है। फलस्वरूप दोनों के रिश्तों में दरार आ जाती है। शील कहती है, ''कैसे कैंची की तरह जुबान चला रही हो। तुम्हें न बाप की शर्म रह गयी है न माँ की।''

शीनी के 'डेट' पर जाने की खबर से शील जोर–जोर से प्रलाप करने लगती है, ''हाय वह फिरंगी के साथ चली गयी। इसने हम सबका धर्म भ्रष्ट कर दिया।'' शीनी के 'डेट' पर जाने से माँ का ऐसा प्रलाप करना नेहा को वाहियात लग रहा था। नेहा ने गुस्से में माँ से कहा, ''वह 'डेट' पर गयी है, व्याभिचार करने नहीं।''

पाश्चात्य संस्कृति स्वकेन्द्रित है, इसलिए इसके प्रभाव के कारण व्यक्ति स्वकेन्द्रित बन गया है। पाश्चात्य संस्कृति में वशीभूत व्यक्ति स्वच्छंद रूप से जीवनयापन करना चाहता है। व्यक्ति की दुनिया अपने तक ही सीमित रह गयी है जिस कारण रिश्ते नाते काफी पीछे रह गए हैं। इक्कीसवीं सदी में व्यक्ति की पाश्चात्य संस्कृति के प्रति उन्मुक्तता संयुत परिवार के विघटन का कारण बन रही है।

संदर्भ :–

1. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पाँचवां खण्ड, पृ० 243
2. संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, पृ० 844
3. रवीन्द्र कालिया, ए.बी.सी.डी., पृ0 8
4. वही, पृ0 10
5. वही, पृ0 6
6. वही, पृ0 9
7. वही, पृ0 12
8. वही, पृ0 11
9. वही, पृ0 11
10. वही, पृ0 11
11. वही, पृ0 11
12. वही, पृ0 25
13. वही, पृ0 10
14. वही, पृ0 10
15. वही, पृ0 32
16. वही, पृ0 58
17. वही, पृ0 58
18. वही, पृ0 58
19. वही, पृ0 18
20. वही, पृ0 18

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 5-6
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 127-132

लोकतान्त्रिक भारत में अल्पसंख्यकों की समस्याओं का संवैधानिक निराकरण

डॉ. अंजना यादव
सहायक प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, बाबू शोभा राम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर (राजस्थान)

प्रस्तावना :-

भारतीय संविधान हमारे राष्ट्र का अनिवार्य आधार है। यह एक वृहत् सामाजिक–वैधानिक दस्तावेज है जो राष्ट्र के आदर्शों को प्रतिष्ठित करता है और इन आदर्शों की प्राप्ति लिए संस्थाएं और प्रक्रियाओं का प्रावधान करता है। भारतीय संवैधानिकता का स्पष्ट एवं मूलभूत स्वरूप एक सम और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना लोकतांत्रिक तरीकों से सामाजिक–आर्थिक क्रांतियों द्वारा करना है। हमारा संविधान भारत के लोगों के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकारों का वाहक है। इन अधिकारों की क्षमता की शक्ति पोषणता के लिए आवश्यक है कि अल्पसंख्यकों की समस्याओं का भी उचित निराकरण किया जाए तथा जो हमारे संविधान की विशिष्टता के अनुरूप हो।

भारत आदिकाल से विभिन्न संस्कृतियों का संगम रहा है। वैदिक काल, राजतंत्र, कुलीन तंत्र एवम् लोकतंत्र में इसी सांस्कृतिक परम्परा के अनेक आयाम स्थापित किये है। भारतीय लेकतंत्र में सबका साथ, सबका विकास के साथ–साथ देश का विकास सम्भव है। विकास के लिए धर्म, जाति, बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक का वर्ग आधार नहीं होना चाहियें। लोकतन्त्र का मूल उद्देष्य सुरक्षा, संरक्षा एंव औषधि प्रदान करना है। भारत के संघ के परिप्रेक्ष्य में विकास का समीकरण असमान है। आदर्श लोकतंत्र का आशय यह है कि बहुसंख्यंक एवम अल्पसंख्यक अपने अधिकारों से पूर्णतया सन्तुष्ट एंव प्रसन्न हो। अल्पसंख्यक सुरक्षित एंवम् भय मुक्त होकर सामाजिक–सार्वजनिक गतिविधियों में सम्मलित हो सके। अगर अल्पसंख्यक भयभीत, असुरक्षित, सुविद्या विहिन, अधिकार विहिन एंव सम्पन्ति विहिन है तो यह लोकतांत्रिक भारत के समक्ष महत्वपूर्ण समस्याएँ एवम् चुनौतियाँ रहेगीं।

शोध पत्र का विस्तार :-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतान्त्रिक, भारत में, वंचित वर्ग, जाति एवम् सम्प्रदायों के सामाजिक सांस्कृतिक एवम् आर्थिक उन्नयन हेतु भारतीय संविधान का निमार्ण किया गया। तदुपरान्त इसमें अल्पसंख्यकों के हितो से सम्बन्धित अनेक आवश्यक प्रावधान किये गये। लोकतान्त्रिक भारत में मुदालियर आयोग (1952) एंव कोठारी आयोग (1964) के सुझावों के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में 17 कार्यक्रमों को सम्मलित किया

गया। जिसमें से एक कार्यक्रम अल्पसंख्यओं की शिक्षा–व्यवस्था से सम्बन्धित था। नयी शिक्षा नीति (1986) में भी अल्पसंख्यकों की शिक्षा हेतु विषेष व्यवस्था का प्रावधान रखा गया। तथा इन समुदायों को अपने विद्यालय खोलने की सुविधा देने की अनुषंषा की गई। वर्तमान समय में मुस्लिम शिक्षा के लिए मदरसों के अतिरिक्त अल्पसंख्यकों के अनेक सामान्य विद्यालय संचालित है।

लोकतांत्रिक भारत में सन् 1992 सें पिछडी जातियों को आरक्षण प्रदान किया गया है। यद्यपि अधिकाश मुस्लिम जातियाँ पिछडे वर्ग में ही आती है जिनमें शिक्षा का प्रायः आभाव पाया जाता है। आरक्षण मिलने से मुस्लिम समाज को लाभ तो, मिला है, परन्तु अपेक्षा के अनुरूप नहीं। अतः लोकतान्त्रिक भारत में अल्पसंख्यक वर्ग के समक्ष शैक्षणिक दृष्टि से अनेक समस्याएँ एंव चुनौतियाँ दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार अल्पसंख्यकों की शिक्षा से सम्बन्धित कुछ और सार्थक प्रयास किए जाने की महति आवश्यकता है जिससे उनमें शिक्षा का स्तर अन्य समुदायों के समान हो जाए।

संविधान में अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित प्रावधान :–

भारत एक बहुधर्मी, बहु–सांस्कृतिक एंवम् धर्मनिरपेक्ष, प्रजातन्त्रिक राष्ट्र है, जिसमें विभिन्न समाजों, समुदायों, धर्मों एवम् जातियों को मानने वाले विभिन्न व्यक्ति, भारत राष्ट्र में निवास करते है। संक्षेप में इन्हें बहुसंख्यक वर्ग एंव अल्पसंख्यक वर्ग, दो भागों में बाटा गया है। प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में अल्पसंख्यको के मूलभूत अधिकारो को सुरक्षित एंव संरक्षित रखने हेतु तथा अल्पसंख्यक वर्ग का समुचित विकास का अवसर देने हेतु अत्यधिक महत्व रखा गया है।

हमारे संविधान में सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में समानता एवं न्याय के आदर्श आयाम रखे गये है। संविधान में किसी भी वर्ग के विरूद्ध या उसके पक्ष में धर्म, जाति, वंश या जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया गया है। इस आदर्श आयाम की पालना के लिए हमारे लोकतान्त्रिक संविधान ने धर्म के आधार पर आरक्षण समाप्त कर दिया है। जिससे लोकतान्त्रिक राष्ट्र की एकता एंव अखण्डता सुरक्षित रह सके तथा धर्म निरपेक्ष छवि को साकार किया जा सके।

भारतीय संविधान में अल्पसंख्यकों के मापदण्ड :–

लोकतान्त्रिक रूप से 'अल्पसंख्यक' शब्द को परिभाषित करना अत्याधिक जटिल है। परन्तु अल्पसंख्यक समूह का आशय एक ऐसे समूह से है जो अपनी जाति, भाषा अथवा धर्म की बहुमत से भिन्न है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने, संविधान निर्मित करते समय निम्नाकिंत अभिव्यक्ति का उल्लेख किया था।

"The word is uses not merely to lndicate the minority sense of it but also to indicate minorities in the cultural and linguistic sense."

भारत की संविधान निर्मात्री सभा में अल्पसंख्यकों की प्रासंगिक समस्याओं एवं वैचारिक चुनौतियों पर विस्तार पूर्वक विचार किया गया और इनके सम्बन्ध मे लोकतान्त्रिक संविधान में कुछ विशेष प्रावधान किए गये है। किन्तु अल्पसंख्यक की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है। संविधान के अनुच्छेद 29 और 30 में ही अल्पसंख्यक शब्द का उपयोग किया गया है। तथापि अन्य शेष स्थानों पर पिछडे एंव अल्पसंख्यक वर्गो का अप्रत्यक्ष रूप से उल्लेख किया गया है। इसी अभाव के कारण सर्वोच्च न्यायलय ने केरल एजुकेशन बिल 1957 के निणर्य में यह उल्लेख किया था कि कोई भी समूह जिसकी संख्या 50 प्रतिशत से कम हो, वह अल्पसंख्यक

श्रेणी में माना जावे। 50 प्रतिशत के अर्थ को स्पष्ट करते हुये माननीय उच्चतम न्यायालय ने ये निर्णय दिया कि इसे किसी राज्य की कुल जनसंख्या के आधार पर नहीं माना जाय। न्यायालय के निष्कर्ष के अनुसार यदि कोई मामला किसी संघीय विधि से उठता है तो ऐसी स्थिति में अल्पसंख्यक समूह का निर्धारण देश की कुल जनसंख्या के संदर्भ में किया जावेगा।

जनतान्त्रिक भारत में अल्पसंख्यकों का वर्तमान विभेदीकरण :–

लोकतान्त्रिक भारत में संविधन के संदर्भ में भारतीय सामाजिक एंव साँस्कृतिक रूप से अल्पसंख्यको को निम्न तीन वर्गो में विभेदित किया जा सकता है।

1. धार्मिक मान्यताओ एंव परम्पराओं के आधार पर अल्पसंख्यक।
2. भाषा एंव बोली में विविधता के आधार पर अल्पसंख्यक।
3. अनुसुचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, पिछडा वर्ग, एंव अति पिछड़ा वर्ग के आधार पर अल्पसंख्यक।

भारतीय संविधान में अल्पसंख्यको का संरक्षण एवम् विकास हेतु प्रमुख प्रावधान :–

लोकतान्त्रिक भारत में अल्पसंख्यकों के विकास एवं संरक्षण हेतु मुख्य रूप से दो प्रकार के प्रावधानों का निर्धारण किया गया है।

1. सामान्य प्रावधान 2. विशिष्टकृत प्रावधान

सामान्य प्रावधान :–

लोकतान्त्रिक भारत के संविधान में अनेक ऐसे उपबन्ध एवं अनुच्छेद है जो कि अल्पसंख्यकों की सामान्य प्रकृति से सम्बन्धित है किन्तु ये अल्पसंख्यकों के हितो का संरक्षण करने मे तथा उनका विकास करने में विशेष रूप से सहायक है जैसे, अनुच्छेद 14 में विधिक के समक्ष समानता तथा विधिक के समान संरक्षण देने का आश्वासन दिया गया है।

अनुच्छेद 15 में किसी व्यक्ति के जाति, धर्म, सम्प्रदाय या मूल वंश आदि के आधार पर भेद भाव करना प्रतिबन्धित किया गया है।

अनुच्छेद 16 में सार्वजनिक सेनाओं में समान अवसर दिये जाने का प्रावधान किया गया है। समस्त नागरिकों को उनके जाति, धर्म, सम्प्रदाय और आर्थिक पृष्ठभूमि का भेद भाव किए बिना समान राजनैतिक अधिकार, देने के रूप में अनुच्छेद 325 एंव 326 में व्यस्क मताधिकार को स्वीकार किया गया है।

ये समस्त प्रावधान एवं अधिकार बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक दोनों वर्गो के सदस्यों को समान रूप से प्रदान किए गए है इनके द्वारा सामाजिक, साँस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा शैक्षणिक क्षेत्रों में समानता लाने का सार्थक प्रयास किया गया है।

विशिष्टीकृत प्रावधान :–

लोकतांत्रिक भारत के संविधान में उपर्युक्त सामान्य उपबंधों एवं अनुच्छेद के अतिरिक्त अल्पसंख्यक वर्गो के लिए कुछ विशिष्टीकृत प्रावधान भी किए गए है, जिनके द्वारा अल्पसंख्यकों की विशिष्ट समस्याओं को दूर करके समाज के सामान्य स्तर तक लाने के लिए आवश्यक विशेष सुविधाएँ देने की व्यवस्था की गई है, जो निम्नवत है।

1. भाषा, लिपि, एंव संस्कृति के सुरक्षित रखने का अधिकार – अनुच्छेद 29 भारत रहने वाले समस्त

नागरिकों के किसी भी जाति, वर्ग को जिसकी अपनी विशिष्ट भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे संरक्षित रखने का प्रावधान किया गया है।

2. राज्य द्वारा वित्त पोषित शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश का अधिकार अनुच्छेद 29 (2) में उपबन्ध के अनुसार राज्य निधि से सहायता प्राप्त करने वाली शैक्षणिक संस्थाओं में केवल जाति धर्म, भाषा, संस्कृति या वंश के आधार पर प्रवेश पाने हेतु किसी भी नागरिको को वंचित नहीं किया जायेगा।

शैक्षणिक संस्थाओं की परम्परागत स्थापना एवं प्रशासन का अधिकार :–

अनुच्छेद 30(1) में उपबन्ध के अनुसार भाषा या धर्म के आधार पर सभी अल्पसंख्यक वर्गो को अपनी रूचि एंवम् प्राचीन मान्यताओं और परम्पराओं की शिक्षा देने हेतु शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना तथा स्वंय प्रबंधन का अधिकार दिया जायेगा।

अल्पसंख्यक अधिकार के संधर्भ में 44 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम :–

भारतीय संविधान के 44 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा मूल सम्पति के अधिकार को मौलिक अधिकारों में से समाप्त कर दिया गया है। जिससे अनुच्छेद 19 (1) एवं (8) और अनुच्छेद 31 को हटा दिया गया है। लेकिन इसके परिणामस्वरूप अल्पसंख्यकों को अपनी रूचि अनुसार शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना एंव प्रशासन के अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, इसे संरक्षित किया गया है।

राज्य सरकार द्वारा अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं की सहायता से संम्बन्धित प्रावधान :–

धर्म या भाषा के आधार पर किस अल्पसंख्यक वर्ग की शैक्षणिक संस्था के विरूद्ध राज्य सरकार द्वारा सहयता देने में कोई विभेद नहीं किया जायेगा, जिसे अनुच्छेद 30 (2) के उपबन्ध द्वारा दर्शाया गया है।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग :–

भारतीय लोकतांत्रिक दृष्टि से अल्पसंख्यक आयोग सन् 1978 से ही अल्पसंख्यक हितो के लिए निरतंर कार्यरत रहा है, जिसे मई 1992 में राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम पारित करके संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है, इस अधिनियम में आयोग के अंतर्गत 1 अध्यक्ष सहित 6 सदस्य होंगे, जिनकी नियुक्ति केंद्रित सरकार द्वारा निर्धारित की जाएगी। अध्यक्ष सहित 5 सदस्य अल्पसंख्यक समुदाय के लिए जाएगे। आयोग के सदस्यों की अवधि 3 वर्ष निर्धारित रहेगी। आयोग को प्रशासनिक एवं तकनीकी सहायता भारत सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय से प्राप्त होगी। आयोग द्वारा अल्पसंख्यक वर्ग के विकास की प्रगति का मूल्यांकन किया जाएगा तथा इनके हितों की सुरक्षा हेतु प्रभावी कार्यक्रमों की सिफारिश की जाएगी।

उपर्युक्त प्रावधानों को दृष्टिगत करने पर हम समझ सकते है कि संविधान निर्माता अल्पसंख्यक समुदाय की विशिष्ट समस्याओं से भली–भांति परिचित थे, तथा इन समस्याओं को दूर करने में गहन रूचि रखते थे। अल्पसंख्यक वर्ग को समाज में सम्मान पूर्ण स्थान प्रदान करना चाहते थे, इसलिए संवैधानिक उपबंधों में अल्पसंख्यकों के अधिकारों को सुरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए अपने दायित्वों का निर्वहन किया गया।

लोकतांत्रिक भारत में अल्पसंख्यक वर्गो हेतु सार्थक प्रयास एंव विकास कार्यक्रम :–

स्वतंत्र भारत में 75 वर्ष पश्चात भी अल्पसंख्यक वर्ग में मुस्लिम समाज के सामाजिक उत्थान के लिए विभिन्न सार्थक प्रयास एवं विकास कार्यक्रम चलाए गए है, किन्तु इसके उपरांत भी वर्तमान समय में उनका

आर्थिक स्तर बहुत निम्न है, उनकी शिक्षा की भी लगभग यही स्थिति है अर्थात् मुस्लिम समाज को पर्याप्त आर्थिक एवं शैक्षिक सहायता प्राप्त नहीं हो पाई है जिसके कारण प्रत्येक स्तर पर बहुसंख्यक वर्ग एवं अल्पसंख्यक वर्ग में वर्तमान संदर्भ में असमानता की स्थिति विद्यमान है।

अल्पसंख्यक वर्गो की समाजिक एंव आर्थिक स्थिति को देखकर उनकी समस्याओं का निकारण करने और समय की मुख्य धारा में लाने के उद्देश्य से लोकतांत्रिक भारत में अनेक योजनाए चलाई जा रही है। इन योजनाओं एंव कार्यक्रमों के निर्धारण, क्रियान्वयन, प्रबंधन, प्रशासन, एंव समन्वय के लिए अल्पसंख्यक कल्याण विभाग बनाया गया है।

लोकतांत्रिक भारत में अल्पसंख्यक वर्गो के लिए विभिन्न कार्यक्रमों के उद्देश्य :-

भारत सरकार द्वारा अल्पसंख्यको के कल्याण के लिए चलाए गए विभिन्न कार्यक्रमों के उद्देश्य निम्नांकित है :—

1. अल्पसंख्यकों में विद्यालय छोड देने की प्रवृति पर अंकुश लगाने के लिए शिक्षा का प्रसार करना।
2. मदरसों का आधुनिकीकरण करके गणित, विज्ञान, अंग्रेजी, कम्प्यूटर एवं मातृभाषा हिन्दी का शिक्षण प्रारंभ करना जिससे अल्पसंख्यक नागरिक कल्याणकारी योजनाओं से जुड सके।
3. मदरसों में व्यावसायिक शिक्षा को सार्थक रूप से गाइड करना, जिससे अल्पसंख्यक समुदाय के बच्चे राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड सकें।
4. वक्फ संपतियों का विकास करना तथा उनके द्वारा परोपकारी संस्थाओं के संचालन में सहयोग प्रदान करना।
5. अल्पसंख्यक वर्ग की स्थिर्ति में सुधार हेतु निजी, अर्ध सरकारी तथा सरकारी क्षेत्र की योजनाओं को प्रभावी रूप से लागू करना।
6. अल्पसंख्यको द्वारा स्थापित एंव संचालित संस्थाओं को शिक्षा क्षेत्र में प्रोत्साहित करने के लिए अल्पसंख्यक संस्था का दर्जा प्रदान करना।
7. अल्पसंख्यकों को सभी प्रकार की सेवाओं में प्रतिनिधित्व करने का अवसर प्रदान करना।

लोकतांत्रिक भारत में अल्पसंख्यक वर्ग की शिक्षा :-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में समानता और सामाजिक न्याय के रूप में शैक्षिणक रूप से पिछडे एवं वंचित अल्पसंख्यक वर्ग के लिए विशेष उल्लेख किया गया है —

1. शैक्षिणक रूप से वंचित एवं पिछडे अल्पसंख्यक वर्ग के लिए बहुसूत्रीय क्षेत्रीय कार्यक्रम का निर्धारण करना
2. मदरसा शिक्षा के आधुनिकीकरण में वित्तिय सहायता योजना 1993—94 के दौरान प्रारंभ की गई जिससे अल्पसंख्यक शिक्षा कार्यक्रम को प्रभावी एंव सार्थक रूप से लागू किया जा सके।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था आयोग :-

लोकतांत्रिक भारत में संसद के एक अधिनियम द्वारा इसका गठन 2004 में किया गया, जिसके अंतर्गत अल्पसंख्यक संस्थाए विश्वविद्यालय से स्वयं कों सम्बंध कर सकती है। इन उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार विभिन्न प्रकार की योजनाए संचालित कर रही है, जिससे अल्पसंख्यक वर्ग वर्तमान सामाज की मुख्य धारा के समान रूप से जुड सके।

उपसंहार :–

आज, भारत का प्रत्येक व्यक्ति आलोचक बन बैठा है, यूँ ही आलोचना करते रहना, वह अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझता है। वह कभी भी समस्याओं की तह में जाकर उनके कारणों और उनकी रोकथाम तथा निदान ढूढ़ने पर अपने को केंद्रित नहीं करता। राजनैतिक दल दिन प्रतिदिन, अपना राष्ट्रीय चरित्र खोते जा रहे हैं और क्षेत्रीयता को अपना आधार बना रहे हैं। जाति, धर्म तथा सम्प्रदायिकता को बढ़ावा देकर उन पर आधारित राजनीतिक दल बनाए जा रहे हैं, जो पूर्णतः व्यक्ति–परक होते हैं। भारत में आज जरूरी है कि क्षेत्रीय राजनीतिक दलों को समाप्त कर दिया जाए तथा राष्ट्रीय दलों की परम्परा को प्रोत्साहित किया जाए।

एक त्रि–दलीय परम्परा विकसित हो, जिसका आधार राष्ट्रीय हितों पर केंद्रित सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक कार्यक्रम हो। तभी अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा भी सम्भव हो पाएगी।

भारत में संस्कृति, जाति, धर्म, भाषा, बोली आदि के आधार पर विविधता में एकता पाई जाती है। सभी धर्मो, जातियों, संस्कृतियों को सह अस्तित्व एंव समान रूप से आगे बढने का अधिकार है। इस अधिकार के लिए भारतीय संविधान और लोकतांत्रिक भारत में अत्यधिक कार्य किए गए है। भारत हमेशा से सभी प्रकार से संपन्न राष्ट्र रहा है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था द्वारा अनेकता में एकता द्वारा सभी समाजो में खुशियाँ लाने का कार्य किया जाता है। इस विरासत को अक्षम्य एवं संरक्षित रखने की जिम्मेदारी हमारी है, हमें, आने वाली पीढ़ियों के लिए आदर्श प्रस्तुत करना है। भारत भूमि की संस्कृति सभी धर्मो, जातियो, वर्गो भाषाओं की विविधता का संजोए रखती है। हम सभी युवाओं में इन कर्तव्यों एंव अधिकारों के प्रति मानवीय नैतिक चेतना होनी चाहिए। जिससे सभी नागरिकों को सदैव समान अधिकार प्राप्त हो सके तथा देश निरंतर उन्नति के पथ पर आगे बढता जाए। आज भारतीय प्रजातंत्र बहुत आगे बढ़ आया है। प्रश्न यह नहीं होना चाहिए कि यह परिपक्व हो रहा है कि मुरझा रहा है, बल्कि यह होना चाहिए कि इसे सबल और सफल बनाने के लिए हम कौन–कौन से उपाय और कैसे–कैसे त्याग करें।

संदर्भ सूची :–

1. करलिंगर एफ. एन. : फाउण्डेशन ऑफ बिहेवियर रिसर्च, (1986) नई दिल्ली, सुरजीत पब्लिकेशन।
2. Larrdis, Lok Sabha secretariat (Minority Education No 32/Ref/December/2013)
3. Parliament : Library and Reference, Research, Documentation and Information Service.
4. सिंह, नीता एवं सारस्वत : मालती (2013), भारतीय शिक्षा का इतिहास एंव समस्याएं, इलाहाबाद, न्यू कैलाश प्रकाशन।
5. सक्सेना, एन. आर. एस. एंव चतुर्वेदी : शिखा (2012), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, मेरठ, आर. लाल बुक डिपों।
6. कृपलानी. जे. बी. : गाँधी हिज लाइफ एण्ड थॉट, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार 1970

Email id – anjana0622@gamil.com

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गीना देवी शोध संस्थान

द्वारा श्रीगंगानगर, राजस्थान से प्रकाशित

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

Impact Factor : 4.533

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

विशेष :-

आलेख भेजने की अन्तिम तिथि :- प्रत्येक माह की 13 तारीख

सहयोग राशि भेजने की अंतिम तिथि :- प्रत्येक माह की 20 तारीख

निर्धारित तिथि के बाद प्राप्त पेपर पर विचार नहीं किया जाएगा।

आपको अगले अंक के लिए पुनः सारी प्रक्रिया करनी होगी।

शोध आलेख भेजने के लिए मेल आईडी : grngobwn@gmail.com

नियम एवं शर्तें :

1. शोध आलेख की सीमा 1500-2000 शब्दों की है। पेपर के टाइटल के नीचे अपना नाम, पता, मोबाईल, मेल आईडी अवश्य लिखें इसके अभाव में आपका पेपर स्वीकार नहीं किया जाएगा।
2. साहित्य, कला, संस्कृति, मानविकी एवं समाज विज्ञान से सम्बन्धित किसी भी विषय पर शोध आलेख भेज सकते हैं। शोध आलेख कृतिदेव 10, मंगल फॉन्ट में एमएस वर्ड फाइल में टाईप करवाकर ही भेजें। पीडीएफ या हाथ से लिखा पेपर स्वीकार नहीं किया जाएगा।
3. शोध आलेख केवल अपनी ईमेल से ही भेजें क्योंकि हम तमाम प्रकार की जानकारी जिस मेल से हमे पेपर प्राप्त होता है उसी पर देते हैं व्यक्तिगत फोन करके नहीं।
4. एक से अधिक बार भेजे गए शोध आलेख/अशुद्ध आलेख स्वीकृत नहीं होंगे। सम्पादक मंडल का निर्णय सर्वमान्य एवं अन्तिम होगा।
5. अशुद्धियों, प्लेगरिज़्म एवं मौलिकता के लिए आप स्वयं जिम्मेदार होंगे। आलेख प्रूफ रीडिंग के बाद भेजें, प्रकाशन के बाद किसी भी प्रकार का सुधार संभव नहीं होगा।
6. पत्रिका की हार्ड/प्रिंट कॉपी+ऑनलाईन के लिए प्रकाशन/सहयोग राशि 1300/- देनी होगी। पीडीएफ+ऑनलाईन के लिए सहयोग राशि 600/- है।

सेमिनार/संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध आलेखों को विशेषांक रूप में प्रकाशित करवाने के इच्छुक व्यक्ति/संस्थान सम्पर्क करें-8708822674

प्रधान संपादक एवं सचिव :
डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट

संपादक एवं निर्देशक :
डॉ. रेखा सोनी

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर सम्पादकीय कार्यालय 6-एच 30, जवाहर नगर, श्रीगंगानगर, राजस्थान-335001 से वितरित की।

ISSN 2321:8037